



MATS
UNIVERSITY

NAAC
GRADE **A+**
ACCREDITED UNIVERSITY

MATS CENTRE FOR DISTANCE & ONLINE EDUCATION

निबंध और नाटक मास्टर ऑफ़ आर्ट्स - हिन्दी द्वितीय सेमेस्टर



SELF LEARNING MATERIAL

COURSE DEVELOPMENT EXPERT COMMITTEE

1. Prof. (Dr.) Reshma Ansari, HOD, School of Arts and Humanities, Hindi Department, MATS University, Raipur, Chhattisgarh.
2. Dr. Sudhir Sharma, Subject Expert, HOD Hindi Department, Kalyan College, Bhilai, Chhattisgarh.
3. Dr. Kamlesh Gogia, Associate Professor, School of Arts and Humanities, Hindi Department, MATS University, Raipur, Chhattisgarh.
4. Dr. Sunita Shashikant Tiwari, Associate Professor, School of Arts and Humanities, Hindi Department, MATS University, Raipur, Chhattisgarh.
5. Dr. Rajesh Kumar Dubey, Subject Expert, principal Shahid Rajiv Pndey Govt. College, Bhatagouan, Raipur Chhattisgarh.

COURSE COORDINATOR

Prof. (Dr.) Reshma Ansari, HOD, School of Arts and Humanities, Hindi Department, MATS University, Raipur, Chhattisgarh.

COURSE /BLOCK PREPARATION

Dr. Sunita Shashikant Tiwari
Associate Professor, School
of Arts and Humanities,
Hindi Department, MATS
University, Raipur,
Chhattisgarh.

March, 2025

@MATS Centre for Distance and Online Education, MATS University, Village- Gullu, Aarang, Raipur- (Chhattisgarh)

All rights reserved. No part of this work may be reproduced, transmitted or utilized or stored in any form by mimeograph or any other means without permission in writing from MATS University, Village- Gullu, Aarang, Raipur-(Chhattisgarh)

Printed & published on behalf of MATS University, Village-Gullu, Aarang, Raipur by Mr. Meghanadhu Katabathuni, Facilities & Operations, MATS University, Raipur (C.G.)

Disclaimer: The publisher of this printing material is not responsible for any error or dispute from the contents of this course material, this completely depends on the AUTHOR'S MANUSCRIPT.
Printed at: The Digital Press, Krishna Complex, Raipur-492001(Chhattisgarh)



MAHDSC101 निबंध और नाटक

निबंध और नाटक

MODULE NAME		PAGE NUMBER
	मॉड्यूल 1: निबंध (Essay)	1-63
इकाई 1.1	निबंध का स्वरूप और विकास	1-23
इकाई 1.2	निबंध की परिभाषा, स्वरूप एवं विशेषताएँ	24-38
इकाई 1.3	हिंदी निबंध का उद्भव और विकास	39-50
इकाई 1.4	हिंदी निबंध की प्रमुख धाराएँ विचारात्मक, आलोचनात्मक, व्यंग्यात्मक, व्यक्तित्वात्मक, संस्मरणात्मक	51-58
	मॉड्यूल 2: प्रमुख निबंधकार एवं उनकी कृतियाँ	64-71
इकाई 2.1	रामचंद्र शुक्ल : चिंतामणि (चयनित निबंध) ,कविता क्या है, भारतीय संस्कृति और साहित्य	64-66
इकाई 2.2	हज़ारीप्रसाद द्विवेदी : अशोक के फूल, कुटज	66
इकाई 2.3	रामविलास शर्मा : भारतेन्दु युग, तुलसीदास और भारतीय संस्कृति	66
इकाई 2.4	हरिशंकर परसाई : सदाचार का ताबीज, वैष्णव की फिसलन, भोलाराम का जीव	66-67
	मॉड्यूल 3: नाटक (Drama)	72-134
इकाई 3.1	नाटक का स्वरूप और विकास	73-87
इकाई 3.2	नाटक की परिभाषा, तत्त्व और विशेषताएँ	88-104
इकाई 3.3	संस्कृत, पाश्चात्य और हिंदी नाट्य परंपरा	105-115
इकाई 3.4	आधुनिक हिंदी नाटक का विकास	115-129
	मॉड्यूल 4: प्रमुख नाटककार एवं उनकी कृतियाँ - विश्लेषणात्मक अध्ययन	135-176
इकाई 4.1	भारतेन्दु हरिश्चंद्र: अंधेर नगरी	135-142
इकाई 4.2	जयशंकर प्रसाद: स्कंदगुप्त	143-149
इकाई 4.3	समकालीन हिंदी नाटक: विषयवस्तु और प्रवृत्तियाँ	150-172
	मॉड्यूल 5: आलोचनात्मक एवं व्यावहारिक पक्ष	177-220
इकाई 5.1	निबंध और नाटक के प्रमुख आलोचकों के विचार	178-190
इकाई 5.2	निबंध और नाटक में भाषा, शैली एवं शिल्प	191-217
	संदर्भ ग्रंथ - सूची	221-222

Acknowledgement

The material (pictures and passages) we have used is purely for educational purposes. Every effort has been made to trace the copyright holders of material reproduced in this book. Should any infringement have occurred, the publishers and editors apologize and will be pleased to make the necessary corrections in future editions of this book.

मॉड्यूल 1

मॉड्यूल 1: निबंध (Essay)

संरचना

- इकाई 1.1 निबंध का स्वरूप और विकास
- इकाई 1.2 निबंध की परिभाषा, स्वरूप एवं विशेषताएँ
- इकाई 1.3 हिंदी निबंध का उद्भव और विकास
- इकाई 1.4 हिंदी निबंध की प्रमुख धाराएँ

1.0 उद्देश्य

- विद्यार्थियों को निबंध की संकल्पना, स्वरूप और ऐतिहासिक विकास की गहन समझ प्रदान करना।
- हिंदी निबंध के उद्भव, प्रमुख युगों और लेखन प्रवृत्तियों का विश्लेषण करना।
- निबंध की भाषा, शैली, विषय-वस्तु तथा गद्य विधाओं से भिन्नता को स्पष्ट करना।
- प्रमुख निबंधकारों और निबंध की विविध धाराओं – विचारात्मक, व्यंग्यात्मक, व्यक्तित्वात्मक – का अध्ययन करना।
- आधुनिक निबंध के रूपांतरण और समकालीन समाज से उसके संबंधों को समझना।

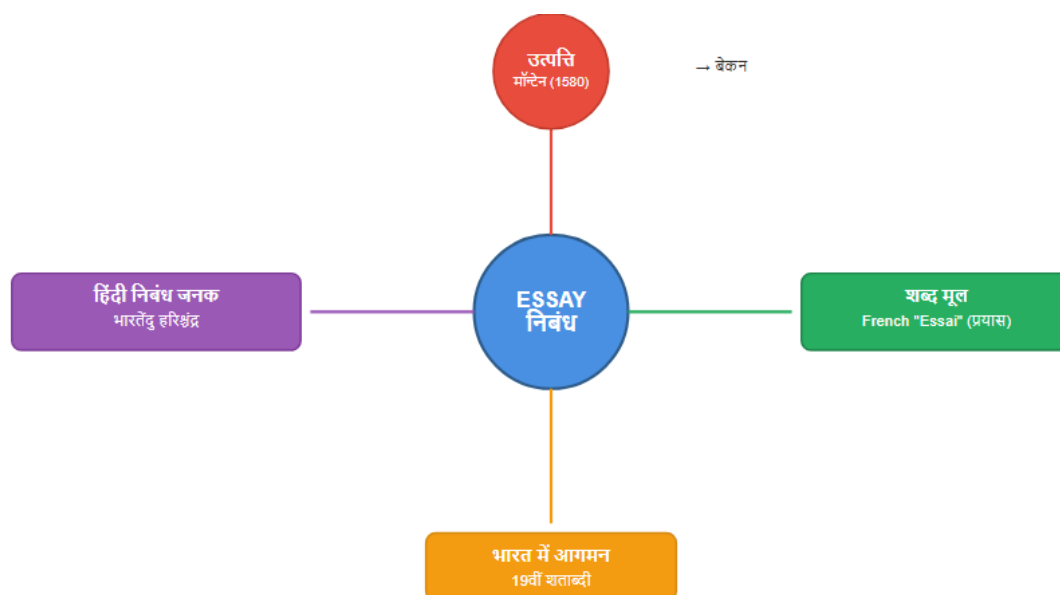
इकाई 1.1: निबंध का स्वरूप और विकास

प्रस्तावना निबंध गद्य साहित्य की एक अत्यंत महत्वपूर्ण और बहुआयामी विधा है। इसकी पहचान केवल विचारों को क्रमबद्ध रूप से प्रस्तुत करने तक सीमित नहीं है, बल्कि यह लेखक के व्यक्तित्व, उसकी चिंतन-शैली और उसकी आत्म-अभिव्यक्ति का भी माध्यम है। निबंध, जिसे अंग्रेजी में 'Essay' कहा जाता है, आधुनिक भारतीय साहित्य की वह नींव है जिस पर आलोचना, वैचारिकी और ललित गद्य जैसी विधाओं का विकास हुआ। हिंदी साहित्य के संदर्भ में, निबंध की यात्रा केवल एक साहित्यिक विकास नहीं है, बल्कि यह भारत के सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक जागरण का दर्पण भी है। प्रस्तुत आलेख



fuc/k vkj ukVd

में निबंध की संकल्पना, उसके वैश्विक उद्भव और हिंदी साहित्य में उसकी प्राचीन परंपरा से लेकर आधुनिक रूपांतरण तक की विस्तृत विवेचना की जाएगी।



चित्र 1.1: निबंध का परिचय

1.1.1 निबंध की संकल्पना:

अर्थ और व्युत्पत्ति

'निबंध' शब्द दो शब्दों के योग से बना है: 'नि' (अर्थात् भली-भाँति, पूर्ण रूप से) और 'बंध' (अर्थात् बाँधना, गूँथना)। इस प्रकार, निबंध का शाब्दिक अर्थ हुआ—'वह रचना जिसमें किसी विषय पर विचार भली-भाँति क्रमबद्ध और सुसंगठित रूप में बँधे हों।' यह एक ऐसी गद्य रचना है, जिसमें किसी भी विषय के महत्वपूर्ण तथ्यों और विचारों को एक निश्चित तारतम्यता, निजी दृष्टिकोण और रोचकता के साथ प्रस्तुत किया जाता है। निबंध में विषय की सीमा का बंधन नहीं होता, लेखक किसी भी विषय को उठा सकता है—चाहे वह दार्शनिक हो, सामाजिक, साहित्यिक या व्यक्तिगत।

निबंध की शास्त्रीय परिभाषाएँ और उसके आवश्यक तत्व: एक विस्तृत विवेचन

हिंदी साहित्य में निबंध एक अत्यंत महत्वपूर्ण और लोकप्रिय गद्य विधा है। यह वह विधा है जो लेखक को अपने विचारों, भावनाओं और अनुभवों को व्यक्त करने की पूर्ण स्वतंत्रता प्रदान करती है। निबंध शब्द की व्युत्पत्ति 'नि' उपसर्ग और 'बंध' धातु से मिलकर हुई है, जिसका शाब्दिक अर्थ है 'भलीभाँति बँधा हुआ' या 'क्रमबद्ध रूप से संयोजित'। अंग्रेजी में इसे 'Essay' कहा जाता है, जो फ्रेंच शब्द 'Essai' से व्युत्पन्न है, जिसका अर्थ है 'प्रयास' या 'प्रयत्न'। यह नामकरण इस बात का संकेत है कि निबंध लेखक का एक बौद्धिक प्रयास है, जिसमें वह किसी विषय को अपने दृष्टिकोण से प्रस्तुत करने का प्रयास करता है। निबंध साहित्य की वह विधा है जो आधुनिक युग की देन है। यद्यपि प्राचीन भारतीय साहित्य में भी गद्य लेखन के उदाहरण मिलते हैं, किंतु वर्तमान स्वरूप में निबंध का आविर्भाव पश्चिमी प्रभाव के फलस्वरूप हुआ। माना जाता है कि आधुनिक निबंध का जन्मदाता फ्रांसीसी विद्वान मांतेन था, जिसने सोलहवीं शताब्दी में अपने व्यक्तिगत अनुभवों और विचारों को निबंध के रूप में प्रस्तुत किया। हिंदी साहित्य में भारतेन्दु हरिश्चंद्र के युग से निबंध लेखन की परंपरा आरंभ हुई और आचार्य रामचंद्र शुक्ल, बाबू गुलाबराय, हजारीप्रसाद द्विवेदी जैसे महान लेखकों ने इसे उत्कर्ष के शिखर पर पहुँचाया। निबंध की प्रकृति को समझने के लिए यह आवश्यक है कि हम इसकी विभिन्न परिभाषाओं का अध्ययन करें। हिंदी साहित्य के विभिन्न विद्वानों और आलोचकों ने निबंध को अपने-अपने दृष्टिकोण से परिभाषित किया है। प्रत्येक परिभाषा निबंध के किसी विशेष पक्ष को उजागर करती है और सामूहिक रूप से ये सभी परिभाषाएँ निबंध की बहुआयामी प्रकृति को प्रकट करती हैं। इन परिभाषाओं के माध्यम से हम निबंध की आत्मा को समझ सकते हैं और यह जान सकते हैं कि एक सफल निबंध में कौन-कौन से गुण होने चाहिए। बाबू गुलाबराय, जो स्वयं एक प्रसिद्ध निबंधकार थे, ने निबंध की एक अत्यंत व्यापक और सर्वमान्य परिभाषा प्रस्तुत की है। उनके अनुसार, निबंध उस गद्य रचना को कहते हैं जिसमें एक सीमित आकार के भीतर किसी विषय का प्रतिपादन एक विशेष निजीपन, स्वच्छंदता, सजीवता, सौष्ठव तथा सम्बद्धता के साथ किया गया हो। यह परिभाषा निबंध के लगभग सभी आवश्यक तत्वों को समाहित करती है। गुलाबराय जी ने सबसे पहले 'सीमित आकार' की बात कही है, जो



fuc/k vkj ukVd

निबंध को शोध-प्रबंध या विस्तृत लेख से अलग करती है। निबंध में संक्षिप्तता एक प्रमुख विशेषता है। लेखक को अपने विचारों को एक निश्चित सीमा में रखते हुए प्रस्तुत करना होता है, जिससे पाठक को ऊब या थकान न हो। गुलाबराय जी की परिभाषा में 'निजीपन' शब्द का प्रयोग अत्यंत महत्वपूर्ण है। निजीपन ही निबंध की आत्मा है। इसका अर्थ है कि निबंध में लेखक के व्यक्तित्व की झलक दिखाई देनी चाहिए। लेखक को विषय को अपने दृष्टिकोण से देखना चाहिए और अपनी भावनाओं, विचारों और अनुभवों को प्रकट करना चाहिए। निबंध में वस्तुनिष्ठता से अधिक आत्मपरकता का महत्व है। यही कारण है कि एक ही विषय पर भिन्न-भिन्न लेखकों द्वारा लिखे गए निबंध एक-दूसरे से सर्वथा भिन्न होते हैं, क्योंकि प्रत्येक लेखक अपने व्यक्तित्व की छाप उस पर लगा देता है। स्वच्छंदता का अर्थ है कि निबंधकार को विषय चयन, विचार प्रस्तुति और शैली के चयन में पूर्ण स्वतंत्रता होती है। वह किसी बंधे-बंधाए नियम या ढाँचे का दास नहीं होता।

सजीवता निबंध का एक और आवश्यक गुण है। निबंध में जीवंतता होनी चाहिए, उसमें प्राणों का संचार होना चाहिए। यह सजीवता भाषा की ताजगी, उदाहरणों की उपयुक्तता, चित्रात्मकता और भावों की तीव्रता से आती है। एक सजीव निबंध पाठक को अपने साथ बाँधे रखता है और उसे ऐसा अनुभव कराता है मानो लेखक उसके सामने बैठकर बातचीत कर रहा हो। सौष्ठव का अर्थ है सुंदरता और सुडौलपन। निबंध में भाषा की सुंदरता, विचारों की संगति और प्रस्तुति का कलात्मक ढंग होना चाहिए। यह सौंदर्य कृत्रिम या आरोपित न होकर सहज और स्वाभाविक होना चाहिए। सम्बद्धता का तात्पर्य है कि निबंध के सभी अंश एक-दूसरे से जुड़े हुए हों, उसमें तारतम्य हो। विचारों की अव्यवस्था या बिखराव निबंध को दुर्बल बना देता है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल को हिंदी निबंध साहित्य का शिखर पुरुष माना जाता है। उन्होंने निबंध के स्वरूप और महत्व को स्थापित करने में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। शुक्ल जी का एक प्रसिद्ध कथन है कि यदि गद्य कवियों या लेखकों की कसौटी है, तो निबंध गद्य की कसौटी है। यह कथन अत्यंत गूढ़ और विचारोत्तेजक है। इसके माध्यम से शुक्ल जी ने निबंध को साहित्य की सबसे शुद्ध, परिष्कृत और कठिन विधा के रूप में स्थापित किया है। जिस प्रकार गद्य लिखना पद्य लिखने से अधिक कठिन माना जाता है, क्योंकि गद्य में लेखक की शैली, विचारशीलता



fuc/k vkj ukVd

और भाषा पर अधिकार की सीधी परख होती है, उसी प्रकार निबंध लिखना अन्य गद्य विधाओं से अधिक कठिन है, क्योंकि इसमें लेखक की समस्त क्षमताओं की परीक्षा होती है। शुक्ल जी का मानना था कि निबंध में लेखक अपने विचारों को मस्तिष्क की गति के अनुरूप व्यक्त करता है। यह एक महत्वपूर्ण बिंदु है। निबंध में विचारों का प्रवाह स्वाभाविक होना चाहिए, वैसे ही जैसे मनुष्य के मन में विचार स्वतः उठते हैं और एक-दूसरे से जुड़ते चले जाते हैं। यह प्रवाह न तो अति तीव्र होना चाहिए कि पाठक पीछे रह जाए, और न इतना धीमा कि पाठक को ऊब हो। शुक्ल जी ने यह भी कहा कि निबंध में हृदय और बुद्धि का समन्वय होता है। केवल बुद्धिप्रधान निबंध शुष्क हो जाते हैं और केवल भावप्रधान निबंध अस्थिर। एक उत्कृष्ट निबंध में दोनों का संतुलन होना चाहिए। लेखक को अपनी बुद्धि से विषय का विश्लेषण करना चाहिए और हृदय से उसे अनुभव करना चाहिए। तभी निबंध में गहराई और व्यापकता दोनों आ सकते हैं। डॉ. श्यामसुंदर दास, जो हिंदी साहित्य के प्रारंभिक युग के महत्वपूर्ण विद्वान थे, ने निबंध की परिभाषा देते हुए कहा है कि निबंध वह लेख है जिसमें किसी गहन विषय पर विस्तारपूर्वक, क्रमबद्ध तथा रोचकतापूर्ण शैली में अपने विचार व्यक्त किए जाते हैं। दास जी की यह परिभाषा निबंध के शैक्षिक और गंभीर पक्ष पर अधिक बल देती है। उन्होंने 'गहन विषय' की बात कही है, जो यह संकेत करती है कि निबंध सतही चिंतन का विषय नहीं है, बल्कि इसमें विषय की गहराई में जाना आवश्यक है। विस्तारपूर्वक और क्रमबद्ध प्रस्तुति का अर्थ है कि विचारों को तर्कसंगत क्रम में रखा जाए, जिससे पाठक उन्हें आसानी से समझ सके। रोचकता का उल्लेख यह बताता है कि निबंध को केवल ज्ञानवर्धक ही नहीं, बल्कि पठनीय और आकर्षक भी होना चाहिए। इन शास्त्रीय परिभाषाओं के अतिरिक्त, कुछ अन्य विद्वानों ने भी निबंध को परिभाषित करने का प्रयास किया है। डॉ. भगवतस्वरूप मिश्र के अनुसार, निबंध एक संक्षिप्त, सुसंबद्ध और सुगठित गद्य रचना है, जिसमें किसी विषय पर लेखक के व्यक्तिगत विचारों और भावनाओं की मौलिक और कलात्मक अभिव्यक्ति होती है। इस परिभाषा में 'मौलिकता' पर विशेष बल दिया गया है। निबंध में लेखक को दूसरों के विचारों की नकल नहीं करनी चाहिए, बल्कि अपने मौलिक चिंतन को प्रस्तुत करना चाहिए। डॉ. नगेंद्र ने कहा है कि निबंध आत्म-व्यंजनामूलक गद्य-रचना है। इसमें व्यक्तित्व की छाप अनिवार्य है। यह परिभाषा निबंध की आत्मपरक प्रकृति को रेखांकित करती है। विभिन्न



fuc/k vkj ukVd

विद्वानों द्वारा दी गई इन परिभाषाओं का विश्लेषण करने पर हम पाते हैं कि निबंध की कुछ सामान्य विशेषताएँ हैं जो सभी परिभाषाओं में किसी न किसी रूप में उपस्थित हैं। सबसे पहले, निबंध एक गद्य रचना है। दूसरे, यह सीमित आकार की होती है। तीसरे, इसमें लेखक के व्यक्तित्व की छाप होती है। चौथे, इसमें एक निश्चित विषय का प्रतिपादन होता है। पाँचवें, इसकी शैली आकर्षक और कलात्मक होती है। छठे, इसमें विचारों का क्रमबद्ध और संबद्ध प्रस्तुतीकरण होता है। ये सभी विशेषताएँ मिलकर निबंध को एक विशिष्ट साहित्यिक विधा बनाती हैं। निबंध के आवश्यक तत्वों की बात करें तो वैयक्तिकता या आत्मपरकता सबसे महत्वपूर्ण तत्व है। यह निबंध की आत्मा है। निबंध में लेखक का व्यक्तित्व झलकना चाहिए। प्रत्येक निबंधकार का अपना एक विशिष्ट दृष्टिकोण होता है, जो उसके निबंधों में प्रतिबिंबित होता है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल के निबंधों में उनका विद्वत्तापूर्ण और गंभीर व्यक्तित्व दिखाई देता है। उनके निबंध विचारप्रधान होते हैं और उनमें गहन चिंतन की छाप होती है। दूसरी ओर, हजारीप्रसाद द्विवेदी के निबंधों में उनका विनोदी और सहज व्यक्तित्व प्रकट होता है। उनके निबंध अधिक लललित और मनोरंजक होते हैं। इसी प्रकार बाबू गुलाबराय के निबंधों में उनकी भावुकता और संवेदनशीलता की छाप होती है। यह वैयक्तिकता ही निबंध को जीवंत बनाती है।

वैयक्तिकता का अर्थ यह नहीं है कि लेखक केवल अपने बारे में लिखे। बल्कि इसका अर्थ है कि लेखक किसी भी विषय को अपने विशिष्ट दृष्टिकोण से देखे और प्रस्तुत करे। उदाहरण के लिए, यदि दो लेखक 'वर्षा ऋतु' पर निबंध लिखें, तो दोनों निबंध भिन्न होंगे। एक लेखक वर्षा के सौंदर्य का वर्णन कर सकता है, दूसरा वर्षा से जुड़ी अपनी स्मृतियों को साझा कर सकता है, तीसरा वर्षा के आर्थिक या पर्यावरणीय महत्व पर प्रकाश डाल सकता है। यह विविधता वैयक्तिकता के कारण ही संभव है। निबंध में लेखक को अपने अनुभवों, भावनाओं और विचारों को स्वतंत्र रूप से व्यक्त करने की छूट होती है। यह आत्मपरकता ही निबंध को उपदेशात्मक लेख या शोध-प्रबंध से अलग करती है। सीमित आकार और संक्षिप्तता निबंध का दूसरा महत्वपूर्ण तत्व है। निबंध न तो बहुत छोटा होना चाहिए कि विषय का न्याय ही न हो सके, और न इतना बड़ा कि पाठक ऊब जाए। आदर्श निबंध की लंबाई विषय की प्रकृति पर निर्भर करती है, लेकिन सामान्यतः यह दस से पंद्रह



fuc/k vkj ukVd

पृष्ठों के बीच होता है। निबंध का यह सीमित आकार लेखक के लिए एक चुनौती भी है और एक अनुशासन भी। लेखक को अपने विचारों को संक्षेप में प्रस्तुत करना होता है, फिर भी उसे विषय की गहराई और व्यापकता को बनाए रखना होता है। यह कला निबंधकार में अनुभव और अभ्यास से आती है। संक्षिप्तता का अर्थ अपूर्णता नहीं है। संक्षिप्तता का अर्थ है कि अनावश्यक विस्तार से बचा जाए, लेकिन आवश्यक बातें छूटनी नहीं चाहिए। एक अच्छे निबंधकार को यह कला आनी चाहिए कि वह थोड़े शब्दों में अधिक कह सके। उसे अपने विचारों को सारगर्भित रूप में प्रस्तुत करना चाहिए। प्रत्येक वाक्य का अपना महत्व होना चाहिए। अनावश्यक पुनरुक्ति से बचना चाहिए। जब निबंध संक्षिप्त होता है तो पाठक का ध्यान बना रहता है और वह पूरे निबंध को रुचिपूर्वक पढ़ पाता है। लंबे और बोझिल निबंध पाठक को थका देते हैं। तारतम्यता और क्रमबद्धता निबंध का तीसरा आवश्यक तत्व है। निबंध में विचारों का प्रवाह सहज और स्वाभाविक होना चाहिए। एक विचार से दूसरे विचार में संक्रमण इतना सुगम होना चाहिए कि पाठक को अचानक परिवर्तन का अनुभव न हो। निबंध के सभी भाग एक सूत्र में पिरोए हुए होने चाहिए। प्रत्येक अनुच्छेद पूर्ववर्ती अनुच्छेद से जुड़ा हुआ और परवर्ती अनुच्छेद का मार्ग प्रशस्त करने वाला होना चाहिए। यह तारतम्य निबंध में एकता और संगति लाता है। निबंध की संरचना में सामान्यतः तीन भाग होते हैं - प्रस्तावना, विकास या मध्य भाग, और उपसंहार। प्रस्तावना निबंध का प्रारंभिक भाग है जो पाठक का ध्यान आकृष्ट करता है और विषय का परिचय देता है। एक अच्छी प्रस्तावना रोचक, संक्षिप्त और सूचक होनी चाहिए। यह पाठक में जिज्ञासा उत्पन्न करे कि आगे क्या आने वाला है। प्रस्तावना में विषय की पृष्ठभूमि, उसका महत्व, या उससे जुड़ा कोई रोचक प्रसंग प्रस्तुत किया जा सकता है। यह निबंध के लिए मार्ग प्रशस्त करती है।

विकास या मध्य भाग निबंध का सबसे महत्वपूर्ण और विस्तृत भाग होता है। इसमें विषय का विस्तृत प्रतिपादन होता है। लेखक अपने मुख्य विचारों, तर्कों, उदाहरणों और विश्लेषण को इस भाग में प्रस्तुत करता है। इस भाग को कई अनुच्छेदों में बाँटा जा सकता है, प्रत्येक अनुच्छेद एक विशेष पहलू से संबंधित होता है। विकास भाग में तार्किक क्रम का पालन करना अत्यंत आवश्यक है। विचारों को इस प्रकार व्यवस्थित करना चाहिए कि एक विचार



fuc/k vkj ukVd

स्वाभाविक रूप से दूसरे विचार की ओर ले जाए। इस भाग में ही निबंध का मूल संदेश निहित होता है। उपसंहार निबंध का अंतिम भाग है जो निबंध को एक निश्चित निष्कर्ष तक पहुँचाता है। एक प्रभावी उपसंहार पूरे निबंध का सार प्रस्तुत करता है, मुख्य बिंदुओं को संक्षेप में दोहराता है, और पाठक के मन में एक स्थायी प्रभाव छोड़ता है। उपसंहार अचानक नहीं आना चाहिए, बल्कि स्वाभाविक रूप से निबंध के प्रवाह से निकलना चाहिए। यह संक्षिप्त और प्रभावशाली होना चाहिए। कभी-कभी उपसंहार में एक सार्थक उद्धरण, एक प्रश्न, या एक दूरदर्शी टिप्पणी निबंध को यादगार बना देती है। शैली निबंध का चौथा और अत्यंत महत्वपूर्ण तत्व है। यह कहा जाता है कि शैली ही व्यक्ति है। निबंध की सफलता का सबसे बड़ा रहस्य उसकी शैली में निहित होता है। एक ही विषय पर लिखे गए दो निबंध उनकी शैली के कारण बिल्कुल भिन्न प्रभाव छोड़ सकते हैं। शैली से तात्पर्य है लेखक का विचार व्यक्त करने का ढंग, उसकी भाषा, उसके वाक्य विन्यास, उसके शब्द चयन, और उसकी प्रस्तुति की कला। एक अच्छी शैली सहज, प्रवाहमय, आकर्षक और व्यक्तित्व की छाप लिए हुए होती है। निबंध की शैली विषय के अनुरूप होनी चाहिए। यदि विषय गंभीर और विचारात्मक है, तो शैली भी गंभीर और औपचारिक होनी चाहिए। यदि विषय हल्का-फुल्का या व्यक्तिगत अनुभवों से संबंधित है, तो शैली अनौपचारिक और संवादात्मक हो सकती है। शैली के कई प्रकार हो सकते हैं - विवरणात्मक शैली, विचारात्मक शैली, भावात्मक शैली, व्यंग्यात्मक शैली, हास्यात्मक शैली आदि। कुशल निबंधकार अपनी शैली में विविधता लाता है और विषय के अनुसार उपयुक्त शैली का चयन करता है। कभी-कभी एक ही निबंध में विभिन्न शैलियों का मिश्रण भी हो सकता है। शैली में प्रवाह और लय का होना अत्यंत आवश्यक है। वाक्य न तो बहुत छोटे और टुकड़े-टुकड़े होने चाहिए, और न इतने लंबे और जटिल कि पाठक उनमें उलझ जाए। वाक्यों में विविधता होनी चाहिए। कभी छोटे वाक्य प्रभाव के लिए उपयुक्त होते हैं, तो कभी लंबे वाक्य विचार को विस्तार देने के लिए आवश्यक होते हैं। शैली में सहजता और स्वाभाविकता होनी चाहिए। कृत्रिमता या अतिशय अलंकरण शैली को भारी और बोझिल बना देता है। सरल और सीधी भाषा अधिक प्रभावी होती है।



fuc/k vkj ukVd

शैली में रोचकता और आकर्षण लाने के लिए विभिन्न साहित्यिक उपकरणों का प्रयोग किया जा सकता है। उदाहरण, दृष्टांत, कहावतें, लोकोक्तियाँ, उद्धरण आदि निबंध को जीवंत और प्रभावशाली बनाते हैं। बिंब और प्रतीक शैली में काव्यात्मकता लाते हैं। तुलना और उपमा विषय को स्पष्ट करने में सहायक होते हैं। लेकिन इन सबका प्रयोग संयम और उचित स्थान पर करना चाहिए। अति किसी भी चीज की बुरी होती है। शैली में व्यक्तित्व की छाप होनी चाहिए। लेखक की अपनी वाक्पटुता, उसका अपना शब्द-चयन, उसकी अपनी अभिव्यक्ति का ढंग शैली को विशिष्ट बनाता है। विषय की स्वच्छंदता निबंध का पाँचवाँ महत्वपूर्ण तत्व है। निबंध में विषय चयन की पूर्ण स्वतंत्रता होती है। निबंधकार किसी भी विषय पर लिख सकता है - चाहे वह अत्यंत गंभीर और दार्शनिक विषय हो या अत्यंत सामान्य और साधारण विषय। वह ब्रह्मांड के रहस्यों पर लिख सकता है या एक छोटे से फूल पर। वह जीवन के गंभीर प्रश्नों पर विचार कर सकता है या दैनिक जीवन की छोटी-छोटी घटनाओं का वर्णन कर सकता है। निबंध की इस स्वच्छंदता ने ही इसे एक अत्यंत लोकप्रिय और लचीली विधा बनाया है। निबंध के विषय को किसी सीमा में बाँधा नहीं जा सकता। प्रकृति, समाज, राजनीति, अर्थव्यवस्था, धर्म, दर्शन, विज्ञान, कला, साहित्य, इतिहास, संस्कृति, शिक्षा, मनोविज्ञान - कोई भी क्षेत्र निबंध के लिए वर्जित नहीं है। इससे भी आगे जाकर, निबंधकार अमूर्त भावनाओं और विचारों को भी विषय बना सकता है - जैसे प्रेम, घृणा, ईर्ष्या, करुणा, आशा, निराशा आदि। वह अपनी व्यक्तिगत स्मृतियों, अनुभवों और भावनाओं को भी निबंध का विषय बना सकता है। यहाँ तक कि वह किसी निर्जीव वस्तु - जैसे एक पुरानी घड़ी, एक टूटी कुर्सी, या एक बुझा हुआ दीपक - को भी निबंध का विषय बना सकता है। यह स्वच्छंदता निबंधकार को अपार संभावनाएँ प्रदान करती है। वह अपनी रुचि, अपनी क्षमता और अपने मनोभावों के अनुसार विषय का चयन कर सकता है। किसी एक विषय पर भी विभिन्न कोणों से विचार किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, 'पुस्तक' विषय पर एक निबंध में लेखक पुस्तकों के महत्व पर विचार कर सकता है, दूसरे में अपनी प्रिय पुस्तक का परिचय दे सकता है, तीसरे में पुस्तकालयों की उपयोगिता बता सकता है, चौथे में डिजिटल युग में पुस्तकों के भविष्य पर विचार कर सकता है। यह सब विषय की स्वच्छंदता के कारण ही संभव है।



fuc/k vkj ukVd

निबंध के विभिन्न प्रकार भी उसकी विषय-स्वच्छंदता और बहुआयामिता को दर्शाते हैं। सामान्यतः निबंधों को तीन प्रमुख श्रेणियों में विभाजित किया जाता है - वर्णनात्मक निबंध, विचारात्मक निबंध, और भावात्मक या ललित निबंध। वर्णनात्मक निबंध में किसी व्यक्ति, स्थान, घटना या वस्तु का वर्णन किया जाता है। इसमें लेखक शब्दों के माध्यम से एक चित्र खींचता है जिससे पाठक के मन में वह दृश्य साकार हो उठे। वर्णनात्मक निबंधों में विवरण की प्रधानता होती है। उदाहरण के लिए, 'ताजमहल की सैर', 'होली का त्योहार', 'एक यादगार यात्रा' आदि वर्णनात्मक निबंध हो सकते हैं। विचारात्मक निबंध में किसी विषय पर गंभीर चिंतन और विश्लेषण किया जाता है। इसमें तर्क, तथ्य और विवेचन की प्रधानता होती है। लेखक किसी समस्या, सिद्धांत या विचार की गहराई में जाता है और अपने दृष्टिकोण को तर्कपूर्ण ढंग से प्रस्तुत करता है। विचारात्मक निबंधों में बौद्धिकता और गंभीरता होती है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अधिकांश निबंध इसी श्रेणी में आते हैं। 'श्रद्धा और भक्ति', 'उत्साह', 'करुणा' जैसे उनके निबंध उत्कृष्ट विचारात्मक निबंधों के उदाहरण हैं। भावात्मक या ललित निबंध में लेखक की भावनाओं, संवेदनाओं और व्यक्तिगत अनुभवों की प्रधानता होती है। ये निबंध हृदय को स्पर्श करते हैं और पाठक के मन में भावनाओं का संचार करते हैं। इनमें काव्यात्मकता और सौंदर्यबोध होता है। हजारीप्रसाद द्विवेदी के निबंध - जैसे 'अशोक के फूल', 'कुटज', 'नाखून क्यों बढ़ते हैं' - ललित निबंधों के उत्कृष्ट नमूने हैं। इन निबंधों में लेखक का व्यक्तित्व पूरी तरह झलकता है। ये निबंध सहज, मनोरंजक और प्रभावशाली होते हैं। इन तीन मुख्य प्रकारों के अलावा, निबंधों के कुछ और भी प्रकार हैं। आत्मकथात्मक निबंध में लेखक अपने जीवन के किसी अंश या अनुभव को साझा करता है। आलोचनात्मक निबंध में किसी साहित्यिक कृति, कलाकृति या विचारधारा की समीक्षा और मूल्यांकन किया जाता है। समस्यामूलक निबंध में किसी सामाजिक, राजनीतिक या आर्थिक समस्या की विवेचना की जाती है। विवादात्मक निबंध में किसी विवादास्पद विषय पर अपना पक्ष रखा जाता है। व्यंग्यात्मक निबंध में किसी विकृति या बुराई पर व्यंग्य के माध्यम से प्रहार किया जाता है।

निबंध लेखन एक कला है जो अभ्यास और अनुभव से निखरती है। एक अच्छा निबंध लिखने के लिए कुछ बातों का ध्यान रखना आवश्यक है। सबसे पहले, विषय का चयन



fuc/k vkj ukVd

सावधानीपूर्वक करना चाहिए। ऐसा विषय चुनना चाहिए जिसके बारे में लेखक को पर्याप्त जानकारी हो और जिसमें उसकी रुचि हो। बिना रुचि के लिखा गया निबंध नीरस और बोझिल हो जाता है। विषय चयन के बाद, उस पर पर्याप्त चिंतन-मनन करना चाहिए। विभिन्न पहलुओं पर विचार करना चाहिए और मुख्य बिंदुओं को चिह्नित करना चाहिए। निबंध लिखने से पहले एक मोटी रूपरेखा तैयार करना उपयोगी होता है। इसमें यह निर्धारित किया जाता है कि निबंध के विभिन्न अनुच्छेदों में क्या-क्या विषयवस्तु होगी और उनका क्रम क्या होगा। यह रूपरेखा निबंध को संगठित और सुसंबद्ध बनाने में सहायक होती है। रूपरेखा तैयार करने के बाद, वास्तविक लेखन कार्य प्रारंभ होता है। प्रारंभ में एक आकर्षक प्रस्तावना लिखनी चाहिए जो पाठक का ध्यान खींचे। फिर मध्य भाग में अपने विचारों को क्रमबद्ध रूप से प्रस्तुत करना चाहिए। अंत में एक प्रभावशाली उपसंहार लिखना चाहिए। निबंध लेखन में भाषा का विशेष महत्व है। भाषा सरल, स्पष्ट और प्रवाहमयी होनी चाहिए। क्लिष्ट और दुरूह शब्दों के प्रयोग से बचना चाहिए। वाक्य छोटे और सुबोध होने चाहिए। व्याकरण और वर्तनी की शुद्धता का ध्यान रखना चाहिए। विराम चिह्नों का सही प्रयोग करना चाहिए। भाषा में जीवंतता और चित्रात्मकता लाने के लिए उपयुक्त स्थानों पर मुहावरों, लोकोक्तियों और अलंकारों का प्रयोग किया जा सकता है, लेकिन संयम के साथ। निबंध लिखते समय पुनरावृत्ति से बचना चाहिए। एक ही बात को बार-बार अलग-अलग शब्दों में नहीं कहना चाहिए। प्रत्येक वाक्य और अनुच्छेद में कुछ नया होना चाहिए। अनावश्यक विस्तार से बचना चाहिए। जो बात दो पंक्तियों में कही जा सकती हो, उसे दो पृष्ठों में नहीं फैलाना चाहिए। संक्षिप्तता और सारगर्भितता निबंध के गुण हैं। साथ ही, पाठक के स्तर का भी ध्यान रखना चाहिए। यदि निबंध सामान्य पाठकों के लिए है, तो भाषा और विचार सरल होने चाहिए। यदि विद्वान पाठकों के लिए है, तो कुछ गहराई और जटिलता स्वीकार्य है। निबंध लिखने के बाद उसे एक बार अवश्य पढ़ना चाहिए और आवश्यक संशोधन करना चाहिए। कभी-कभी पहली बार में लिखा गया निबंध पूर्णतः संतोषजनक नहीं होता। उसमें कुछ कमियाँ या त्रुटियाँ हो सकती हैं। पुनरावलोकन के समय इन्हें दूर किया जा सकता है। कुछ वाक्यों को बेहतर बनाया जा सकता है, कुछ अनावश्यक अंशों को हटाया जा सकता है, और कुछ आवश्यक बातें जोड़ी जा सकती हैं। यह संशोधन निबंध की गुणवत्ता में सुधार लाता है।



fuc/k vkj ukVd

निबंध का महत्व साहित्य और समाज दोनों में अपरिशीम है। साहित्य की दृष्टि से निबंध गद्य की सर्वोत्कृष्ट विधा मानी जाती है। यह लेखक की भाषा-शक्ति, विचार-शक्ति और अभिव्यक्ति-कौशल को परखने का सबसे अच्छा माध्यम है। निबंध के माध्यम से लेखक अपने व्यक्तित्व को पूर्णतः अभिव्यक्त कर सकता है। यह उसकी बौद्धिक क्षमता, भावनात्मक गहराई और कलात्मक संवेदनशीलता को प्रकट करता है। महान निबंधकारों ने अपने निबंधों के माध्यम से हिंदी गद्य को समृद्ध और परिष्कृत किया है। समाज की दृष्टि से भी निबंध का महत्वपूर्ण योगदान है। निबंध विचारों के आदान-प्रदान का माध्यम है। इसके द्वारा लेखक समाज में अपने विचारों को प्रसारित कर सकता है और सामाजिक चेतना जगा सकता है। सामाजिक, राजनीतिक और नैतिक मुद्दों पर निबंध जनमत निर्माण में सहायक होते हैं। वे समाज की बुराइयों और विकृतियों की ओर ध्यान आकर्षित करते हैं और सुधार का मार्ग सुझाते हैं। निबंध शिक्षा का भी एक महत्वपूर्ण साधन है। ज्ञानवर्धक निबंधों के माध्यम से पाठक नई जानकारी प्राप्त करते हैं और अपने ज्ञान-क्षेत्र का विस्तार करते हैं। निबंध का एक और महत्वपूर्ण पक्ष यह है कि यह पाठक और लेखक के बीच एक घनिष्ठ संबंध स्थापित करता है। जब पाठक निबंध पढ़ता है, तो उसे लगता है मानो लेखक उससे सीधे संवाद कर रहा हो। निबंध में आत्मीयता और निकटता होती है। यह औपचारिक लेख या शोध-पत्र की तरह दूर और अगम्य नहीं होता। पाठक निबंध के माध्यम से लेखक के व्यक्तित्व से परिचित होता है और उसके विचारों और भावनाओं को समझता है। यह आत्मीयता निबंध को एक विशेष आकर्षण प्रदान करती है। निबंध मनोरंजन का भी एक उत्तम साधन है। हास्य-व्यंग्यपूर्ण निबंध पाठक का मनोरंजन करते हैं और उसके चेहरे पर मुस्कान लाते हैं। ललित निबंध पाठक को काव्यात्मक आनंद प्रदान करते हैं। यात्रा-वृत्तांत और संस्मरणात्मक निबंध पाठक को एक अलग संसार में ले जाते हैं। इस प्रकार निबंध केवल ज्ञानवर्धन का ही नहीं, बल्कि मनोरंजन का भी साधन है। यही कारण है कि निबंध सभी वर्गों के पाठकों में लोकप्रिय है।

हिंदी साहित्य में निबंध का विकास उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में आरंभ हुआ। भारतेन्दु हरिश्चंद्र को हिंदी गद्य और निबंध का प्रवर्तक माना जाता है। उन्होंने अपने निबंधों में सामाजिक, राजनीतिक और साहित्यिक विषयों पर विचार व्यक्त किए। भारतेन्दु युग के



fuc/k vkj ukVd

अन्य लेखकों - जैसे बालकृष्ण भट्ट, प्रतापनारायण मिश्र - ने भी निबंध लेखन में महत्वपूर्ण योगदान दिया। बालकृष्ण भट्ट के निबंध विचारोत्तेजक और सामाजिक चेतना से परिपूर्ण थे। द्विवेदी युग में महावीरप्रसाद द्विवेदी ने गंभीर और विचारात्मक निबंधों की रचना की। लेकिन हिंदी निबंध साहित्य का स्वर्णयुग शुक्ल युग माना जाता है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने अपने विद्वत्तापूर्ण और मनोवैज्ञानिक निबंधों से हिंदी निबंध को नई ऊँचाइयाँ प्रदान कीं। उनके निबंध 'चिंतामणि' के दो भागों में संकलित हैं। शुक्ल जी के निबंध गहन चिंतन, सूक्ष्म विश्लेषण और परिष्कृत भाषा के लिए प्रसिद्ध हैं। शुक्ल युग में बाबू गुलाबराय, सियारामशरण गुप्त आदि ने भी उत्कृष्ट निबंध लिखे। शुक्लोत्तर युग में हजारीप्रसाद द्विवेदी, विद्यानिवास मिश्र, कुबेरनाथ राय जैसे निबंधकारों ने ललित निबंध परंपरा को समृद्ध किया। इन लेखकों के निबंध व्यक्तित्व की छाप, सहजता, और कलात्मकता से परिपूर्ण हैं। आधुनिक युग में निबंध लेखन की परंपरा निरंतर जारी है। विविध विषयों पर निबंध लिखे जा रहे हैं। वैज्ञानिक, तकनीकी, पर्यावरणीय, और वैश्विक मुद्दों पर निबंध प्रकाशित हो रहे हैं। समाचार-पत्रों और पत्रिकाओं में नियमित रूप से निबंध छपते हैं। इंटरनेट और ब्लॉगिंग के युग में निबंध लेखन को एक नया माध्यम मिला है। अब कोई भी व्यक्ति अपने विचारों को निबंध के रूप में ऑनलाइन प्रकाशित कर सकता है। यह सुविधा निबंध विधा के लोकतंत्रीकरण की ओर संकेत करती है। निबंध की शास्त्रीय परिभाषाओं और उसके आवश्यक तत्वों का अध्ययन करने के बाद हम निष्कर्ष रूप में कह सकते हैं कि निबंध गद्य साहित्य की एक अत्यंत महत्वपूर्ण, लचीली और सर्वव्यापी विधा है। यह लेखक को अपने विचारों, भावनाओं और अनुभवों को स्वतंत्रतापूर्वक अभिव्यक्त करने का अवसर प्रदान करती है। निबंध में वैयक्तिकता, संक्षिप्तता, तारतम्यता, शैलीगत विशिष्टता और विषय की स्वच्छंदता - ये पाँच तत्व इसे अन्य गद्य विधाओं से अलग करते हैं। इन तत्वों का समुचित समन्वय ही एक उत्कृष्ट निबंध की रचना करता है। निबंध न केवल साहित्यिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है, बल्कि सामाजिक, शैक्षिक और सांस्कृतिक दृष्टि से भी इसका अपार महत्व है। यह विचारों के आदान-प्रदान, ज्ञान के प्रसार और सामाजिक चेतना के विकास का एक सशक्त माध्यम है।



fuc/k vkj ukVd

विधा	प्रमुख विशेषताएँ	उद्देश्य
निबंध (Essay)	वैयक्तिकता, निजी दृष्टिकोण, भाव और विचार का समन्वय, सीमित आकार।	लेखक के व्यक्तित्व के माध्यम से विषय पर स्वच्छंद चिंतन प्रस्तुत करना।
लेख/आलेख (Article)	वस्तुपरकता (Objectivity), सूचनात्मकता पर जोर, संक्षिप्त और स्पष्ट।	किसी विषय विशेष पर तथ्यात्मक जानकारी या राय देना।
शोध-प्रबंध (Thesis/Dissertation)	विशुद्ध वस्तुपरकता, गहन अनुसंधान, व्यापक आकार, संदर्भों का अनिवार्य उल्लेख।	किसी विषय पर नवीन शोध या सिद्धांत स्थापित करना।

संक्षेप में, निबंध गद्य की वह विधा है जो लेखक को अपनी बुद्धि और हृदय के समन्वय से, विषय पर स्वच्छंद किंतु सुसंगठित विचार व्यक्त करने की स्वतंत्रता देती है।

1.1.2 निबंध लेखन का उद्भव

निबंध का जन्म आधुनिक विधा के रूप में यूरोप में हुआ। यह मध्यकालीन धार्मिक और औपचारिक लेखन की प्रतिक्रिया में व्यक्ति के निजी चिंतन और अनुभव को महत्व देने वाली विधा के रूप में उभरा। निबंध का ऐतिहासिक उद्भव मुख्य रूप से दो महान लेखकों से जुड़ा है: **मिशेल डी मॉन्टेन (Michel de Montaigne)** और **फ्रांसिस बेकन (Francis Bacon)**।

मिशेल डी मॉन्टेन (Michel de Montaigne, 1533-1592)

फ्रांसीसी लेखक मॉन्टेन को **निबंध विधा का जनक (Father of the Essay)** माना जाता है। उन्होंने अपने लेखन को 'Essais' (एस्से) नाम दिया, जिसका फ्रांसीसी में अर्थ होता है—'प्रयास' या 'परीक्षण' (**Attempts or Trials**)।

- **उत्पत्ति और नामकरण:** 1580 में मॉन्टेन ने अपनी रचनाओं को 'Essais' नाम दिया। यह नाम उनके दृष्टिकोण को दर्शाता था कि वे किसी विषय पर अंतिम सत्य या अकाट्य



सिद्धांत नहीं दे रहे हैं, बल्कि केवल उस विषय पर अपने विचारों को 'आजमा' रहे हैं या 'परीक्षण' कर रहे हैं।

- **शैली और विषय-वस्तु:** मॉन्टेन के निबंधों की सबसे बड़ी विशेषता उनकी **घोर आत्मपरकता (Intense Subjectivity)** और **अनौपचारिकता (Informality)** थी।
- **स्वयं की खोज:** उनके निबंधों का केंद्रीय विषय स्वयं मॉन्टेन का अपना व्यक्तित्व था। उन्होंने लिखा, "मैं स्वयं अपनी पुस्तक का विषय हूँ।" उनके निबंधों में उनके निजी विचार, अनुभव, आदतें, डर और भावनाएँ खुलकर सामने आईं।
- **स्वच्छंद शैली:** उनकी शैली अत्यंत सहज, बातचीत के लहजे वाली और विषयांतर (digression) से भरी हुई थी।
- **मानवतावादी दृष्टिकोण:** वे एक मानवतावादी थे और उनके निबंध मानव स्वभाव की गहरी समझ से ओत-प्रोत होते थे। उनके प्रमुख निबंध 'ऑन फ्रेंडशिप', 'ऑन एजुकेशन ऑफ चिल्ड्रन' आदि हैं।

मॉन्टेन ने निबंध को एक ऐसी विधा के रूप में स्थापित किया जो लेखक को केवल विषय वस्तु के बारे में ही नहीं, बल्कि स्वयं लेखक के बारे में भी जानने का अवसर प्रदान करती है।

फ्रांसिस बेकन (Francis Bacon, 1561-1626)

अंग्रेजी निबंध साहित्य के जनक फ्रांसिस बेकन ने मॉन्टेन की अनौपचारिक शैली से हटकर निबंध को एक नया आयाम दिया।

- **शैली में परिवर्तन:** यदि मॉन्टेन के निबंध आत्मपरक और अनौपचारिक थे, तो बेकन के निबंध **वस्तुपरक (Objective)** और **औपचारिक (Formal)** थे। बेकन ने निबंध को गंभीर, नैतिक और राजनीतिक विषयों की चर्चा के लिए उपयोग किया।
- **सूत्रवाक्य शैली (Aphoristic Style):** बेकन की सबसे बड़ी पहचान उनकी संक्षिप्त, सूत्रात्मक और सशक्त भाषा है। उनका प्रत्येक वाक्य एक नैतिक या व्यावहारिक सिद्धांत की तरह प्रतीत होता था। उदाहरण के लिए, "Of Truth" निबंध में उनका प्रसिद्ध कथन है, "Reading maketh a full man; conference a ready man; and writing an

exact man." (अर्थात्, पढ़ना एक पूर्ण मनुष्य बनाता है; बातचीत एक तैयार मनुष्य; और लिखना एक सटीक मनुष्य।)

- **विषय-वस्तु:** बेकन ने 'Of Studies', 'Of Truth', 'Of Revenge', 'Of Ambition' जैसे विषयों पर लिखा, जिनमें व्यावहारिक जीवन और राजनीति के गंभीर सिद्धांत निहित थे। उनके निबंध में बुद्धि का प्राधान्य था, हृदय का नहीं।

मॉन्टेन और बेकन की तुलना

आधार	मिशेल डी मॉन्टेन	फ्रांसिस बेकन
शैली	अनौपचारिक, आत्मपरक, स्वच्छंद, विवरणात्मक।	औपचारिक, वस्तुपरक, सूत्रात्मक, उपदेशात्मक।
मुख्य तत्व	व्यक्तित्व (Heart), निजी अनुभव, भावुकता।	बुद्धि (Mind), व्यावहारिक ज्ञान, नैतिकता।
उद्देश्य	स्वयं की खोज और आत्माभिव्यक्ति।	पाठकों को नैतिक और व्यावहारिक ज्ञान देना।
निबंध का स्वरूप	'Personal Essay' (ललित निबंध का पूर्व रूप)।	'Formal Essay' (विचारात्मक निबंध का पूर्व रूप)।

इन दोनों लेखकों ने निबंध के दो प्रमुख रूप स्थापित किए: **व्यक्तिनिष्ठ (Subjective)** परंपरा, जो मॉन्टेन से शुरू हुई, और **वस्तुनिष्ठ (Objective)** परंपरा, जो बेकन से शुरू हुई। बाद के यूरोपीय साहित्य में एडिसन (Addison) और स्टील (Steele) जैसे लेखकों ने निबंध को लोकप्रिय बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, जिससे यह साहित्यिक विधा वैश्विक रूप से स्थापित हुई।

1.1.3 हिंदी में निबंध की प्राचीन परंपरा: प्रारंभिक हिंदी गद्य में निबंधात्मक रचनाएँ

हिंदी में निबंध का वास्तविक उदय यद्यपि आधुनिक काल, विशेषकर **भारतेंदु युग** से माना जाता है, तथापि इससे पहले की गद्य रचनाओं में भी निबंधात्मक तत्वों की उपस्थिति देखी जा सकती है। इसे ही हिंदी निबंध की प्राचीन या प्रारंभिक परंपरा कहा जाता है।

भारतेंदु-पूर्व गद्य (Early Hindi Prose)

हिंदी गद्य का प्रयोग 17वीं और 18वीं शताब्दी में विभिन्न रूपों में होना शुरू हो गया था, जिसका उद्देश्य मुख्यतः धार्मिक, आख्यानात्मक या व्याख्यात्मक था। इन रचनाओं में आधुनिक निबंध का परिष्कृत रूप तो नहीं था, लेकिन वैचारिक प्रस्तुति की झलक अवश्य मिलती थी।

1. **वार्ता साहित्य:** वल्लभाचार्य और विठ्ठलनाथ के शिष्यों की जीवनियाँ, जैसे '**चौरासी वैष्णवन की वार्ता**' (गोकुलनाथ) और '**दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता**', यद्यपि जीवनीपरक हैं, किंतु इनमें उस समय के सामाजिक और धार्मिक आचार-विचार पर भाष्य मिलते हैं, जो निबंधात्मकता की ओर संकेत करते हैं।
2. **टीका साहित्य:** विभिन्न भक्ति ग्रंथों पर लिखी गई टीकाएँ (Commentaries) व्याख्यात्मक गद्य का उदाहरण थीं।
3. **आधुनिक गद्य के निर्माता:** 19वीं शताब्दी के प्रारंभ में आधुनिक हिंदी गद्य के चार स्तम्भ माने जाते हैं—**मुंशी सदासुखलाल 'नियाज', इंशा अल्ला खाँ, लल्लूलाल और सदल मिश्र**। इनकी रचनाएँ (जैसे *रानी केतकी की कहानी*, *प्रेमसागर*) कथात्मक थीं, किंतु इनमें प्रयुक्त गद्य भाषा के मानकीकरण की प्रारंभिक प्रक्रिया थी, जो भविष्य में निबंध के लिए मार्ग प्रशस्त करने वाली थी।

ये प्रारंभिक रचनाएँ निबंध नहीं थीं, बल्कि हिंदी गद्य के उदय की प्रक्रिया थीं, जिसने निबंध विधा को जन्म देने के लिए आवश्यक भाषा का निर्माण किया।

भारतेन्दु युग (1850-1900): आधुनिक हिंदी निबंध का वास्तविक उद्भव

हिंदी में निबंध का वास्तविक और साहित्यिक रूप से प्रतिष्ठित उद्भव **भारतेन्दु हरिश्चंद्र** (1850-1885) और उनके समकालीन लेखकों के युग में हुआ। इस युग को नवजागरण (Renaissance) का युग भी कहा जाता है, जहाँ साहित्य पहली बार सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक समस्याओं से जुड़ा।

भारतेन्दु युग के निबंध की विशेषताएँ:

1. **उद्देश्यपरकता (Purposefulness):** निबंध केवल मनोरंजन के लिए नहीं लिखे गए, बल्कि उनका मुख्य उद्देश्य समाज सुधार, राष्ट्रीय चेतना का प्रसार, धार्मिक अंधविश्वासों पर व्यंग्य और स्वदेशी प्रेम को बढ़ावा देना था।
2. **शैली की विविधता:** इस युग में वैचारिक गंभीरता के साथ-साथ हास्य-व्यंग्य (Satire) की प्रधानता रही। लेखकों ने विषय की गंभीरता को हल्का करने के लिए बातचीत की शैली और मुहावरों का प्रयोग किया।
3. **पत्र-पत्रिकाओं का योगदान:** 'कविवचनसुधा', 'हरिश्चंद्र चंद्रिका', 'ब्राह्मण' और 'हिंदी प्रदीप' जैसी पत्रिकाओं ने निबंधों के प्रकाशन के लिए मंच प्रदान किया, जिससे निबंध विधा एक आंदोलन बन गई।

प्रमुख निबंधकार और उनकी कृतियाँ:

1. **भारतेन्दु हरिश्चंद्र (Father of Hindi Essay):**
 - इन्होंने अत्यंत सहज और चुलबुली शैली में सामाजिक, धार्मिक और ऐतिहासिक विषयों पर निबंध लिखे।
 - प्रमुख निबंध: 'भारतवर्षोन्नति कैसे हो सकती है?', 'कश्मीर कुसुम', 'लेवी प्राण लेवी'।
 - इनके निबंधों में राष्ट्रीयता, समाज सुधार और हास्य-व्यंग्य का अद्भुत मिश्रण मिलता है।
2. **बालकृष्ण भट्ट (1844-1914):**
 - इन्होंने 'हिंदी प्रदीप' पत्रिका का संपादन किया और गंभीर तथा विचारात्मक दोनों तरह के निबंध लिखे।



fuc/k vkj ukVd

- इनकी शैली में व्यक्तित्व की छाप (वैयक्तिकता) अधिक स्पष्ट थी। उन्होंने मॉन्टेन की आत्मपरक शैली को हिंदी में जीवंत किया।
 - प्रमुख निबंध: 'आँख', 'साहित्य जनसमूह के हृदय का विकास है', 'कृषकों की दुर्दशा'।
3. **प्रताप नारायण मिश्र (1856-1894):**
- इनके निबंधों में वाग्बिदग्धता और विनोद (Wittiness and Humour) का भाव प्रमुख था। इन्होंने सामान्य और घरेलू विषयों (जैसे 'बात', 'दाँत', 'पेट' आदि) पर निबंध लिखकर उन्हें साहित्यिक गरिमा प्रदान की।
 - इनकी शैली में लोक-भाषा के शब्दों और मुहावरों का प्रयोग अधिक मिलता है।

भारतेन्दु युग में निबंध एक ऐसी विधा बनकर उभरी जिसने आधुनिक हिंदी साहित्य के अन्य सभी विधाओं के लिए वैचारिक और भाषागत आधार तैयार किया। यह वह युग था जब निबंध साहित्य का 'जनमत निर्माता' (Opinion Maker) बन गया था।

1.1.4 आधुनिक काल में निबंध लेखन का रूपांतरण: परंपरागत से आधुनिक निबंध की यात्रा

आधुनिक हिंदी साहित्य (1900 के बाद) में निबंध लेखन ने कई युगों से गुजरकर एक लंबी यात्रा तय की है, जिसमें उसका स्वरूप, उद्देश्य और शैली निरंतर परिष्कृत होती गई। यह यात्रा मुख्यतः आत्मपरकता से वस्तुपरकता की ओर, फिर दोनों के समन्वय की ओर हुई है।

द्विवेदी युग (1900-1920): ज्ञान और भाषा का परिष्कार

महावीर प्रसाद द्विवेदी के नाम पर पड़ा यह युग हिंदी गद्य के मानकीकरण और निबंध को गंभीर विषयों से जोड़ने के लिए जाना जाता है।

- **भाषा का परिष्कार:** द्विवेदी जी ने 'सरस्वती' पत्रिका के माध्यम से हिंदी भाषा की व्याकरणगत त्रुटियों को दूर किया और उसे व्यवस्थित तथा परिमार्जित रूप दिया। निबंध की भाषा अब अधिक गंभीर और संयमित हो गई।
- **विषय की गंभीरता:** इस युग के निबंधकारों ने सामाजिक, राजनीतिक विषयों के साथ-साथ **ज्ञान-विज्ञान, इतिहास, भूगोल और आलोचना** जैसे गंभीर विषयों पर लिखना शुरू किया। भारतेन्दु युग की स्वच्छंदता के स्थान पर यहाँ एक बौद्धिक नियंत्रण और वस्तुपरकता आ गई।
- **प्रमुख निबंधकार:**
 - **महावीर प्रसाद द्विवेदी:** उनके निबंधों में आलोचनात्मक और विचारात्मकता का प्राधान्य है। 'कवि और कविता', 'सुकवि किंकर' उनके प्रसिद्ध निबंध हैं।
 - **गोविंद नारायण मिश्र, श्यामसुंदर दास** आदि ने भी इस युग में गंभीर आलोचनात्मक निबंध लिखे।

शुक्ल युग (1920-1940): विचारात्मक निबंधों का शिखर

यह युग हिंदी निबंध के इतिहास का स्वर्ण युग माना जाता है, जिसका श्रेय अकेले **आचार्य रामचंद्र शुक्ल** (1884-1941) को जाता है। शुक्ल जी ने निबंध को एक **उच्च साहित्यिक विधा** के रूप में प्रतिष्ठित किया।

- **विचारात्मक निबंधों का उत्कर्ष:** शुक्ल जी ने दर्शन, साहित्य, मनोविज्ञान और नैतिकता जैसे गंभीर विषयों पर गहन चिंतन प्रस्तुत किया। उन्होंने निबंधों में बुद्धि और हृदय का समन्वय स्थापित किया।
- **भाव या मनोविकार संबंधी निबंध:** शुक्ल जी के निबंधों की सबसे बड़ी पहचान उनके मनोविकार संबंधी निबंध हैं, जैसे: '**श्रद्धा और भक्ति**', '**लोभ और प्रीति**', '**करुणा**', '**क्रोध**' आदि। इन निबंधों में किसी भाव (Emotion) की मनोवैज्ञानिक व्याख्या की गई है, जिससे पाठक को भारतीय संस्कृति और मानव स्वभाव की गहरी अंतर्दृष्टि मिलती है।
- **शैली:** उनकी शैली अत्यंत प्रौढ़, व्यवस्थित, कसावपूर्ण और व्यंजक थी। उन्होंने निबंधों में मुहावरों और लोकोक्तियों का प्रयोग करके अपनी बात को अधिक प्रभावपूर्ण बनाया।



fuc/k vkj ukVd

शुक्ल जी के निबंध आधुनिक निबंध लेखन की सर्वोत्तम उपलब्धि हैं, जहाँ चिंतन की गहराई, अभिव्यक्ति की स्पष्टता और लेखक के व्यक्तित्व का अद्भुत संगम मिलता है।

शुक्लोत्तर युग (Post-Shukla Era, 1940 के बाद): ललित निबंध और आत्मपरकता का पुनरागमन

शुक्ल जी की गंभीर, विचारात्मक परंपरा के समानांतर, शुक्लोत्तर युग में निबंध की एक नई और आकर्षक धारा विकसित हुई, जिसे **ललित निबंध (Personal/Aesthetic Essay)** कहा गया।

ललित निबंध की परंपरा:

1. हजारी प्रसाद द्विवेदी (1907-1979):

- द्विवेदी जी को ललित निबंध का वास्तविक जनक माना जाता है। उन्होंने शुक्ल जी की वैचारिक कठोरता से हटकर, अपने निबंधों में साहित्य, संस्कृति, इतिहास और वैयक्तिकता का सुंदर समन्वय किया।
- उनकी शैली अत्यंत सहज, काव्यात्मक और संस्कृत निष्ठ थी। उनके निबंधों में लोक-जीवन, प्रकृति प्रेम और मानवतावादी दृष्टिकोण मुखर है।
- प्रमुख निबंध: 'कुटज', 'नाखून क्यों बढ़ते हैं', 'शिरीष के फूल'। 'कुटज' जैसे निबंधों में एक छोटे से विषय को उठाकर जीवन के गहनतम दर्शन की व्याख्या की गई है।

2. विद्यानिवास मिश्र (1926-2005):

- इन्होंने लोक-संस्कृति, ग्रामीण जीवन और भारतीय परंपरा को अपने निबंधों का केंद्र बनाया। इनकी भाषा में लोक-संवेदना और काव्यात्मकता का अनूठा मिश्रण है।
- प्रमुख निबंध: 'तुम चंदन हम पानी', 'मेरे राम का मुकुट भीग रहा है'।

3. कुबेरनाथ राय (1933-1996):

- इनके निबंधों में सांस्कृतिक इतिहास, मिथक और वैयक्तिक चिंतन का गहन मिश्रण पाया जाता है। इनकी शैली संस्कृत के तत्सम शब्दों और गंभीर चिंतन से युक्त होती थी।
- प्रमुख निबंध: 'रस आखेटक', 'कामधेनु'।

समकालीन निबंध लेखन में रूपांतरण:



आधुनिक काल में निबंध लेखन का रूपांतरण निम्न प्रकार से हुआ है:

fuc/k vkj ukVd

1. **शैलीगत वैविध्य:** निबंध अब केवल विचारात्मक या ललित ही नहीं रहा, बल्कि संस्मरणात्मक (Memoir), व्यंग्यात्मक (Satirical) और रिपोर्टाज (Reportage) शैली में भी लिखा जाने लगा है।
2. **विषय-विस्तार:** आज के निबंध समसामयिक मुद्दों (जैसे पर्यावरण, मीडिया, वैश्वीकरण, तकनीक और भूमंडलीकरण) पर केंद्रित होते हैं, जो सीधे पाठक के दैनिक जीवन से जुड़े होते हैं।
3. **आलेख और कॉलम:** पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होने वाले आलेख और कॉलम (Columns) भी आधुनिक निबंध के ही परिवर्तित रूप हैं, जिनमें विषय की वस्तुपरकता और प्रस्तुति की संक्षिप्तता पर अधिक ध्यान दिया जाता है।

निष्कर्ष निबंध लेखन की यात्रा मॉन्टेन के आत्म-परीक्षण ('Essais') से शुरू होकर बेकन के गंभीर सिद्धांतों से गुजरी और हिंदी साहित्य में भारतेन्दु के राष्ट्रीय जागरण से होती हुई आचार्य शुक्ल के विचारात्मक शिखर तक पहुँची। अंततः, हजारी प्रसाद द्विवेदी ने 'ललित निबंध' को जन्म देकर निबंध को फिर से मनुष्य के हृदय और संस्कृति से जोड़ दिया। आधुनिक निबंध इन सभी शैलियों—विचारात्मक, ललित और आलोचनात्मक—का समन्वय है, जो आज भी हिंदी गद्य की कसौटी और उसके चिंतन की प्राणवायु बना हुआ है।



इकाई 1.2: निबंध की परिभाषा, स्वरूप एवं विशेषताएँ

उद्देश्य:

fuc/k vkj ukVd

- निबंध की विभिन्न परिभाषाओं को समझना
- निबंध के प्रमुख तत्वों का अध्ययन
- निबंध की भाषा और शैली को जानना
- निबंध को अन्य गद्य विधाओं से अलग करना

विषय:

1.2.1 निबंध की परिभाषाएँ

- शुक्ल, द्विवेदी, बाबू गुलाबराय आदि की परिभाषाएँ

1.2.2 निबंध के प्रमुख तत्व

- विषय, शैली, व्यक्तित्व की छाप

1.2.3 निबंध की भाषा, शैली एवं उद्देश्य

- सरल-सहज भाषा, व्यक्तिगत शैली

1.2.4 अन्य गद्य विधाओं से निबंध का भेद

- लेख, संस्मरण, आलोचना से अंतर

हिंदी निबंध: परिभाषा, तत्व और अन्य गद्य विधाओं से भेद

हिंदी साहित्य में **निबंध** (Essay) गद्य की वह विधा है जिसने लेखक के व्यक्तित्व, विचार और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को सबसे अधिक प्रश्रय दिया है। यह न केवल गद्य की अन्य विधाओं—कहानी, नाटक, उपन्यास—से भिन्न है, बल्कि यह अपने आप में एक स्वतंत्र और बहुआयामी रूप है। निबंध की प्रकृति और संरचना को समझने के लिए, विद्वानों द्वारा दी गई परिभाषाओं, इसके मूलभूत तत्वों और अन्य गद्य रूपों से इसके सूक्ष्म भेद का अध्ययन करना आवश्यक है।

1.2.1 निबंध की परिभाषाएँ

'निबंध' शब्द दो शब्दों के मेल से बना है: 'नि' (अर्थात् निश्चित/सम्यक्) और 'बंध' (अर्थात् बंधन या बाँधना)। शाब्दिक अर्थ में, 'निबंध' का अर्थ है 'भली-भाँति बँधी हुई' या 'एक साथ गुँथी हुई' रचना। यह स्पष्ट करता है कि निबंध में विचारों को एक व्यवस्थित, तर्कसंगत और क्रमबद्ध ढंग से प्रस्तुत किया जाता है। हालाँकि, साहित्यिक संदर्भ में, निबंध की परिभाषा केवल विचारों की सुसंबद्धता तक सीमित नहीं रहती, बल्कि यह लेखक के व्यक्तिगत स्पर्श और शैली की स्वतंत्रता को भी समाहित करती है।

हिंदी साहित्य के मूर्धन्य आलोचकों और निबंधकारों ने निबंध को अपने-अपने दृष्टिकोण से परिभाषित किया है, जो इस विधा की जटिलता और बहुमुखी प्रतिभा को दर्शाता है।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की परिभाषा

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल निबंध को हिंदी गद्य की कसौटी मानते थे। उनकी दृष्टि में निबंध केवल विचारों का संग्रह नहीं, बल्कि लेखक के भावों और बुद्धि का समन्वित प्रस्फुटन है।

शुक्ल जी की केंद्रीय मान्यताएँ:

1. **गद्य की कसौटी:** शुक्ल जी ने कहा, “यदि गद्य कवियों या लेखकों की कसौटी है, तो निबंध गद्य की कसौटी है।” इसका अर्थ है कि एक लेखक की वास्तविक बौद्धिक



fuc/k vkj ukVd

क्षमता, भाषा पर उसका अधिकार, विचारों की सुसंबद्धता और आंतरिक भावात्मकता का पता निबंध विधा में ही चलता है।

2. **बुद्धि और भावना का समन्वय:** उनके अनुसार, निबंध में विचारों का प्रवाह व्यवस्थित और तर्कपूर्ण होना चाहिए (बुद्धि पक्ष), लेकिन वह प्रवाह किसी मशीन की तरह शुष्क नहीं होना चाहिए। उसमें लेखक के हृदय की रागात्मकता और भावों का पुट (भाव पक्ष) अनिवार्य है। जब कोई निबंधकार किसी विषय पर चिंतन करता है, तो उसके विचार उसके निजी अनुभवों और भावनाओं से रंगकर सामने आते हैं।
3. **व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति:** शुक्ल जी ने स्पष्ट किया कि निबंध की सबसे बड़ी विशेषता लेखक के **व्यक्तित्व की स्पष्ट छाप** है। विषय कोई भी हो, उसकी प्रस्तुति लेखक के निजी सोच, मन:स्थिति और शैलीगत विशेषताओं से युक्त होनी चाहिए। निबंधकार अपने विचारों के माध्यम से पाठक से सीधा संवाद करता प्रतीत होता है।

शुक्ल जी की परिभाषा विशेष रूप से **विचारात्मक निबंधों** पर केंद्रित है, जहाँ तर्क, विश्लेषण और व्यवस्थित चिंतन प्रमुख होता है।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की परिभाषा

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने निबंध की परिभाषा में आचार्य शुक्ल की विचारात्मक कठोरता से हटकर, लेखक की **आंतरिक स्वतंत्रता** और **आत्म-अभिव्यक्ति** के तत्व को अधिक महत्व दिया। द्विवेदी जी स्वयं ललित निबंध के श्रेष्ठतम हस्ताक्षर थे, इसलिए उनकी परिभाषा में 'मन की मौज' और 'स्वच्छंदता' का भाव प्रमुख है।

द्विवेदी जी की केंद्रीय मान्यताएँ:

1. **व्यक्ति की स्वच्छंद अभिव्यक्ति:** द्विवेदी जी के अनुसार, निबंध वह गद्य रचना है, जिसमें लेखक के मन की मौज, उसका व्यक्तिगत चिंतन और उसकी सहजता झलकती है। उन्होंने कहा, "**निबंध व्यक्ति की स्वाधीन चेतना का परिणाम है।**" यहाँ 'स्वाधीन चेतना' का तात्पर्य किसी विषय की बाह्य बाध्यता से मुक्त होकर, अपने भीतर के भावों और विचारों को व्यक्त करने की स्वतंत्रता से है।



fuc/k vkj ukVd

2. **विषय गौण, व्यक्ति प्रमुख:** ललित निबंधों के संदर्भ में, उन्होंने विषय के महत्व को कम करके लेखक के व्यक्तित्व की प्रधानता को स्थापित किया। उनके अनुसार, निबंधकार किसी भी साधारण से विषय (जैसे नाखून, आम, वृक्ष, कुत्ता) को उठा सकता है और उसे अपने व्यक्तिगत अनुभव, विनोदप्रियता और शैली के जादू से विशिष्ट बना देता है।
3. **कलात्मकता और लालित्य:** द्विवेदी जी ने ललित निबंधों की ओर ध्यान दिलाते हुए, निबंध में **लालित्य (Grace)** और **सहज कलात्मकता** को आवश्यक माना। यह लालित्य विचारों के घुमाव, भाषा के सौंदर्य और लेखक की सहज, विनोदपूर्ण शैली से उत्पन्न होता है।

द्विवेदी जी की परिभाषा निबंध को एक आत्म-प्रधान, कलात्मक और लचीली विधा के रूप में स्थापित करती है।

बाबू गुलाबराय की परिभाषा

बाबू गुलाबराय ने शुक्ल और द्विवेदी दोनों की मान्यताओं का समन्वय करते हुए एक संतुलित और व्यापक परिभाषा प्रस्तुत करने का प्रयास किया। उन्होंने निबंध में **व्यवस्थित रूप और व्यक्तित्व की छाप** दोनों को आवश्यक माना।

बाबू गुलाबराय की केंद्रीय मान्यताएँ:

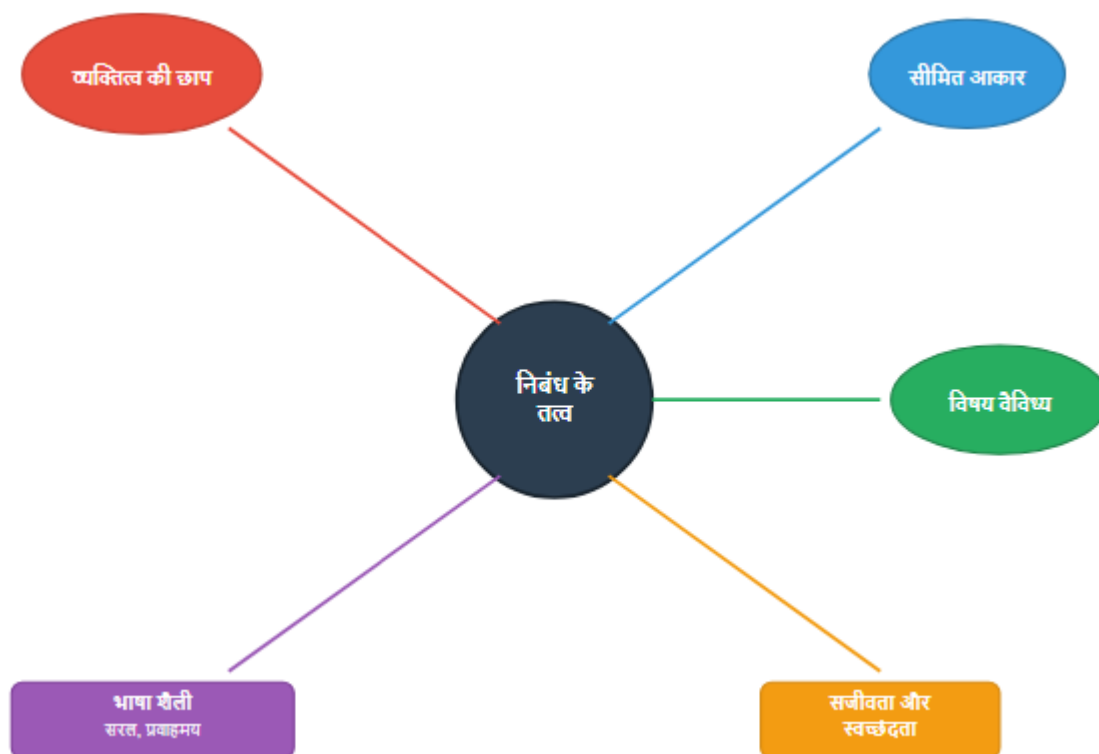
1. **व्यक्तिगत और व्यवस्थित रूप का समन्वय:** बाबू गुलाबराय ने निबंध को परिभाषित करते हुए कहा, "निबंध वह गद्य रचना है, जिसमें सीमित आकार के भीतर किसी विषय का प्रतिपादन एक विशेष निजीपन, स्वच्छंदता, सौष्ठव और सजीवता के साथ किया गया हो।"
2. **सीमित आकार (Limited Scope):** उन्होंने निबंध के 'निबंधत्व' को उसके आकार की सीमा से भी जोड़ा। निबंध एक प्रबंध (लंबी रचना) नहीं है; इसका आकार सीमित होता है ताकि विचारों की एकाग्रता बनी रहे।
3. **सजीवता और सौष्ठव (Vibrancy and Elegance):** उनकी परिभाषा में प्रस्तुति की सजीवता (जो लेखक के व्यक्तित्व से आती है) और सौष्ठव (कलात्मक सुंदरता और भाषाई परिष्कार) को महत्वपूर्ण माना गया।

4. **निजीपन (Personal Touch):** यह निजीपन ही निबंध को लेख या शोध प्रबंध से अलग करता है। यह लेखक का वह रंग है, जो विषय को नया आयाम देता है।

संक्षेप में, शुक्ल जी ने निबंध को **बुद्धि और तर्क** का परिष्कृत रूप माना; द्विवेदी जी ने इसे **स्वच्छंद आत्म-अभिव्यक्ति** का माध्यम माना; और बाबू गुलाबराय ने इन दोनों के बीच **व्यवस्था और व्यक्तिगत निजीपन** के समन्वय पर बल दिया।

1.2.2 निबंध के प्रमुख तत्व

किसी भी साहित्यिक विधा के लिए कुछ आवश्यक घटक होते हैं जो उसे अन्य विधाओं से पृथक करते हैं और उसकी पहचान निर्धारित करते हैं। निबंध के तीन प्रमुख तत्व माने गए हैं:



चित्र 1.2: निबंध की परिभाषा और तत्व

1. विषय (Subject)

निबंध का विषय व्यापक और असीमित हो सकता है। यह अत्यंत गंभीर, दार्शनिक या साहित्यिक हो सकता है (जैसे विचारात्मक निबंध), या फिर यह अत्यंत हल्का, साधारण और निजी अनुभव पर आधारित हो सकता है (जैसे ललित निबंध)।

विषय की विशेषताएँ:

- **व्यापकता:** निबंध का कैनवास बहुत बड़ा है। धर्म, दर्शन, राजनीति, समाज, विज्ञान, कला, प्रकृति, व्यक्तिगत अनुभव—हर क्षेत्र निबंध का विषय बन सकता है।
- **गहनता या लालित्य:** विचारात्मक निबंधों में विषय की **गहनता** (Depth) अपेक्षित होती है, जहाँ लेखक विषय के गूढ़ पक्षों का विश्लेषण करता है। जबकि ललित निबंधों में विषय का महत्व कम होता है और लेखक का निजी **लालित्य** (Grace) ही उसे महत्वपूर्ण बना देता है।
- **नूतनता (Novelty):** एक सफल निबंधकार पुराने विषयों पर भी नए कोणों से विचार प्रस्तुत करता है, जिससे विषय में नवीनता का समावेश होता है।
- **एकाग्रता (Focus):** हालाँकि निबंध में स्वतंत्रता होती है, लेकिन विचारों को विषय पर केंद्रित रखना आवश्यक है। भटकाव निबंध के प्रभाव को कम करता है।

2. शैली (Style)

शैली से तात्पर्य लेखक की अभिव्यक्ति की विशिष्ट पद्धति से है। यह वह तरीका है जिससे लेखक अपने विचारों और भावनाओं को भाषा के माध्यम से पाठकों तक पहुँचाता है। निबंध में शैली का महत्व इतना अधिक है कि इसे निबंध की आत्मा कहा जा सकता है।

शैली के प्रमुख प्रकार (निबंध के संदर्भ में):

शैली का प्रकार	विशेषताएँ	प्रमुख निबंधकार
विचारात्मक शैली	गंभीर, तार्किक, विश्लेषणात्मक, व्यवस्थित पद-विन्यास, वाक्यों में गहनता।	आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, डॉ. नगेन्द्र
भावात्मक शैली	भावनात्मकता, हृदय की प्रधानता, भाषा में प्रवाह और मार्मिकता, कल्पना का अधिक प्रयोग, लाक्षणिकता।	सरदार पूर्ण सिंह, वियोगी हरि
ललित/व्यक्तिगत शैली	निजीपन, विनोदप्रियता, सहजता, विषय का विस्तारण और संक्षिप्तीकरण लेखक की इच्छा पर आधारित, काव्यात्मकता।	आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, कुबेरनाथ राय
व्यंग्यात्मक शैली	सामाजिक विसंगतियों पर कटाक्ष, हास्य-विनोद का प्रयोग, दोहरी अर्थवत्ता वाली भाषा।	हरिशंकर परसाई, शरद जोशी

शैली ही निबंधकार की विशिष्ट पहचान बनाती है। एक निबंध को विशिष्ट बनाने के लिए शैली में **प्रवाह, प्रभावोत्पादकता और विषय के अनुकूलता** का होना आवश्यक है।

3. व्यक्तित्व की छाप (Imprint of Personality)

यह निबंध का सबसे महत्वपूर्ण और मौलिक तत्व है, जो इसे लेख, शोध या रिपोर्ट से अलग करता है। **व्यक्तित्व की छाप** से तात्पर्य लेखक के आंतरिक स्वरूप, उसके अनुभव, दृष्टिकोण, हास्यबोध, संवेदनशीलता और जीवन दर्शन की अभिव्यक्ति से है।

- **आत्म-परकता (Subjectivity):** निबंधकार तथ्यों का प्रस्तुतीकरण भी अपने व्यक्तिगत लेंस से करता है। वह केवल सूचना नहीं देता, बल्कि उन सूचनाओं पर अपनी राय, अपना मनन, और अपनी प्रतिक्रिया भी देता है।
- **सहानुभूति और ईमानदारी (Sincerity):** व्यक्तित्व की छाप तभी प्रभावी होती है जब लेखक विचारों को पूरी ईमानदारी और सच्चाई के साथ व्यक्त करता है। निबंधकार का आत्म-प्रकाशन ही उसे पाठक से जोड़ता है।
- **सहजता और स्वतंत्रता:** व्यक्तित्व की छाप यह सुनिश्चित करती है कि लेखक साहित्यिक नियमों, शास्त्रीय बंधनों और विषय की कठोरता से मुक्त होकर अपने मन की सहज गति



fuc/k vkj ukVd

का अनुसरण करे। यही वह "अँगड़ाई" है जिसे निबंधकार का मन लेता है और जिसे पढ़कर पाठक भी उस वैचारिक यात्रा का हिस्सा बन जाता है।

यह व्यक्तित्व की छाप ही है जिसके कारण हम शुक्ल जी के निबंधों में उनकी गंभीर दार्शनिक चेतना, द्विवेदी जी के निबंधों में उनका सांस्कृतिक और ललित बोध, तथा बाबू गुलाबराय के निबंधों में उनकी संयमित तार्किकता को पहचान पाते हैं।

1.2.3 निबंध की भाषा, शैली एवं उद्देश्य

निबंध की सफलता बहुत हद तक उसकी भाषा, उसकी व्यक्तिगत शैली और उसके अंतर्निहित उद्देश्य पर निर्भर करती है।

सरल-सहज भाषा (Simple and Easy Language)

निबंध की भाषा विषय वस्तु और निबंधकार की प्रकृति के अनुसार बदलती रहती है, लेकिन सामान्यतः इसमें निम्नलिखित विशेषताएँ होती हैं:

1. **बोधगम्यता (Intelligibility):** निबंध का उद्देश्य विचारों का संप्रेषण है, इसलिए भाषा को सरल, स्पष्ट और सहज होना चाहिए ताकि पाठक विचार-शृंखला को बिना किसी बाधा के समझ सके।
2. **विषयानुरूपता (Conformity to Subject):**
 - विचारात्मक निबंधों में भाषा गंभीर, परिष्कृत और संस्कृतनिष्ठ शब्दावली से युक्त हो सकती है, लेकिन उसका प्रवाह तारकीय होना चाहिए।
 - ललित निबंधों में भाषा में मुहावरों, लोकोक्तियों, बिंबों और प्रतीकों का प्रयोग अधिक होता है, जिससे वह अधिक रसमय और काव्यात्मक हो जाती है।
3. **शुद्धता और परिमार्जन:** भाषा व्याकरणिक रूप से शुद्ध और परिमार्जित होनी चाहिए। शब्दों का चुनाव सटीक और अर्थपूर्ण होना चाहिए।
4. **प्रवाह और गति:** वाक्य छोटे, सधे हुए और गतिशील होने चाहिए। लंबे और जटिल वाक्य विचारों के प्रवाह को बाधित करते हैं।

व्यक्तिगत शैली (Personal Style)

जैसा कि 1.2.2 में बताया गया है, शैली निबंध का अत्यंत महत्वपूर्ण तत्व है। **व्यक्तिगत शैली** का अर्थ है वह विशिष्टता, जो एक लेखक को दूसरे से अलग करती है।

- **लेखक की पहचान:** यह लेखक का 'हस्ताक्षर' है। यह उसकी शब्दावली, वाक्य विन्यास, तर्क देने का तरीका, हास्य का पुट, या गंभीर विश्लेषण की क्षमता में दिखाई देता है।
- **स्वतन्त्रता:** निबंधकार को अपनी शैली चुनने की पूरी स्वतंत्रता होती है। वह कभी कथात्मक हो सकता है, कभी संवाद शैली अपना सकता है, और कभी आत्मकथात्मक शैली में अपने विचारों को व्यक्त कर सकता है।
- **ललित निबंधों की विशेषता:** ललित निबंधों की व्यक्तिगत शैली बहुत ही आकर्षक होती है। इसमें लेखक साधारण बातों में भी असाधारण सौंदर्य और विनोद ढूंढ लेता है। यह शैली पाठक को ज्ञान देने के बजाय उसे लेखक के साथ विचार-विमर्श में शामिल कर लेती है।

निबंध का उद्देश्य (Objective of the Essay)

निबंध रचना के प्रमुख उद्देश्य बहुआयामी होते हैं:

1. **आत्म-अभिव्यक्ति (Self-Expression):** सबसे प्रमुख उद्देश्य लेखक के मन के विचारों, भावनाओं और अनुभवों को सहजता से अभिव्यक्त करना है। यह लेखक की आंतरिक बेचैनी, जिज्ञासा या चिंतन का परिणाम होता है।
2. **विचार संप्रेषण (Communication of Thought):** गंभीर और विचारात्मक निबंधों का उद्देश्य किसी विषय पर गहन चिंतन को व्यवस्थित रूप से पाठकों तक पहुँचाना, उन्हें शिक्षित करना या किसी नए दृष्टिकोण से परिचित कराना होता है।
3. **आनंद और मनोरंजन (Joy and Entertainment):** ललित और विनोदपूर्ण निबंधों का प्राथमिक उद्देश्य पाठक को मानसिक आनंद प्रदान करना, उसे हँसाना और उसकी नीरसता को दूर करना होता है। इसमें विचार गौण होकर आनंद प्रमुख हो जाता है।



fuc/k vkj ukVd

4. **जागरूकता और बोध (Awareness and Enlightenment):** सामाजिक, राजनीतिक या नैतिक विषयों पर लिखे गए निबंधों का उद्देश्य समाज को किसी समस्या के प्रति जागरूक करना, उसमें सुधार की भावना पैदा करना या उसे जीवन मूल्यों का बोध कराना होता है।
5. **गद्य को परिष्कृत करना:** आचार्य शुक्ल की मान्यतानुसार, निबंध गद्य की कसौटी है। इस रूप में, इसका उद्देश्य हिंदी गद्य को अधिक तार्किक, सशक्त और भावात्मक रूप से सक्षम बनाना भी है।

1.2.4 अन्य गद्य विधाओं से निबंध का भेद

निबंध गद्य की अन्य विधाओं जैसे लेख, संस्मरण और आलोचना (Critique) से अपनी प्रकृति, उद्देश्य और संरचना के कारण स्पष्ट रूप से भिन्न होता है।

निबंध बनाम लेख (Essay vs. Article)

'लेख' (Article) सामान्यतः किसी विषय पर वस्तुपरक और तथ्यात्मक जानकारी देने के उद्देश्य से लिखा जाता है।

भेद का आधार	निबंध (Essay)	लेख (Article)
प्रधानता	व्यक्तित्व (Subjectivity): लेखक का निजी दृष्टिकोण और विचार प्रमुख होता है।	वस्तु (Objectivity): विषय-वस्तु और तथ्य प्रमुख होते हैं, लेखक की राय गौण होती है।
शैली	व्यक्तिगत, स्वच्छंद, कलात्मक। विचारों का मुक्त प्रवाह होता है।	तथ्यात्मक, स्पष्ट, औपचारिक, सूचनात्मक। विचारों का प्रवाह नियमबद्ध और सीधे-सीधे होता है।
उद्देश्य	आत्म-अभिव्यक्ति, आनंद, चिंतन को साझा करना।	सूचना देना, तथ्य प्रस्तुत करना, किसी विषय का स्पष्टीकरण करना।
विषय-वस्तु	किसी भी विषय पर चिंतन। साधारण से साधारण विषय भी उठाया जा सकता है।	सामान्यतः सामयिक, वैज्ञानिक, राजनीतिक या सामाजिक समस्याओं पर केंद्रित।
बंधन	कम बंधन, लेखक की मन की मौज।	अनुशासन, शोध या पत्रकारिता के नियमों का कठोर पालन।
उदाहरण	ललित निबंध, विचारात्मक निबंध।	समाचार पत्र में प्रकाशित संपादकीय, रिपोर्ट, शोध पत्र।



fuc/k vkj ukVd

निष्कर्षतः, निबंध आत्म-प्रधान है, जबकि लेख विषय-प्रधान। निबंध दिल और दिमाग दोनों से जुड़ा होता है, जबकि लेख मुख्य रूप से दिमाग से।

निबंध बनाम संस्मरण (Essay vs. Memoir)

'संस्मरण' (Memoir) स्मृति पर आधारित रचना है, जिसमें लेखक अपने जीवन में घटित किसी महत्वपूर्ण घटना, व्यक्ति या स्थान को याद करके लिखता है।

भेद का आधार	निबंध (Essay)	संस्मरण (Memoir)
आधार	विचार, चिंतन और मनन। यह वर्तमान बौद्धिक क्रिया पर आधारित होता है।	स्मृति (Memory)। यह अतीत की घटनाओं के स्मरण पर आधारित होता है।
समय	विचारों का कोई समय नहीं, वर्तमान चिंतन की उपज।	अनिवार्य रूप से अतीत पर केंद्रित।
सत्यता	वैचारिक सत्यता और लेखक की व्यक्तिगत अनुभूति की सच्चाई प्रमुख।	तथ्यों की तथ्यात्मक सच्चाई पर जोर, हालाँकि लेखक की भावनाएँ भी जुड़ती हैं।
केंद्र बिंदु	लेखक के विचार या दृष्टिकोण पर केंद्रित।	कोई विशेष व्यक्ति, घटना या स्थान पर केंद्रित।
उद्देश्य	विचार-विनिमय, आत्म-प्रकाशन।	किसी यादगार व्यक्ति या घटना को जीवंत रूप में प्रस्तुत करना।
कथा-तत्व	प्रायः कथा-तत्व गौण होता है या विचारों को समझाने के लिए प्रयुक्त होता है।	कथा-तत्व या वर्णनात्मकता अनिवार्य है, क्योंकि अतीत की घटना का वर्णन किया जाता है।

संस्मरण अनिवार्य रूप से किसी विशिष्ट वस्तु या व्यक्ति का चित्रण है, जबकि निबंध उस चित्रण से उत्पन्न होने वाले विचारों का विश्लेषण है।

निबंध बनाम आलोचना (Essay vs. Critique)

'आलोचना' (Critique) का तात्पर्य किसी साहित्यिक कृति (कविता, उपन्यास, नाटक आदि) या कला के रूप का मूल्यांकन, विश्लेषण और उसके गुण-दोषों का निर्धारण करना है।

भेद का आधार	निबंध (Essay)	आलोचना (Critique)
आधारभूत सिद्धांत	स्वच्छंद, व्यक्तिगत चिंतन। कोई कठोर शास्त्रीय बंधन नहीं।	शास्त्रीय सिद्धांत और नियम। मूल्यांकन के लिए स्थापित मापदंडों का प्रयोग अनिवार्य।
उद्देश्य	आत्म-प्रकाशन, विचार-प्रस्तुति, किसी विषय पर व्यक्तिगत दृष्टिकोण देना।	किसी कृति, लेखक या सिद्धांत का मूल्यांकन , व्याख्या और गुण-दोष निर्धारण करना।
क्षेत्र	अत्यंत व्यापक, साहित्य से इतर विषयों को भी शामिल करता है।	मुख्यतः साहित्य, कला, और सौंदर्यशास्त्र के क्षेत्र तक सीमित।
अंतिम लक्ष्य	विचारों का प्रवाह और आनंद।	एक निष्कर्ष या अंतिम निर्णय (Judgment) पर पहुँचना।
व्यक्तित्व	लेखक का व्यक्तित्व सीधे और स्पष्ट रूप से अभिव्यक्त होता है।	आलोचक का व्यक्तित्व नियमबद्धता और निष्पक्षता बनाए रखने के कारण कुछ हद तक नियंत्रित रहता है।
रूप	मुक्त और आत्म-प्रधान।	नियंत्रित और विषय-प्रधान।

यह ध्यान रखना आवश्यक है कि कई बार विचारात्मक निबंध आलोचना का रूप ले लेते हैं (जैसे शुक्ल जी के कई निबंध), लेकिन शुद्ध आलोचना अनिवार्यतः नियमबद्ध होती है, जबकि निबंध हमेशा व्यक्तिगत और स्वतंत्र होता है।

निष्कर्ष

निबंध गद्य साहित्य की वह लचीली और बहुआयामी विधा है, जो लेखक के व्यक्तित्व को सबसे अधिक अभिव्यक्ति का अवसर देती है। आचार्य शुक्ल ने इसे **गद्य की कसौटी** कहकर इसके व्यवस्थित और तार्किक पक्ष को महिमामंडित किया, तो आचार्य द्विवेदी ने इसे **स्वच्छंद चेतना की अभिव्यक्ति** कहकर इसके ललित और आत्म-प्रधान रूप को स्थापित किया।

अपने प्रमुख तत्वों—**विषय की व्यापकता, शैली की विविधता और व्यक्तित्व की अपरिहार्य छाप**—के कारण निबंध न केवल लेख की वस्तुपरकता, संस्मरण की अतीत-निर्भरता, और आलोचना की नियमबद्धता से स्वयं को अलग करता है, बल्कि यह हिंदी साहित्य की विचार-यात्रा का एक सशक्त माध्यम भी बनता है। सरल-सहज भाषा और व्यक्तिगत शैली निबंध को एक ऐसा साहित्यिक रूप प्रदान करती है, जो ज्ञान और आनंद दोनों की अनुभूति एक साथ कराता है।



fuc/k vkj ukVd

इकाई 1.3: हिंदी निबंध का उद्भव और विकास

उद्देश्य:

- हिंदी निबंध की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को समझना
- विभिन्न युगों में निबंध के विकास का अध्ययन
- प्रमुख निबंधकारों का परिचय
- आधुनिक निबंध की प्रवृत्तियों को जानना

विषय:

1.3.1 हिंदी निबंध की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

- भारतेंदु युग से पूर्व

1.3.2 प्रारंभिक निबंधकार और उनकी रचनाएँ

- भारतेंदु, बालकृष्ण भट्ट

1.3.3 भारतेंदु युग, द्विवेदी युग और छायावादोत्तर काल में निबंध

- प्रत्येक युग की विशेषताएँ

1.3.4 आधुनिक युग में निबंध की प्रवृत्तियाँ

- समकालीन निबंध लेखन

1.3.1 हिंदी निबंध की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

निबंध (Essay) गद्य की एक आधुनिक और अत्यंत महत्वपूर्ण विधा है। यह 'नि'+ 'बंध' से बना है, जिसका अर्थ है 'अच्छी तरह से बँधी हुई' अथवा 'विचारों को सुव्यवस्थित ढंग से



fuc/k vkj ukVd

प्रस्तुत करने वाली' रचना। हिंदी निबंध का उदय भारत में पश्चिमी साहित्य के प्रभाव और आधुनिक चेतना के जागरण के साथ हुआ।

निबंध की अवधारणा और पाश्चात्य प्रभाव

हिंदी निबंध की प्रेरणा सीधे तौर पर पाश्चात्य साहित्य से आई। 16वीं शताब्दी में फ्रांसीसी लेखक **मांटेन (Michel de Montaigne)** को इसका जनक माना जाता है, जिन्होंने व्यक्तिगत अनुभूतियों और आत्म-चिंतन को केंद्र में रखकर निबंध लिखे। इसके बाद, अंग्रेजी साहित्य में **फ्रांसिस बेकन (Francis Bacon)** ने गंभीर, संक्षिप्त और विचार-प्रधान निबंधों की नींव रखी।

भारतेंदु युग से पूर्व, हिंदी गद्य अपनी शैशवावस्था में था। कविता की प्रधानता थी और जो गद्य उपलब्ध था, वह मुख्य रूप से टीका-टिप्पणी, आख्यान, या धर्म प्रचार तक सीमित था।

भारतेंदु युग से पूर्व की स्थिति

भारतेंदु युग (1850-1900 ईस्वी) से ठीक पहले हिंदी गद्य का जो रूप विकसित हो रहा था, उसे निबंध की नींव माना जा सकता है।

1. **खड़ी बोली गद्य का आरंभ:** 19वीं शताब्दी के शुरुआती दौर में **सदासुख लाल 'नियाज़', लल्लू लाल, सदल मिश्र,** और **मुंशी प्रेमचंद** जैसे लेखकों ने खड़ी बोली गद्य को स्थापित करने का प्रयास किया। इनकी रचनाएँ मुख्यतः कथा या आख्यान प्रधान थीं, जिनमें निबंध की गंभीरता और वैचारिकता का अभाव था।
2. **ईसाई मिशनरियों का प्रभाव:** धर्म प्रचार के लिए सरल गद्य की आवश्यकता पड़ी, जिसने खड़ी बोली को लोकभाषा के रूप में स्थापित करने में मदद की।
3. **पत्र-पत्रिकाओं का अभाव:** निबंध विधा का गहरा संबंध पत्रकारिता से है। भारतेंदु युग से पूर्व हिंदी में व्यवस्थित पत्र-पत्रिकाओं का अभाव था, इसलिए निबंध का विकास अवरुद्ध था।



fuc/k vkj ukVd

4. **संक्रमण काल:** इस काल की रचनाएँ निबंध, कहानी और लेख के बीच की कड़ी थीं। उनमें विचारों की **क्रमबद्धता** और **विषय-वस्तु की एकाग्रता**, जो निबंध के लिए आवश्यक है, कम थी।

संक्षेप में, भारतेंदु युग से पहले हिंदी निबंध का कोई **स्वतंत्र और सुनिश्चित स्वरूप** नहीं था। आधुनिक निबंध का उदय 1868 ईस्वी के आस-पास **भारतेंदु हरिश्चंद्र** के साहित्यिक पदार्पण के साथ ही माना जाता है।

1.3.2 प्रारंभिक निबंधकार और उनकी रचनाएँ

भारतेंदु युग हिंदी निबंध का **उद्भव काल** है, जब निबंध पहली बार एक स्वतंत्र विधा के रूप में उभरा। इस युग के दो स्तंभों—भारतेंदु हरिश्चंद्र और बालकृष्ण भट्ट—ने निबंध को विविधता और गहराई प्रदान की।

भारतेंदु हरिश्चंद्र (1850-1885)

भारतेंदु हरिश्चंद्र को **हिंदी निबंध का जनक** माना जाता है। उन्होंने निबंध को नीरस धार्मिक चर्चाओं से निकालकर समसामयिक जीवन, समाज और राष्ट्रीय चेतना से जोड़ा।

भारतेंदु के निबंधों की विशेषताएँ:

1. **विषयगत विविधता:** उन्होंने धर्म, समाज सुधार, राजनीति, इतिहास, यात्रा, और यहाँ तक कि व्यंग्य जैसे अनेक विषयों पर निबंध लिखे।
2. **सहज और अनौपचारिक शैली:** उनकी शैली अत्यंत सरल, सहज और विनोदी थी। उन्होंने **कचहरी की भाषा** से मुक्त होकर हिंदी को एक नया जीवन दिया।
3. **राष्ट्रीय चेतना और समाज सुधार:** उनके निबंधों का केंद्रीय भाव राष्ट्रीयता, देशप्रेम, और समाज में व्याप्त कुरीतियों पर प्रहार करना था। वे **सामाजिक व्यंग्य** का कुशलता से उपयोग करते थे।
4. **व्यक्तिगत स्पर्श:** उनके निबंधों में उनका व्यक्तिगत दृष्टिकोण स्पष्ट झलकता है, जिससे उनमें आत्मीयता का भाव आता है।



fuc/k vkj ukVd

प्रमुख निबंध:

- **लेवी प्राण लेवी (1884):** यह निबंध उनके विनोद और व्यंग्य का उत्कृष्ट उदाहरण है।
- **भारतवर्षोन्नति कैसे हो सकती है (1884):** बलिया के ददरी मेले में दिया गया उनका प्रसिद्ध भाषण, जो राष्ट्रीय चेतना और प्रगति के मार्ग पर विचार करता है।
- **काशी**
- **तदीय सर्वस्व**

बालकृष्ण भट्ट (1844-1914)

बालकृष्ण भट्ट भारतेन्दु युग के सबसे गंभीर, प्रतिभाशाली और नियमित निबंधकार थे। वे मासिक पत्रिका 'हिंदी प्रदीप' (1877) के संपादक थे, जिसका उपयोग उन्होंने अपने विचारों को अभिव्यक्त करने के लिए किया। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने उन्हें इस युग का सबसे प्रभावशाली निबंधकार माना है।

बालकृष्ण भट्ट के निबंधों की विशेषताएँ:

1. **विषयों का मनोवैज्ञानिक विस्तार:** भारतेन्दु जहाँ सत्यनारायण की कथा की तरह सरल गद्य लिखते थे, वहीं भट्ट जी विचारों की गहराई में उतरकर मनोवैज्ञानिक और भावात्मक विश्लेषण प्रस्तुत करते थे।
2. **प्रौढ़ और अलंकृत शैली:** उनकी भाषा में संस्कृतनिष्ठ शब्दों का प्रयोग अधिक मिलता है। उनकी शैली व्यास शैली के करीब थी, जिसमें वे एक ही विचार को कई उपमाओं और दृष्टान्तों के माध्यम से विस्तार देते थे।
3. **निबंधों की विविधता:** उन्होंने तीन प्रकार के निबंध लिखे:
 - **भावात्मक निबंध:** जैसे प्रीति, आशा, भय।
 - **वैचारिक निबंध:** जैसे साहित्य जनसमूह के हृदय का विकास है।
 - **व्यंग्य और सामाजिक निबंध:** जैसे चंद्रोदय, अंग्रेजी शिक्षा।

4. **स्वतंत्रता और मौलिकता:** उनकी भाषा पर उनका पूर्ण नियंत्रण था। उन्होंने विचारों को व्यक्त करने के लिए मुहावरों और लोकोक्तियों का नया प्रयोग किया, जिससे उनके गद्य को एक विशिष्ट पहचान मिली।

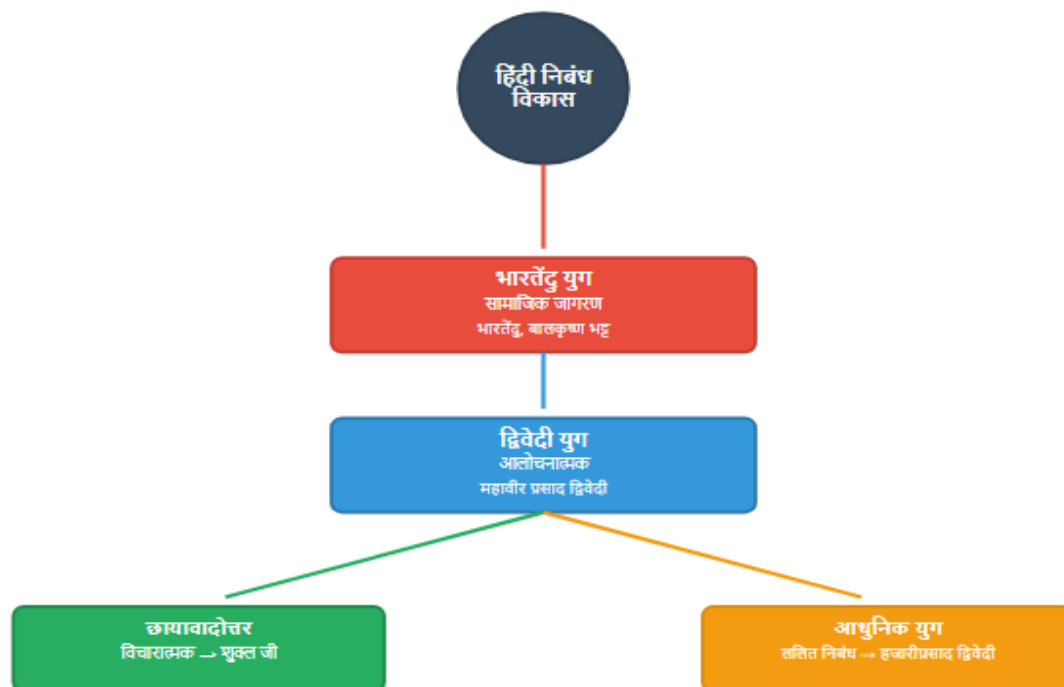
प्रमुख निबंध:

साहित्य जनसमूह के हृदय का विकास है (हिंदी निबंध में सैद्धांतिक आलोचना की नींव)

- चंद्रोदय
- रोमांस
- हमारे नए सुशिक्षितों में प्रेम

1.3.3 भारतेन्दु युग, द्विवेदी युग और छायावादोत्तर काल में निबंध

हिंदी निबंध का विकास इन तीन प्रमुख युगों में अलग-अलग साहित्यिक और सामाजिक आवश्यकताओं के अनुरूप हुआ।



चित्र 1.3: हिंदी निबंध का विकासक्रम



fuc/k vkj ukVd

1. भारतेंदु युग (1868-1900 ईस्वी): अनौपचारिकता और सुधार की भावना

भारतेंदु युग में निबंध विधा का जन्म हुआ। यह हिंदी पत्रकारिता का भी आरंभिक काल था, जिसने निबंध के लिए मंच प्रदान किया।

प्रमुख विशेषताएँ:

- **शैली की स्वच्छंदता:** निबंधकारों ने अपनी भाषा और शैली को लेकर पूरी स्वतंत्रता बरती। भाषा का स्वरूप अभी भी अस्थिर था, जिसमें ब्रजभाषा, उर्दू, और लोकभाषा के तत्वों का मिश्रण था।
- **सामाजिक एवं राजनीतिक चेतना:** यह युग सामाजिक और धार्मिक रूढ़ियों के विरुद्ध विद्रोह का काल था। निबंधों का मुख्य उद्देश्य देश की दुर्दशा दिखाना और जनता को सुधार के लिए प्रेरित करना था।
- **हास्य-व्यंग्य की प्रधानता:** प्रताप नारायण मिश्र, राधाचरण गोस्वामी और भारतेंदु ने व्यंग्य को सामाजिक सुधार का सशक्त माध्यम बनाया।
- **प्रमुख निबंधकार:**
 - **प्रताप नारायण मिश्र:** उनकी शैली अत्यंत चंचल, विनोदी और आत्मीय थी। उन्होंने 'बात', 'दाँत', 'पेट', 'नाक' जैसे साधारण विषयों पर भी निबंध लिखे, जो उनकी **सहजता** दर्शाते हैं। (पत्रिका: *ब्राह्मण*)
 - **राधाचरण गोस्वामी:** व्यंग्य और हास्य में माहिर।
 - **बद्री नारायण चौधरी 'प्रेमघन':** गंभीर और अलंकृत शैली के निबंधकार।

2. द्विवेदी युग (1900-1920 ईस्वी): अनुशासन और वैचारिकता का युग

यह युग हिंदी गद्य के मानकीकरण का युग था। **आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी** (पत्रिका: *सरस्वती*) इस युग के केंद्र में थे, जिन्होंने हिंदी भाषा और साहित्य को एक **परिष्कृत और अनुशासित** स्वरूप दिया।



fuc/k vkj ukVd

प्रमुख विशेषताएँ:

- **भाषा का मानकीकरण:** द्विवेदी जी ने लेखकों को भाषा की शुद्धता, व्याकरण की पाबंदी, और अनावश्यक तद्भव/उर्दू शब्दों के प्रयोग से बचने की प्रेरणा दी। खड़ी बोली अब गद्य की एकमात्र स्वीकार्य भाषा बन गई।
- **वैचारिकता की प्रधानता:** अनौपचारिक और व्यक्तिगत निबंधों की जगह अब **गंभीर, विचारात्मक और खोजपूर्ण** निबंधों का बोलबाला हुआ। साहित्य, इतिहास, विज्ञान, और दर्शन जैसे गंभीर विषय केंद्र में आए।
- **विषय-वस्तु की गहनता:** निबंध में तार्किकता, प्रमाणिकता और क्रमबद्धता (Logic and Coherence) को महत्व दिया गया।
- **प्रमुख निबंधकार:**
 - **आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी:** उनके निबंधों में **अन्वेषण** और **तर्क** की प्रधानता है। उन्होंने **ज्ञान के भंडार** को हिंदी निबंध के माध्यम से जनता तक पहुँचाया। (जैसे: *कवि और कविता, कालिदास की निरंकुशता*)।
 - **श्याम सुंदर दास:** **तथ्यात्मक** और **विवेचनात्मक** निबंधों के लिए प्रसिद्ध।
 - **सरदार पूर्ण सिंह:** उनके भावात्मक निबंध (जैसे *मजदूरी और प्रेम, सच्ची वीरता, आचरण की सभ्यता*) अपनी **ओजस्वी भाषा** और **भावुकता** के कारण हिंदी साहित्य में बेजोड़ हैं।

3. छायावादोत्तर काल (1920 ईस्वी के बाद): स्वर्ण युग और ललित निबंध का विकास

इस काल को 'आचार्य रामचंद्र शुक्ल युग' या 'शुक्ल युग' भी कहा जाता है, जो हिंदी निबंध का **स्वर्ण युग** सिद्ध हुआ।

आचार्य रामचंद्र शुक्ल और 'शुक्ल युग' (1920-1940)

आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने हिंदी निबंध को **चरम वैचारिकता, मनोवैज्ञानिक गहराई और शुद्ध दार्शनिक आधार** प्रदान किया।

शुक्ल जी के निबंधों की विशेषताएँ:

1. **मनोवैज्ञानिक विश्लेषण:** उन्होंने भाव और मनोविकारों पर निबंध लिखकर उन्हें मनोवैज्ञानिक और दार्शनिक आधार दिया। (जैसे: क्रोध, श्रद्धा और भक्ति, लोभ और प्रीति)।
2. **गहन चिंतन और गंभीर शैली:** उनकी शैली गंभीर, सुगठित और सूत्र रूप में विचारों को प्रस्तुत करने वाली थी। वे अपने विचारों को अत्यंत तार्किक क्रमबद्धता के साथ रखते थे।
3. **निबंध का वर्गीकरण:** उन्होंने स्वयं निबंधों को दो श्रेणियों में बाँटा: **भावात्मक** (मनोविकारों पर) और **आलोचनात्मक** (काव्य और साहित्य पर)।
4. **निष्कर्ष:** उनका 'चिंतामणि' निबंध संग्रह हिंदी साहित्य की एक अमूल्य निधि है।

छायावादोत्तर काल में निबंध (शुक्लोत्तर/आधुनिक)

शुक्ल जी के बाद निबंध लेखन की दो मुख्य धाराएँ विकसित हुईं:

क. वैचारिक, आलोचनात्मक और दार्शनिक धारा:

- डॉ. संपूर्णानंद: दार्शनिक और गंभीर विषयों पर लेखन।
- डॉ. नगेंद्र: समीक्षात्मक और आलोचनात्मक निबंधों के लिए प्रसिद्ध।

ख. ललित निबंध (व्यक्ति-व्यंजक निबंध) की धारा:

यह धारा शुक्ल जी की गंभीरता के विपरीत सरसता, सहजता, व्यक्तिगत स्पर्श और सांस्कृतिक चिंतन को लेकर विकसित हुई।

- **आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी (1907-1979):** उन्हें ललित निबंध का प्रमुख उन्नायक माना जाता है। उनके निबंधों में संस्कृति, इतिहास, लोक-जीवन और गहन मानवीय संवेदना का संगम है। उनकी शैली सरस, प्रवाहपूर्ण और व्यंजनाप्रधान है।
- **प्रमुख निबंध:** कुटज, अशोक के फूल, नाखून क्यों बढ़ते हैं, देवदारु।

- **विद्यानिवास मिश्र (1926-2005):** उन्होंने ललित निबंध को नई ऊँचाई दी। उनके निबंधों में **लोक-संस्कृति, प्रकृति और परंपरा** का गहरा अनुराग मिलता है। उनकी भाषा में **संस्कृत की कोमलता** और लोक-जीवन की मिठास है।
- **प्रमुख निबंध:** *तुम चंदन हम पानी, मेरे राम का मुकुट भीग रहा है।*
- **कुबेर नाथ राय (1933-1996):** उनकी शैली में **विद्वत्ता और रसिकता** का मेल है। वे ललित निबंध में मिथकों, इतिहास और दर्शन का प्रयोग करते हैं।
- **प्रमुख निबंध:** *मरालगमन, रस आखेटका*

1.3.4 आधुनिक युग में निबंध की प्रवृत्तियाँ

छायावादोत्तर काल से लेकर समकालीन हिंदी साहित्य तक निबंध विधा ने अनेक मोड़ लिए हैं। भूमंडलीकरण, डिजिटल क्रांति और बदलती सामाजिक-राजनीतिक परिस्थितियों ने निबंध के विषयों और शैलियों को प्रभावित किया है।

1. ललित निबंध (व्यक्ति-व्यंजक निबंध) की निरंतरता

आधुनिक युग में भी **ललित निबंध** सबसे लोकप्रिय विधाओं में से एक है। यह अपनी **आत्मपरकता, सरसता और काव्यात्मकता** के कारण पाठकों को प्रिय है।

- **विशेषताएँ:** इसमें लेखक स्वयं केंद्र में होता है। विषयों का चुनाव प्रकृति, लोककथाओं, त्योहारों, और दैनंदिन जीवन से किया जाता है। इसकी शैली में गद्य और पद्य का समन्वय होता है।
- **प्रमुख नाम:** विवेकी राय, कृष्णबिहारी मिश्र।

2. वैचारिक एवं आलोचनात्मक निबंधों का विस्तार

आधुनिक निबंध में **विचारों की प्रधानता** पुनः स्थापित हुई है, विशेष रूप से साहित्य, समाज, संस्कृति और राजनीति के विश्लेषण में।



fuc/k vkj ukVd

- **आलोचनात्मक निबंध:** डॉ. नामवर सिंह ने आलोचना को निबंध का रूप दिया। उनके निबंधों में **मार्क्सवादी दृष्टिकोण** और साहित्य की समाजशास्त्रीय व्याख्या मिलती है। (जैसे: *वाद विवाद और संवाद*)
- **दार्शनिक और सैद्धांतिक निबंध:** निर्मल वर्मा, जैनेन्द्र कुमार और अज्ञेय ने आधुनिक मनुष्य की चिंता, आत्म-संघर्ष और अस्तित्ववादी दर्शन पर गंभीर वैचारिक निबंध लिखे।
 - **निर्मल वर्मा:** *कला का जोखिम* (संस्कृति और कला पर गंभीर विचार)।
 - **जैनेन्द्र कुमार:** *प्रस्तुत प्रश्न* (मनोवैज्ञानिक और दार्शनिक चिंतन)।
- **जनवादी एवं समसामयिक चिंतन:** समाज में दलित, स्त्री, आदिवासी और अल्पसंख्यक मुद्दों पर केंद्रित निबंधों का लेखन बढ़ा है, जो **जनवादी चेतना** और सामाजिक न्याय पर बल देते हैं।

3. व्यंग्य निबंध (Satirical Essays) की लोकप्रियता

समकालीन राजनीति, सामाजिक विसंगतियों, भ्रष्टाचार और पाखंड पर प्रहार करने के लिए **व्यंग्य निबंध** एक अत्यंत प्रभावी विधा बन गया है।

- **विशेषताएँ:** तीक्ष्णता, हास्य, और उद्देश्यपरक कटाक्ष। व्यंग्य के माध्यम से लेखक सीधे-सीधे आलोचना न करके **परदे के पीछे से** समाज की सच्चाई दिखाता है।
- **प्रमुख व्यंग्यकार:**
 - **हरिशंकर परसाई (1924-1995):** उन्हें आधुनिक हिंदी व्यंग्य निबंध का पुरोधा माना जाता है। उनकी रचनाओं में **गहरी सामाजिक संवेदना** और **तीखा राजनीतिक कटाक्ष** होता है। (जैसे: *विकलांग श्रद्धा का दौर*, *प्रेमचंद के फटे जूते*)।
 - **शरद जोशी:** दैनिक जीवन की विडंबनाओं और राजनीतिक प्रहसनों पर सरल और धारदार व्यंग्य के लिए प्रसिद्ध।

4. पत्रकारिता और रिपोर्टाज शैली का प्रभाव

वर्तमान युग **पत्रकारिता** और **मीडिया** का युग है। निबंधों पर भी इसका प्रभाव पड़ा है।



fuc/k vkj ukVd

- **रिपोर्ताज शैली:** निबंधों में तथ्यों की प्रस्तुति, आँखों देखी घटनाओं का विवरण और समसामयिक मुद्दों को केंद्र में रखने की प्रवृत्ति बढ़ी है।
- **व्यक्तिगत रिपोर्ट:** आज के निबंधकार किसी घटना, यात्रा या अनुभव को रिपोर्ट की तरह प्रस्तुत करते हैं, जिसमें व्यक्तिगत अनुभूति और तथ्य दोनों का मिश्रण होता है।

5. शैलियों का सम्मिश्रण (Fusion of Styles)

आधुनिक निबंधकार किसी एक शैली में बँधकर नहीं रह गए हैं।

- **संरचनात्मक प्रयोग:** निबंधों में डायरी, पत्र, संस्मरण और आलोचना के तत्वों का समन्वय देखा जा रहा है।
- **भाषा का लचीलापन:** भाषा में हिंदी के साथ-साथ अंग्रेजी के शब्दों का प्रयोग, युवाओं की भाषा और तकनीकी शब्दावली का प्रवेश हुआ है, जिससे निबंध अधिक समकालीन और प्रासंगिक बन गए हैं।

निष्कर्ष

हिंदी निबंध का उद्भव भारतेंदु युग में एक स्वच्छंद और अनौपचारिक विधा के रूप में हुआ, जिसका प्राथमिक उद्देश्य सामाजिक सुधार और राष्ट्रीय चेतना का प्रसार करना था। द्विवेदी युग में इसे शुद्धता, अनुशासन और वैचारिक गंभीरता मिली। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने इसे मनोवैज्ञानिक, दार्शनिक और आलोचनात्मक गहराई देकर 'स्वर्ण युग' की प्रतिष्ठा दिलाई।

आज का आधुनिक निबंध इन सभी शैलियों—ललित, वैचारिक, आलोचनात्मक, और व्यंग्यात्मक—का अद्भुत संगम है। ललित निबंध ने जीवन की रसमयता को बनाए रखा है, तो वैचारिक निबंधों ने गंभीर चिंतन को। हरिशंकर परसाई जैसे व्यंग्यकारों ने आधुनिक विसंगतियों पर प्रहार करके निबंध को समाज के लिए एक आवश्यक हथियार बना दिया है। हिंदी निबंध, गद्य की एक सबसे अधिक जीवंत, परिवर्तनशील और समर्थ विधा के रूप में अपना विकास यात्रा जारी रखे हुए है।

इकाई 1.4: हिंदी निबंध की प्रमुख धाराएँ



fuc/k vkj ukVd

उद्देश्य:

- विभिन्न प्रकार के निबंधों को समझना
- प्रत्येक धारा की विशेषताओं का अध्ययन
- प्रमुख निबंधकारों का योगदान जानना

विषय:

1.4.1 विचारात्मक निबंध

- सामाजिक, दार्शनिक, सांस्कृतिक विचार

1.4.2 आलोचनात्मक निबंध

- साहित्यिक समीक्षा और मूल्यांकन

1.4.3 व्यंग्यात्मक निबंध

- हास्य, व्यंग्य और समाज की विडंबनाएँ

1.4.4 व्यक्तित्वात्मक निबंध

- व्यक्तित्व का आत्मीय चित्रण

1.4.5 संस्मरणात्मक निबंध

- स्मृति, अनुभव और आत्मकथ्य

इकाई 1.4: निबंधों के प्रकार और उनके साहित्यिक आयाम

निबंध साहित्य का वह क्षेत्र है जिसमें लेखक अपने विचारों, अनुभवों, दृष्टिकोण और सामाजिक-सांस्कृतिक प्रतिबिंबों को स्वतंत्र शैली में प्रस्तुत करता है। निबंध लेखन न केवल लेखकीय प्रतिभा का परिचायक है, बल्कि यह समाज और संस्कृति के विश्लेषण का एक प्रभावशाली माध्यम भी है। निबंधों को विभिन्न प्रकारों में वर्गीकृत किया जा सकता है, जिनमें विचारात्मक, आलोचनात्मक, व्यंग्यात्मक, व्यक्तित्वात्मक और संस्मरणात्मक निबंध प्रमुख हैं। प्रत्येक प्रकार की अपनी विशेषता, उद्देश्य और साहित्यिक योगदान है।

1.4.1 विचारात्मक निबंध

विचारात्मक निबंध वह निबंध है जिसमें लेखक किसी विशिष्ट विषय पर अपने दृष्टिकोण, तर्क और सामाजिक-सांस्कृतिक विचार प्रस्तुत करता है। यह निबंध केवल सूचना या विवरण तक सीमित नहीं रहता, बल्कि यह गहन चिंतन और मनन का परिणाम होता है। विचारात्मक निबंधों का उद्देश्य पाठक को सोचने पर मजबूर करना और उसके विचारों को प्रेरित करना होता है।

सामाजिक विचार:

विचारात्मक निबंध समाज के विविध पहलुओं जैसे शिक्षा, राजनीति, सामाजिक न्याय, मानवाधिकार, पर्यावरण और सामाजिक उत्तरदायित्व पर केंद्रित हो सकते हैं। उदाहरण के लिए, किसी लेखक द्वारा "भारत में शिक्षा की बदलती भूमिका" पर लिखा गया निबंध समाज में शिक्षा के महत्व, उसकी समस्याओं और सुधार के उपायों पर विचार प्रस्तुत करता है। ऐसे निबंध समाज को जागरूक बनाने और नीतिगत बदलाव के लिए प्रेरित करने का माध्यम बनते हैं।

दार्शनिक विचार:

विचारात्मक निबंध में दार्शनिक दृष्टिकोण का समावेश अक्सर गहन होता है। लेखक जीवन, मृत्यु, मानवता, न्याय और सत्य जैसी अवधारणाओं पर चिंतन करता है। उदाहरण

स्वरूप, किसी दार्शनिक निबंध में यह चर्चा हो सकती है कि “सत्य और नैतिकता का आधुनिक जीवन में महत्व क्या है?” इस प्रकार के निबंध पाठक के मन में आत्मचिंतन उत्पन्न करते हैं और जीवन के मूलभूत सवालों के प्रति सजग करते हैं।

सांस्कृतिक विचार:

विचारात्मक निबंध में सांस्कृतिक पहलुओं का वर्णन भी महत्वपूर्ण होता है। इसमें परंपरा, रीति-रिवाज, लोक कला, साहित्यिक धरोहर और सांस्कृतिक विविधता पर ध्यान दिया जाता है। उदाहरण स्वरूप, “भारतीय संस्कृति में त्योहारों की भूमिका” पर लिखा गया निबंध केवल त्योहारों का वर्णन नहीं करता, बल्कि उनके सामाजिक और सांस्कृतिक महत्व को भी उजागर करता है।

विचारात्मक निबंध की शैली अक्सर गंभीर, तार्किक और विश्लेषणात्मक होती है। लेखक तथ्यों, उद्धरणों और अनुभवों के माध्यम से अपने दृष्टिकोण को मजबूत बनाता है। इसका प्रमुख उद्देश्य पाठक को जानकारी देने के साथ-साथ उसके विचारों में गहराई उत्पन्न करना होता है।



चित्र 1.4: निबंध की प्रमुख धाराएँ

1.4.2 आलोचनात्मक निबंध

आलोचनात्मक निबंध साहित्य और कला के मूल्यांकन पर आधारित होते हैं। इसमें लेखक किसी कृति, लेखक या साहित्यिक प्रवृत्ति का विश्लेषण, समीक्षा और मूल्यांकन करता है। आलोचनात्मक निबंध केवल प्रशंसा या निंदा तक सीमित नहीं रहते; यह विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण के साथ पाठक को सृजनात्मक समझ प्रदान करते हैं।

साहित्यिक समीक्षा:

आलोचनात्मक निबंध का मुख्य उद्देश्य साहित्यिक कृतियों की समीक्षा करना होता है। उदाहरण स्वरूप, किसी कवि की रचनाओं पर निबंध लिखते समय लेखक उसकी शैली, विषय-वस्तु, भाषा और भावाभिव्यक्ति का मूल्यांकन करता है। ऐसा निबंध पाठक को यह समझने में मदद करता है कि किसी साहित्यिक कृति का समाज, संस्कृति और व्यक्ति पर क्या प्रभाव पड़ता है।

मूल्यांकन:

आलोचनात्मक निबंध में मूल्यांकन का पहलू बहुत महत्वपूर्ण होता है। लेखक यह तय करता है कि किसी कृति की ताकत और कमजोरी क्या है। उदाहरण के लिए, किसी उपन्यास पर लिखा आलोचनात्मक निबंध यह स्पष्ट कर सकता है कि कथानक की संरचना संतुलित है या नहीं, पात्रों का चित्रण प्रभावशाली है या नहीं, और लेखक का संदेश स्पष्ट रूप से पाठक तक पहुँचता है या नहीं।

साहित्यिक दृष्टिकोण:

आलोचनात्मक निबंध लेखक के व्यक्तिगत दृष्टिकोण और अनुभव पर भी आधारित हो सकते हैं। लेखक न केवल किसी कृति को मूल्यांकन करता है, बल्कि उसमें समाज, संस्कृति और मानव मनोविज्ञान के पहलुओं को भी उजागर करता है। उदाहरण स्वरूप, किसी नाटक या कहानी की समीक्षा करते समय लेखक यह दिखा सकता है कि कृति में सामाजिक असमानता, नैतिक द्वंद्व या मानवीय संवेदनाओं का प्रतिनिधित्व कैसे किया गया है।



fuc/k vkj ukVd

आलोचनात्मक निबंध शैलीगत रूप से विश्लेषणात्मक, तर्कसंगत और प्रमाण-आधारित होता है। इसका उद्देश्य केवल कृति की समीक्षा करना नहीं, बल्कि पाठक को साहित्य की गहन समझ और संवेदनशील दृष्टिकोण प्रदान करना है।

1.4.3 व्यंग्यात्मक निबंध

व्यंग्यात्मक निबंध हास्य और व्यंग्य के माध्यम से समाज की विडंबनाओं, अव्यवस्थाओं और मानवीय कमजोरियों को उजागर करता है। यह निबंध शैलीगत रूप से रोचक, तीव्र और कभी-कभी कटाक्षपूर्ण होता है। व्यंग्यात्मक निबंध का उद्देश्य पाठक का मनोरंजन करने के साथ-साथ उसे सोचने पर मजबूर करना होता है।

हास्य:

व्यंग्यात्मक निबंध में हास्य का उपयोग सामाजिक और व्यक्तिगत त्रुटियों को उजागर करने के लिए किया जाता है। उदाहरण के लिए, किसी निबंध में लेखक आधुनिक जीवनशैली, शहरी परिवहन, या प्रशासनिक बाधाओं पर हास्यपूर्वक टिप्पणी कर सकता है। हास्य का प्रयोग पाठक को विषय के प्रति सजग करता है और गंभीर मुद्दों को हल्के-फुल्के अंदाज में प्रस्तुत करता है।

व्यंग्य:

व्यंग्य किसी विशेष सामाजिक समस्या, राजनीतिक स्थिति या सांस्कृतिक परंपरा की आलोचना करने का एक प्रभावी माध्यम है। उदाहरण स्वरूप, किसी निबंध में लेखक यह दिखा सकता है कि कैसे समाज में अंधानुकरण, भ्रष्टाचार या दिखावटी प्रथाएँ लोगों के व्यवहार और सोच को प्रभावित करती हैं। व्यंग्य के माध्यम से लेखक पाठक के मन में परिवर्तन और सुधार की आवश्यकता की चेतना उत्पन्न करता है।

सामाजिक विडंबनाएँ:

व्यंग्यात्मक निबंध समाज की विडंबनाओं को उजागर करने में सक्षम होता है। यह पाठक को सोचने पर मजबूर करता है कि समाज में सुधार की आवश्यकता क्यों है। उदाहरण के

लिए, “शहरी जीवन और समय की पाबंदी” जैसे विषय पर व्यंग्यात्मक निबंध समाज में समय प्रबंधन और आधुनिक जीवनशैली की विडंबनाओं को हास्यपूर्वक प्रस्तुत करता है।

व्यंग्यात्मक निबंध शैलीगत रूप से जीवंत, चुटीला और कभी-कभी तीखी टिप्पणियों से भरपूर होता है। इसका उद्देश्य पाठक को हंसाना ही नहीं, बल्कि समाज के दोषों और कमजोरियों पर ध्यान आकर्षित करना भी है।

1.4.4 व्यक्तित्वात्मक निबंध

व्यक्तित्वात्मक निबंध किसी व्यक्ति, उसके चरित्र, गुण, जीवनदर्शन और व्यक्तिगत अनुभवों का आत्मीय चित्रण प्रस्तुत करता है। इसमें लेखक न केवल बाहरी घटनाओं का वर्णन करता है, बल्कि व्यक्ति की आंतरिक मानसिक स्थिति, विचार और भावनाओं को भी उजागर करता है।

व्यक्तित्व का चित्रण:

व्यक्तित्वात्मक निबंध में किसी व्यक्ति का संपूर्ण चित्र प्रस्तुत किया जाता है। इसमें उसकी आदतें, विचारधारा, सामाजिक भूमिका और व्यक्तिगत संघर्ष शामिल होते हैं। उदाहरण स्वरूप, किसी महापुरुष या समाज सुधारक पर लिखा निबंध केवल उसकी उपलब्धियों का विवरण नहीं देता, बल्कि उसके संघर्ष, प्रेरणा और व्यक्तित्व के विशिष्ट पहलुओं को भी उजागर करता है।

आत्मीयता:

व्यक्तित्वात्मक निबंध में आत्मीयता का महत्वपूर्ण योगदान होता है। लेखक अपने व्यक्तिगत दृष्टिकोण और अनुभवों को शामिल करके पाठक के मन में निबंध के प्रति जुड़ाव उत्पन्न करता है। यह निबंध शैलीगत रूप से भावनात्मक, संवेदनशील और गहन होता है।

सामाजिक और सांस्कृतिक प्रतिबिंब:

व्यक्तित्वात्मक निबंध में व्यक्ति का सामाजिक और सांस्कृतिक वातावरण भी प्रस्तुत किया जाता है। उदाहरण स्वरूप, किसी स्वतंत्रता सेनानी पर निबंध उसकी व्यक्तिगत विशेषताओं के साथ-साथ उस समय की राजनीतिक और सामाजिक परिस्थितियों का भी चित्रण करता है।

व्यक्तित्वात्मक निबंध का उद्देश्य केवल व्यक्ति का वर्णन करना नहीं, बल्कि उसके जीवन और व्यक्तित्व के माध्यम से समाज और संस्कृति की गहन समझ प्रदान करना होता है।

1.4.5 संस्मरणात्मक निबंध

संस्मरणात्मक निबंध में लेखक अपने व्यक्तिगत अनुभवों, स्मृतियों और आत्मकथ्य को साझा करता है। यह निबंध शैलीगत रूप से व्यक्तिगत, भावनात्मक और जीवनपरक होता है। संस्मरणात्मक निबंध पाठक को लेखक के दृष्टिकोण, समय और परिवेश के साथ जोड़ता है।

स्मृति:

संस्मरणात्मक निबंध में लेखक अपनी स्मृतियों को सजीव रूप में प्रस्तुत करता है। उदाहरण स्वरूप, बचपन के अनुभव, विद्यालयीन जीवन या यात्रा के अनुभवों पर लिखा निबंध पाठक को उस समय और स्थान के वातावरण में ले जाता है।

अनुभव:

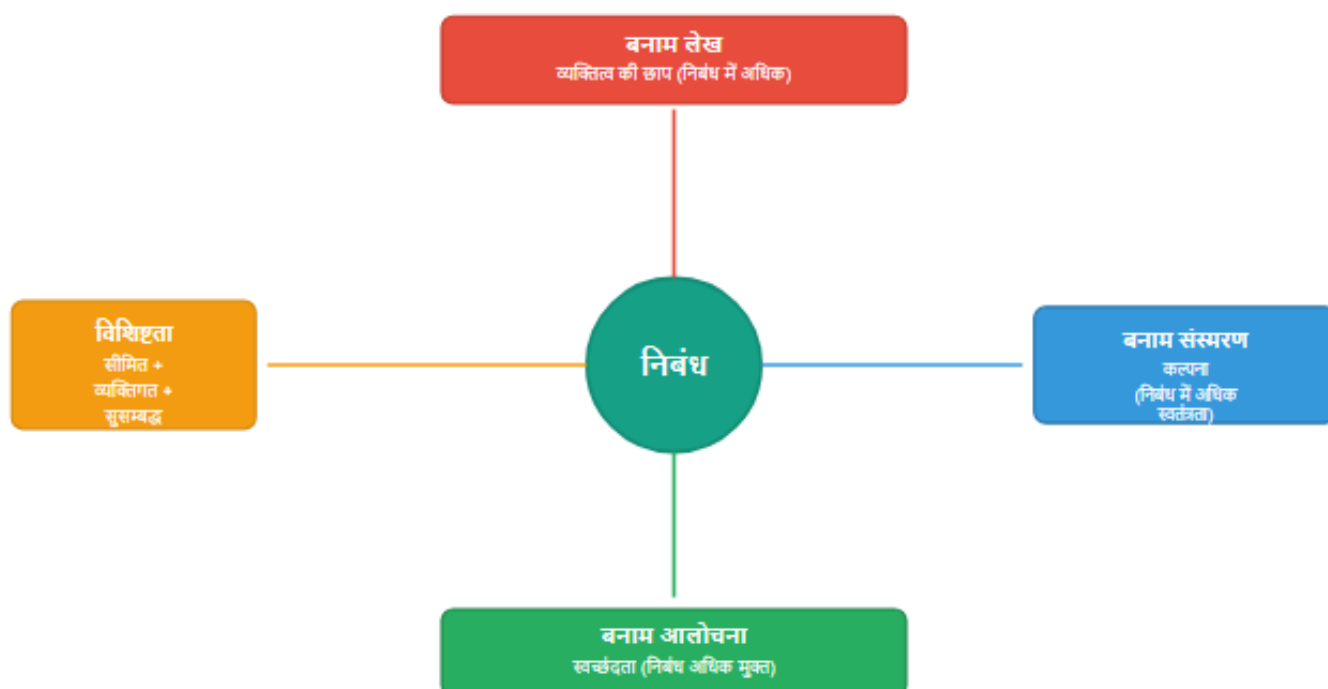
लेखक अपने जीवन के अनुभवों से प्राप्त ज्ञान, कठिनाइयाँ और सीख साझा करता है। यह निबंध शैलीगत रूप से प्रेरक और मनोवैज्ञानिक दृष्टि से महत्वपूर्ण होता है। उदाहरण के लिए, किसी जीवन संघर्ष पर आधारित निबंध पाठक को सहानुभूति और प्रेरणा देता है।

आत्मकथ्य:

संस्मरणात्मक निबंध लेखक की आत्मकथा का हिस्सा हो सकता है, जिसमें उसके विचार,

भावनाएँ, निर्णय और जीवनदर्शन शामिल होते हैं। यह निबंध पाठक को लेखक की मानसिक और भावनात्मक यात्रा से परिचित कराता है।

संस्मरणात्मक निबंध शैलीगत रूप से व्यक्तिगत, संवेदनशील और कथात्मक होता है। इसका उद्देश्य पाठक को लेखक के जीवन और अनुभवों के माध्यम से सोचने, सीखने और प्रेरित होने का अवसर प्रदान करना है।



चित्र 1.5: निबंध बनाम अन्य गद्य विधाएँ

निष्कर्ष

निबंध साहित्य का वह बहुमुखी क्षेत्र है जो लेखक को अपने विचार, अनुभव और दृष्टिकोण प्रस्तुत करने की स्वतंत्रता प्रदान करता है। विचारात्मक निबंध समाज, दर्शन और संस्कृति पर गहन चिंतन करता है; आलोचनात्मक निबंध साहित्य और कला का मूल्यांकन करता है; व्यंग्यात्मक निबंध हास्य और व्यंग्य के माध्यम से समाज की विडंबनाएँ उजागर करता है; व्यक्तित्वात्मक निबंध किसी व्यक्ति के चरित्र और जीवन का आत्मीय चित्रण करता है;



और संस्मरणात्मक निबंध लेखक के व्यक्तिगत अनुभवों और स्मृतियों का सजीव चित्र प्रस्तुत करता है।

fuc/k vkj ukVd

इन सभी प्रकार के निबंध न केवल साहित्यिक दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं, बल्कि समाज, संस्कृति और व्यक्तित्व के अध्ययन का भी एक प्रभावी माध्यम हैं। वे पाठक को सोचने, मूल्यांकन करने, हंसने, प्रेरित होने और जीवन के अनुभवों से जुड़ने का अवसर प्रदान करते हैं। निबंधों का यह विविध स्वरूप साहित्यिक अभिव्यक्ति की गहनता और व्यापकता को दर्शाता है।

1.5 स्व-मूल्यांकन प्रश्न

1.5.1 बहुविकल्पीय प्रश्न (MCQs):

Essay' शब्द की उत्पत्ति किस भाषा से हुई है?

क) लैटिन

ख) फ्रेंच (Essai - प्रयास)

ग) ग्रीक

घ) स्पेनिश

उत्तर: ख) फ्रेंच (Essai)

2. आधुनिक निबंध का जनक किसे माना जाता है?

क) बेकन

ख) मॉन्टेन (Michel de Montaigne)

ग) एडिसन

घ) स्टील

उत्तर: ख) मॉन्टेन



fuc/k vkj ukVd

3. हिंदी निबंध के जनक किसे कहा जाता है?

क) रामचंद्र शुक्ल

ख) भारतेन्दु हरिश्चंद्र

ग) महावीर प्रसाद द्विवेदी

घ) बालकृष्ण भट्ट

उत्तर: ख) भारतेन्दु हरिश्चंद्र

4. निबंध की सबसे प्रमुख विशेषता है:

क) व्यक्तित्व की छाप

ख) काल्पनिकता

ग) छंदोबद्धता

घ) नाटकीयता

उत्तर: क) व्यक्तित्व की छाप

5. "निबंध उस गद्य रचना को कहते हैं जिसमें एक सीमित आकार के भीतर किसी विषय का वर्णन या प्रतिपादन एक विशेष निजीपन, स्वच्छंदता, सजीवता और सुसम्बद्धता के साथ किया गया हो" – यह परिभाषा किसकी है?

क) द्विवेदी जी

ख) आचार्य रामचंद्र शुक्ल

ग) हजारीप्रसाद द्विवेदी

घ) बाबू गुलाबराय

उत्तर: ख) आचार्य रामचंद्र शुक्ल



fuc/k vkj ukVd

6. 'चिंतामणि' किसकी रचना है?

क) हजारीप्रसाद द्विवेदी

ख) रामचंद्र शुक्ल

ग) रामविलास शर्मा

घ) नंददुलारे वाजपेयी

उत्तर: ख) रामचंद्र शुक्ल

7. व्यंग्यात्मक निबंध के प्रमुख लेखक हैं:

क) शुक्ल जी

ख) हरिशंकर परसाई

ग) द्विवेदी जी

घ) प्रेमचंद

उत्तर: ख) हरिशंकर परसाई

8. भारतेंदु युग में निबंध की मुख्य प्रवृत्ति थी:

क) केवल मनोरंजन

ख) सामाजिक जागरण और राष्ट्रीय चेतना

ग) केवल साहित्यिक आलोचना

घ) केवल दार्शनिक विचार

उत्तर: ख) सामाजिक जागरण और राष्ट्रीय चेतना

9. द्विवेदी युग के प्रमुख निबंधकार थे:

क) भारतेंदु



fuc/k vkj ukVd

ख) महावीर प्रसाद द्विवेदी

ग) जयशंकर प्रसाद

घ) निराला

उत्तर: ख) महावीर प्रसाद द्विवेदी

10. 'अशोक के फूल' किसकी रचना है?

क) रामचंद्र शुक्ल

ख) हजारीप्रसाद द्विवेदी

ग) रामविलास शर्मा

घ) हरिशंकर परसाई

उत्तर: ख) हजारीप्रसाद द्विवेदी

1.5.2 लघु उत्तरीय प्रश्न (2-3 अंक):

1. निबंध की परिभाषा देते हुए इसके स्वरूप को संक्षेप में समझाइए।
2. निबंध और लेख में क्या अंतर है?
3. हिंदी निबंध के विकास में भारतेंदु युग का क्या योगदान है?
4. विचारात्मक निबंध की प्रमुख विशेषताएँ बताइए।
5. व्यंग्यात्मक निबंध का क्या उद्देश्य होता है?

1.5.3 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (5-10 अंक):

1. निबंध की परिभाषा देते हुए इसके स्वरूप, विशेषताओं और प्रमुख तत्वों का विस्तार से वर्णन कीजिए।
2. हिंदी निबंध के उद्भव और विकास का विस्तृत विवेचन कीजिए। विभिन्न युगों में निबंध की प्रवृत्तियों पर प्रकाश डालिए।



fuc/k vkj ukVd

3. हिंदी निबंध की प्रमुख धाराओं (विचारात्मक, आलोचनात्मक, व्यंग्यात्मक, व्यक्तित्वात्मक, संस्मरणात्मक) का विस्तार से वर्णन कीजिए।
4. निबंध को अन्य गद्य विधाओं से अलग करने वाली विशेषताओं का विस्तृत विश्लेषण कीजिए।
5. आधुनिक युग में हिंदी निबंध की प्रवृत्तियों और विशेषताओं पर विस्तृत निबंध लिखिए।



मॉड्यूल 2: प्रमुख निबंधकार एवं उनकी कृतियाँ

इकाई 2.1: आचार्य रामचंद्र शुक्ल

fuc/k vkj ukVd

उद्देश्य:

- शुक्ल जी के जीवन और साहित्य को समझना
- 'चिंतामणि' के चयनित निबंधों का अध्ययन
- शुक्ल जी की भाषा-शैली और चिंतनधारा का विश्लेषण

विषय:

2.1.1 ग्रंथ: चिंतामणि (चयनित निबंध)

- 'कविता क्या है' - काव्य की अवधारणा
- 'भारतीय संस्कृति और साहित्य' - सांस्कृतिक विश्लेषण

2.1.2 शुक्ल जी की भाषा, शैली और चिंतनधारा

- संस्कृतनिष्ठ खड़ी बोली, विचारात्मक शैली
- रसवाद और भाव विश्लेषण

इकाई 2.2: आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी

उद्देश्य:

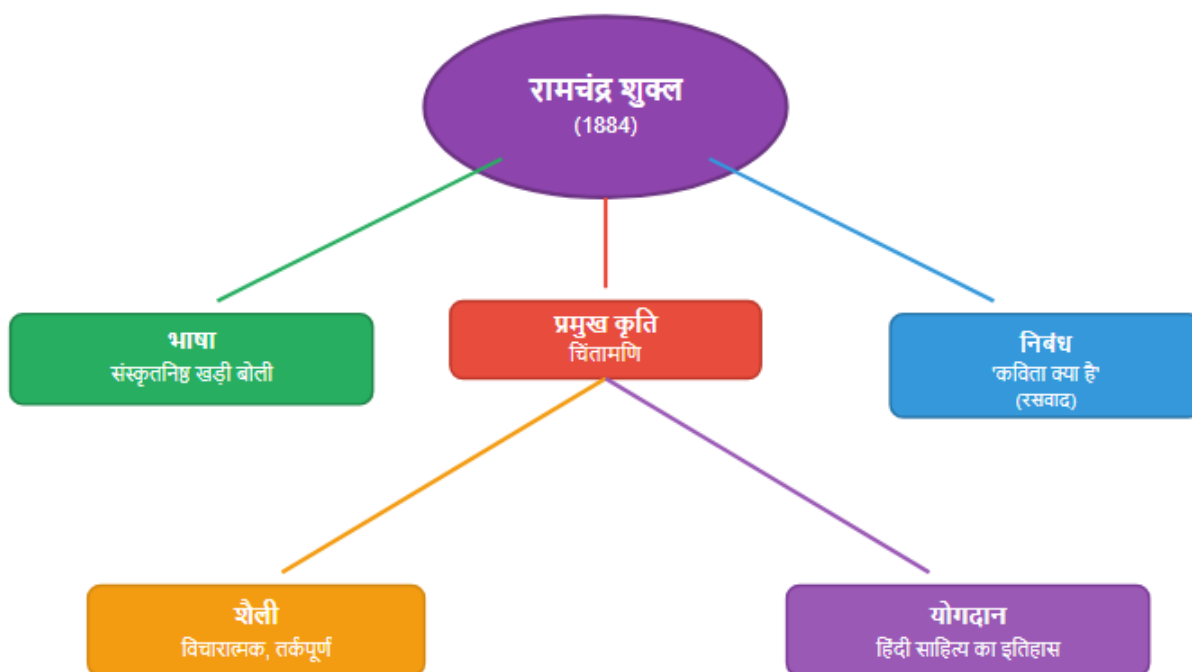
- द्विवेदी जी के व्यक्तित्व और कृतित्व को समझना
- प्रमुख निबंधों का विश्लेषण
- सांस्कृतिक दृष्टि और शैलीगत विशेषताओं का अध्ययन

विषय:

2.2.1 प्रमुख निबंध

- 'अशोक के फूल' - प्रकृति और संस्कृति का सामंजस्य

fuc/k vkj ukVd



चित्र 2.1: आचार्य रामचंद्र शुक्ल

- 'कुटज' - जीवन दर्शन और प्रतीकात्मकता

2.2.2 विचारधारा, सांस्कृतिक दृष्टि और शैलीगत विशेषताएँ

- मानवतावादी दृष्टिकोण, ललित निबंध शैली

इकाई 2.3: रामविलास शर्मा

उद्देश्य:

- शर्मा जी के साहित्यिक योगदान को समझना



fuc/k vkj ukVd

- आलोचनात्मक निबंधों का अध्ययन
- मार्क्सवादी दृष्टिकोण का विश्लेषण

विषय:

2.3.1 प्रमुख कृतियाँ

- 'भारतेन्दु युग' - साहित्यिक इतिहास
- 'तुलसीदास और भारतीय संस्कृति' - सांस्कृतिक आलोचना

2.3.2 आलोचनात्मक दृष्टिकोण और भाषा-शैली

- प्रगतिशील विचारधारा, तर्कपूर्ण शैली

इकाई 2.4: हरिशंकर परसाई

उद्देश्य:

- परसाई के व्यंग्य लेखन को समझना
- प्रमुख व्यंग्य निबंधों का विश्लेषण
- सामाजिक प्रासंगिकता का अध्ययन

विषय:

2.4.1 प्रमुख व्यंग्य निबंध

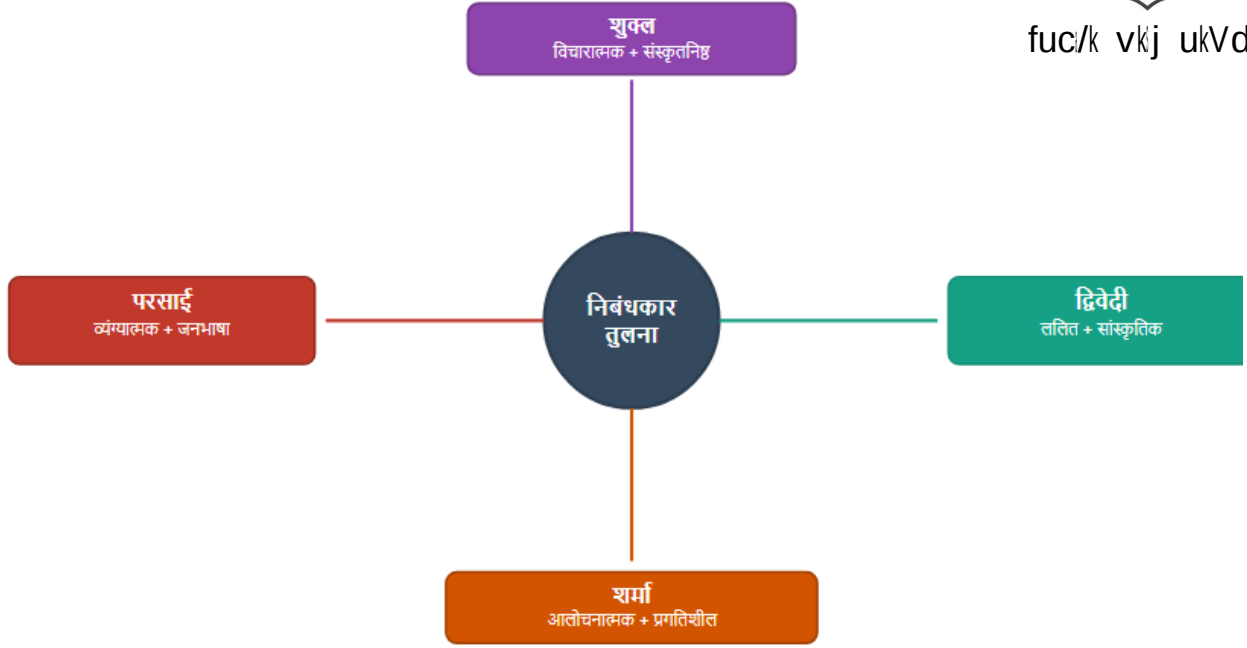
- 'सदाचार का ताबीज' - नैतिकता पर व्यंग्य
- 'वैष्णव की फिसलन' - धार्मिक पाखंड
- 'भोलाराम का जीव' - सामाजिक विडंबना

2.4.2 परसाई के व्यंग्य की सामाजिक प्रासंगिकता

- समाज की कुरीतियों पर कटाक्ष, जनसामान्य की भाषा



fuc/k vkj ukVd



2.5 स्व-मूल्यांकन प्रश्न

2.5.1 बहुविकल्पीय प्रश्न (MCQs):

हिंदी निबंध एवं व्यंग्य – प्रमुख लेखक और विशेषताएँ

1. आचार्य रामचंद्र शुक्ल का जन्म कब हुआ?

क) 1884

ख) 1894

ग) 1904

घ) 1914

उत्तर: क) 1884



fuc/k vkj ukVd

2. 'कविता क्या है' निबंध में शुक्ल जी ने किस सिद्धांत का प्रतिपादन किया?

क) अलंकार सिद्धांत

ख) रसवाद

ग) ध्वनि सिद्धांत

घ) वक्रोक्ति सिद्धांत

उत्तर: ख) रसवाद

3. 'कुटज' निबंध में किसका प्रतीकात्मक चित्रण है?

क) कमजोरी

ख) संघर्षशील जीवन और जिजीविषा

ग) भाग्यवाद

घ) पलायनवाद

उत्तर: ख) संघर्षशील जीवन और जिजीविषा

4. हजारीप्रसाद द्विवेदी की निबंध शैली है:

क) केवल विचारात्मक

ख) ललित और व्यक्तित्वात्मक

ग) केवल आलोचनात्मक

घ) केवल व्यंग्यात्मक

उत्तर: ख) ललित और व्यक्तित्वात्मक

5. रामविलास शर्मा किस विचारधारा से प्रभावित थे?

क) आदर्शवाद



fuc/k vkj ukVd

ख) प्रगतिवाद/मार्क्सवाद

ग) रहस्यवाद

घ) छायावाद

उत्तर: ख) प्रगतिवाद/मार्क्सवाद

6. हरिशंकर परसाई किस विधा के लिए प्रसिद्ध हैं?

क) कविता

ख) उपन्यास

ग) व्यंग्य

घ) नाटक

उत्तर: ग) व्यंग्य

7. 'सदाचार का ताबीज' में व्यंग्य किस पर है?

क) राजनीति

ख) दिखावटी नैतिकता और पाखंड

ग) शिक्षा व्यवस्था

घ) परिवार

उत्तर: ख) दिखावटी नैतिकता और पाखंड

8. शुक्ल जी की भाषा की विशेषता है:

क) उर्दू मिश्रित

ख) संस्कृतनिष्ठ खड़ी बोली

ग) बोलचाल की भाषा



fuc/k vkj ukVd

घ) ब्रज भाषा

उत्तर: ख) संस्कृतनिष्ठ खड़ी बोली

9. 'अशोक के फूल' निबंध संग्रह में प्रमुख है:

क) केवल साहित्यिक आलोचना

ख) प्रकृति, संस्कृति और जीवन दर्शन

ग) केवल राजनीतिक विचार

घ) केवल व्यंग्य

उत्तर: ख) प्रकृति, संस्कृति और जीवन दर्शन

10. परसाई के व्यंग्य की भाषा है:

क) संस्कृतनिष्ठ

ख) सरल, जनसामान्य की बोलचाल की

ग) अत्यधिक साहित्यिक

घ) जटिल और क्लिष्ट

उत्तर: ख) सरल, जनसामान्य की बोलचाल की

2.5.2 लघु उत्तरीय प्रश्न (2-3 अंक):

1. रामचंद्र शुक्ल के 'कविता क्या है' निबंध का मूल विचार संक्षेप में बताइए।
2. हजारीप्रसाद द्विवेदी की निबंध शैली की विशेषताएँ बताइए।
3. रामविलास शर्मा की आलोचना दृष्टि पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
4. हरिशंकर परसाई के व्यंग्य की सामाजिक प्रासंगिकता बताइए।
5. 'कुटज' निबंध की प्रतीकात्मकता को संक्षेप में समझाइए।



fuc/k vkj ukVd

2.5.3 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (5-10 अंक):

1. आचार्य रामचंद्र शुक्ल के निबंधों का विस्तृत परिचय देते हुए उनकी भाषा-शैली और चिंतनधारा का विश्लेषण कीजिए।
2. हजारीप्रसाद द्विवेदी के 'अशोक के फूल' और 'कुटज' निबंधों का विस्तृत विवेचन कीजिए।
3. रामविलास शर्मा के आलोचनात्मक निबंधों का परिचय देते हुए उनकी विचारधारा पर विस्तृत चर्चा कीजिए।
4. हरिशंकर परसाई के व्यंग्य निबंधों का विस्तार से विश्लेषण करते हुए उनकी सामाजिक प्रासंगिकता पर प्रकाश डालिए।
5. उपर्युक्त चारों निबंधकारों की शैलीगत विशेषताओं का तुलनात्मक अध्ययन कीजिए।

मॉड्यूल 3: नाटक (Drama)

इकाई 3.1: नाटक का स्वरूप और विकास

fuc/k vkj ukVd

उद्देश्य:

- नाटक की उत्पत्ति को समझना
- भारतीय नाट्य परंपरा का परिचय
- हिंदी नाटक के विकासक्रम का अध्ययन

विषय:

3.1.1 नाटक की उत्पत्ति

- नाटक का आदिम रूप - धार्मिक अनुष्ठान

3.1.2 भारतीय नाट्य परंपरा का आरंभ और विस्तार

- संस्कृत नाटक से हिंदी नाटक तक

3.1.3 हिंदी नाटक का प्रारंभिक रूप और विकासक्रम

- भारतेंदु से आधुनिक युग तक

इकाई 3.1: नाटक का स्वरूप और विकास

उद्देश्य

इस इकाई का मुख्य उद्देश्य **नाटक** (Drama) जैसी महत्वपूर्ण साहित्यिक विधा के **स्वरूप, उत्पत्ति और विकासक्रम** का गहन अध्ययन करना है। अध्ययन के उपरांत, विद्यार्थी निम्नलिखित को समझने में सक्षम होंगे:



fuc/k vkj ukVd

1. **नाटक की उत्पत्ति** से जुड़े विभिन्न सिद्धांतों और इसके **आदिम रूप** को समझना।
2. **भारतीय नाट्य परंपरा** की नींव, विशेष रूप से **संस्कृत नाटक** के महत्त्व, और लोक नाटकों के माध्यम से इसके विस्तार से परिचित होना।
3. **हिंदी नाटक** के **प्रारंभिक रूप** और उसके **भारतेंदु युग** से लेकर **आधुनिक युग** तक के क्रमबद्ध **विकासक्रम** का विश्लेषण करना।

3.1.1 नाटक की उत्पत्ति (नाटक का आदिम रूप - धार्मिक अनुष्ठान)

नाटक साहित्य की वह विधा है जो स्वयं में **दृश्य** और **श्रव्य** दोनों तत्वों का समावेश करती है। यह केवल पढ़ी या सुनी जाने वाली कथा नहीं है, बल्कि **रंगमंच** पर पात्रों, संवादों, अभिनय, वेशभूषा और संगीत के माध्यम से जीवन के यथार्थ या कल्पना को साकार करने वाली एक कला है। भारतीय परंपरा में, नाटक को "काव्येषु नाटकम् रम्यम्" (काव्यों में नाटक सबसे सुंदर है) कहकर सर्वोच्च स्थान दिया गया है।

नाटक की परिभाषा और स्वरूप

नाटक का मूल तत्त्व **अनुकरण** (Mimicry) है। यह मानव जीवन की विभिन्न अवस्थाओं, भावनाओं और क्रियाओं का अनुकरण है, जिसे नट या अभिनेता दर्शकों के समक्ष प्रस्तुत करता है।

आचार्य भरत मुनि ने अपने **नाट्यशास्त्र** में नाटक को "लोकवृत्त" (जनता का व्यवहार) कहा है और परिभाषित किया है कि नाटक ऐसा माध्यम है जो देवताओं, दानवों, राजाओं, गृहस्थों, ऋषियों और साधारण मनुष्यों के सुख-दुःख की भावनाओं को प्रदर्शित करता है।

नाटक के अनिवार्य तत्त्व:

1. **कथावस्तु**: कहानी या विषय-वस्तु।
2. **पात्र और चरित्र-चित्रण**: नाटक के किरदार और उनका व्यक्तित्व।
3. **संवाद**: पात्रों के बीच बातचीत, जो नाटक की आत्मा है।



fuc/k vkj ukVd

4. **अभिनय:** कायिक, वाचिक, आहार्य और सात्त्विक (शारीरिक, वाणी, वेशभूषा, भावनात्मक)।
5. **देशकाल और वातावरण:** पृष्ठभूमि और समय।
6. **उद्देश्य:** नाटक का केंद्रीय संदेश।

नाटक की उत्पत्ति के सिद्धांत

नाटक की उत्पत्ति को लेकर विभिन्न देशों और विद्वानों में अलग-अलग मत प्रचलित हैं। भारतीय संदर्भ में प्रमुख रूप से तीन सिद्धांत माने जाते हैं:

1. दैवीय उत्पत्ति का सिद्धांत (*The Divine Origin*)

भारतीय परंपरा में नाटक की उत्पत्ति को सीधे **ब्रह्मा** से जोड़ा गया है। नाट्यशास्त्र के अनुसार, जब सतयुग समाप्त हुआ और त्रेतायुग आरंभ हुआ, तो देवताओं ने मनोरंजन और उपदेश के लिए ब्रह्मा से पाँचवें वेद (नाट्यवेद) की रचना का आग्रह किया।

- **ब्रह्मा ने नाट्यवेद की रचना की:** उन्होंने चारों वेदों से तत्त्व लेकर नाट्यवेद बनाया—
 - पाठ्य (संवाद) ऋग्वेद से लिया।
 - अभिनय यजुर्वेद से लिया।
 - गीत सामवेद से लिया।
 - रस अथर्ववेद से लिया।
- यह सिद्धांत नाटक को केवल मनोरंजन नहीं, बल्कि **धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष** का साधक मानता है।

2. आदिम रूप - धार्मिक अनुष्ठान और लोक-उत्सव से उत्पत्ति (*Ritualistic Origin*)

यह सिद्धांत ऐतिहासिक और मानवशास्त्रीय दृष्टिकोण से सबसे अधिक मान्य है। इसके अनुसार, नाटक का जन्म **धार्मिक अनुष्ठानों, पूजा-विधियों और लोक-उत्सवों** के बीच हुआ।

- **आदिम अनुकरण:** प्राचीन आदिम समाजों में, मनुष्य अपनी आवश्यकताओं—शिकार की सफलता, अच्छी फसल, बीमारियों से मुक्ति—के लिए **जादुई और अनुकरणात्मक** (mimetic) क्रियाएँ करते थे। उदाहरण के लिए, सफल शिकार की कामना करते हुए शिकारी जानवरों का भेष बनाकर उनकी गति का अनुकरण करते थे। यह अनुकरण ही नाटक का बीज बना।
- **वैदिक कर्मकांड:** वैदिक युग में किए जाने वाले जटिल यज्ञ (कर्मकांड) भी नाट्य के प्रारंभिक रूप थे। इन यज्ञों में पात्रों (पुरोहितों) द्वारा विशिष्ट क्रियाएँ करना, संवाद (मंत्रोच्चार) बोलना और एक विशिष्ट **रंगमंचीय संरचना** का उपयोग करना शामिल था।
 - **संवाद सूक्त:** ऋग्वेद के कुछ सूक्त (जैसे उर्वशी-पुरूरवा संवाद, यम-यमी संवाद) संवादों की दृष्टि से प्रारंभिक नाट्य तत्त्व दर्शाते हैं।
- **लोक देवता और उत्सव:** विभिन्न लोक देवी-देवताओं को प्रसन्न करने के लिए किए जाने वाले **रास-लीला, रामलीला और जातरा** जैसे उत्सवों में अभिनय, वेशभूषा और गीत-नृत्य का समावेश होता था। ये आज भी भारतीय नाट्य का जीवंत आदिम रूप माने जाते हैं। **रास-लीला** (कृष्ण और गोपियों का नृत्य) में गायन, वादन और अभिनय की त्रिवेणी होती है।

निष्कर्षतः, नाटक का आदिम रूप धार्मिक और सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए किए गए अनुकरणात्मक कर्मकांडों और सामूहिक उत्सवों में निहित है, जिसे बाद में भरत मुनि ने कलात्मक और शास्त्रीय रूप प्रदान किया।

3.1.2 भारतीय नाट्य परंपरा का आरंभ और विस्तार

भारतीय नाट्य परंपरा विश्व की सबसे प्राचीन और समृद्ध परंपराओं में से एक है, जिसका सैद्धांतिक आधार **नाट्यशास्त्र** है और इसका शीर्ष **संस्कृत नाटक** है।

1. नाट्यशास्त्र: भारतीय नाट्य परंपरा की नींव

भारतीय नाट्यकला का आरंभ लगभग ईसा पूर्व दूसरी शताब्दी से ईसा की तीसरी शताब्दी के बीच कभी हुआ होगा, जिसका प्रामाणिक आधार **आचार्य भरत मुनि** द्वारा रचित **नाट्यशास्त्र** (लगभग 200 ईसा पूर्व से 200 ईस्वी) है।

- **पाँचवाँ वेद:** नाट्यशास्त्र को 'नाट्यवेद' भी कहा जाता है और यह कला, विज्ञान और शिल्प का महाकोश है।
- **रस सिद्धांत:** नाट्यशास्त्र का सबसे महत्वपूर्ण योगदान **रस सिद्धांत** है। भरत मुनि ने आठ रसों (**शृंगार, हास्य, करुण, रौद्र, वीर, भयानक, बीभत्स, अद्भुत**) का वर्णन किया और बताया कि **विभाव, अनुभाव और व्यभिचारी भाव** के संयोग से **रस** की निष्पत्ति होती है। यह रस ही नाटक का परम उद्देश्य और आत्मा है।
- **रूपक और उपरूपक:** नाट्यशास्त्र में नाटक के दस प्रकार (**रूपक**) और अन्य नाट्य भेदों (**उपरूपक**) का विस्तृत वर्णन किया गया है, जिनमें नाटक, प्रकरण, भाण, प्रहसन आदि प्रमुख हैं।

2. संस्कृत नाटक का स्वर्णिम युग

संस्कृत नाट्य परंपरा का विकास ईसा की प्रारंभिक शताब्दियों से लेकर 10वीं शताब्दी तक चला, जिसे भारतीय साहित्य का **स्वर्णिम युग** माना जाता है।

नाटककार	प्रमुख कृतियाँ	विशेषताएँ
भास (ईसा पूर्व 2री - 3री शताब्दी)	<i>स्वप्नवासवदत्तम्, चारुदत्त</i>	संस्कृत नाटक के आदि प्रवर्तकों में से एक। उनके नाटकों में मानवीय भावनाएँ और संघर्ष की प्रधानता है।
कालिदास (लगभग 4थी - 5वीं शताब्दी)	<i>अभिज्ञान शाकुंतलम्, विक्रमोर्वशीयम्, मालविकाग्निमित्रम्</i>	इन्हें संस्कृत नाटक का शिरोमणि माना जाता है। <i>अभिज्ञान शाकुंतलम्</i> में प्रकृति और प्रेम का अद्भुत समन्वय मिलता है। उनके नाटकों में शृंगार रस और प्रकृति प्रेम प्रमुख हैं।
शूद्रक (लगभग 5वीं शताब्दी)	<i>मृच्छकटिकम्</i> (मिट्टी की गाड़ी)	यह प्रकरण (सामाजिक नाटक) शैली का उत्कृष्ट उदाहरण है, जिसमें राजघरानों के बजाय साधारण मनुष्यों के जीवन और प्रेम को दर्शाया गया है। यह यथार्थवादी चित्रण

भवभूति (लगभग 8वीं शताब्दी)	<i>उत्तररामचरितम्, मालतीमाधवम्</i>	के लिए प्रसिद्ध है। ये करुण रस के प्रमुख नाटककार माने जाते हैं। <i>उत्तररामचरितम्</i> में सीता के परित्याग के बाद के राम के दुःख को मार्मिक रूप से चित्रित किया गया है।
--------------------------------------	------------------------------------	---

संस्कृत नाटक की मुख्य विशेषताएँ थीं—कथावस्तु प्रायः पौराणिक/ऐतिहासिक होती थी, पात्रों के लिए संस्कृत (उच्च वर्ग) और प्राकृत (निम्न वर्ग) भाषाओं का प्रयोग होता था, तथा सुखान्त होना अनिवार्य था (दुखान्त नाटकों का निषेध)।

3. संस्कृत नाटक से हिंदी नाटक तक: लोक नाट्य का सेतु

लगभग 10वीं शताब्दी के बाद मुस्लिम आक्रमणों और दरबारी patronage (संरक्षण) के अभाव के कारण संस्कृत नाट्य परंपरा का हास होने लगा, लेकिन नाट्य कला समाप्त नहीं हुई। वह **लोक नाट्य** (Folk Theatre) के रूप में जनता के बीच जीवित रही। लोक नाट्य ने संस्कृत और आधुनिक हिंदी नाटक के बीच एक सेतु (Bridge) का काम किया।

लोक नाट्य विधा	क्षेत्र	विशेषताएँ
रामलीला	उत्तर भारत	रामकथा का मंचन, संवाद और गायन पर आधारित, धार्मिक अनुष्ठान प्रधान।
रासलीला	ब्रज-वृंदावन	कृष्ण की बाल-लीलाओं और प्रेम कथाओं का गायन, नृत्य और अभिनय।
नौटंकी/ख्याल	उत्तर प्रदेश, राजस्थान	ओजस्वी गायन, वादन और चटकीली वेशभूषा वाली मनोरंजक नाट्य शैली।
जातरा	बंगाल, पूर्वी भारत	धार्मिक और सामाजिक कथाओं का खुले मंच पर प्रदर्शन।
भवई	गुजरात	लोक संगीत, नृत्य और हास्य पर केंद्रित नाट्य रूप।



fuc/k vkj ukVd

इन लोक नाट्य रूपों ने ही आगे चलकर आधुनिक **हिंदी नाटक** को **मंच, दर्शक** और **स्थानीय कथानक** प्रदान किए।

3.1.3 हिंदी नाटक का प्रारंभिक रूप और विकासक्रम

हिंदी नाटक के इतिहास को सामान्यतः तीन प्रमुख कालखंडों में विभाजित किया जाता है: भारतेंदु युग, प्रसाद युग और प्रसादोत्तर/आधुनिक युग।

1. हिंदी नाटक का प्रारंभिक रूप (भारतेंदु से पूर्व)

हिंदी नाटक का स्पष्ट और शास्त्रीय रूप भारतेंदु युग में आया, लेकिन उससे पहले भी कुछ कृतियाँ रची गईं जो हिंदी नाटक के **प्रारंभिक रूप** को दर्शाती हैं। इनमें से कई रचनाएँ काव्य या कथाप्रधान अधिक थीं और रंगमंचीय कम।

- **महाराज विश्वनाथ सिंह कृत आनंद रघुनंदन नाटक** (1700 ई. के आसपास): इसे कुछ विद्वान हिंदी का **प्रथम नाटक** मानते हैं। यह एक पद्यबद्ध नाटक है जिसमें रामकथा का वर्णन है।
- **गोपालचंद 'गिरिधरदास' कृत नहुष** (1859 ई.): भारतेंदु हरिश्चंद्र के पिता गोपालचंद ने इस नाटक की रचना की। भारतेंदु इसे ही हिंदी का प्रथम नाटक मानते थे। इसमें पौराणिक कथावस्तु है और कुछ नाट्य तत्वों का समावेश मिलता है।
- **राजा लक्ष्मण सिंह कृत शकुंतला** (1862 ई.): यह कालिदास के *अभिज्ञान शाकुंतलम्* का अत्यंत सरल और सुगम हिंदी अनुवाद था।

इन प्रारंभिक रचनाओं में नाट्यकला का अभाव था, लेकिन इन्होंने हिंदी में नाटक रचना की परंपरा को जन्म दिया।

2. भारतेंदु युग (1850-1885 ई.): हिंदी नाटक का प्रवर्तन

भारतेंदु हरिश्चंद्र (1850-1885) को **आधुनिक हिंदी नाटक का जनक** माना जाता है। उन्होंने न केवल स्वयं बड़ी संख्या में नाटकों की रचना की, बल्कि रंगकर्म (Theatre) को भी प्रोत्साहन दिया और एक नई साहित्यिक चेतना का सूत्रपात किया।

fuc/k vkj ukVd

भारतेंदु युग की विशेषताएँ:

- **नवजागरण और सुधार की चेतना:** भारतेंदु के नाटकों में **सामाजिक कुरीतियों** (जैसे बाल-विवाह, धार्मिक पाखंड) और **राजनीतिक चेतना** (जैसे अंग्रेजी राज का विरोध) प्रमुखता से दिखाई देती है।
- **मंचन की दृष्टि:** भारतेंदु ने पहली बार रंगमंच पर खेले जा सकने वाले नाटकों की रचना की।
- **अनुवाद और मौलिकता:** उन्होंने संस्कृत और बांग्ला नाटकों का अनुवाद किया, साथ ही मौलिक नाटकों की रचना भी की।

भारतेंदु के प्रमुख नाटक	विधा	विषय-वस्तु
विद्या सुंदर (1868)	अनुवाद	बांग्ला से अनुवाद, प्रेम-कथा।
वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति (1873)	प्रहसन	धार्मिक पाखंड और मांस भक्षण पर व्यंग्य।
सत्य हरिश्चंद्र (1875)	नाटक	पौराणिक कथा के माध्यम से सत्य के महत्त्व का चित्रण।
भारत दुर्दशा (1880)	नाट्य-रासक/लास्य रूपक	भारत की तत्कालीन दयनीय सामाजिक और राजनीतिक दशा का मार्मिक चित्रण। राष्ट्रीय चेतना का पहला स्पष्ट आह्वान।
अंधेर नगरी (1881)	प्रहसन	अव्यवस्थित शासन व्यवस्था पर तीखा व्यंग्य। आज भी अत्यंत लोकप्रिय।



fuc/k vkj ukVd

अन्य प्रमुख नाटककार: इस युग के अन्य नाटककारों में **लाला श्रीनिवास दास** (*रणधीर प्रेम मोहिनी* - हिंदी का पहला दुखान्त नाटक), **राधाकृष्ण दास** (*दुःखिनी बाला*) और **प्रताप नारायण मिश्र** (*कलि कौतुक*) शामिल हैं।

3. प्रसाद युग (1900-1937 ई.): गौरव और उत्कर्ष

जयशंकर प्रसाद (1889-1937) ने हिंदी नाटक को एक नई ऊँचाई प्रदान की। उनके नाटकों में **ऐतिहासिक गौरव, काव्यात्मकता, राष्ट्रीयता और दार्शनिक गहराई** का अद्भुत मिश्रण मिलता है।

प्रसाद युग की विशेषताएँ:

- **ऐतिहासिकता:** प्रसाद ने अपने नाटकों की कथावस्तु प्राचीन **भारतीय इतिहास** (मौर्य और गुप्त काल) से ली, जिसका उद्देश्य राष्ट्र में आत्मगौरव और राष्ट्रीयता की भावना जगाना था।
- **काव्यात्मकता:** उनके संवाद अत्यंत **ललित, दीर्घ और काव्यात्मक** हैं, जिसके कारण उनके नाटक **रंगमंच** की अपेक्षा **पठनीय** अधिक माने जाते हैं।
- **राष्ट्रीय चेतना:** *स्कंदगुप्त* और *चंद्रगुप्त* जैसे नाटकों के माध्यम से उन्होंने देश प्रेम और स्वतंत्रता के आदर्शों को स्थापित किया।
- **भावनात्मक संघर्ष:** उनके नाटकों में पात्रों का आंतरिक (emotional and psychological) संघर्ष प्रमुख होता है।

जयशंकर प्रसाद के प्रमुख नाटक	विधा	विषय-वस्तु
विशाख (1921)	ऐतिहासिक	बौद्धकालीन कथा।
अजातशत्रु (1922)	ऐतिहासिक	मगध, कोसल और कौशांबी के राजाओं के संघर्ष पर आधारित।
स्कंदगुप्त (1928)	ऐतिहासिक	गुप्तकालीन गौरव और आंतरिक संघर्ष का चित्रण।
चंद्रगुप्त (1931)	ऐतिहासिक	चाणक्य की कूटनीति, सिकंदर का आक्रमण और राष्ट्रीय एकता।
ध्रुवस्वामिनी (1933)	ऐतिहासिक	स्त्री-पुनर्विवाह और अधिकार का प्रश्न, आकार में छोटा और मंचन की दृष्टि से अधिक सफल।

अन्य प्रमुख नाटककार: हरिकृष्ण प्रेमी (*रक्षाबंधन, शिवा साधना*), लक्ष्मीनारायण मिश्र (*सिंदूर की होली* - यथार्थवादी सामाजिक नाटक)।

4. प्रसादोत्तर या आधुनिक युग (1937 ई. से वर्तमान तक)

प्रसाद के बाद हिंदी नाटक ने **काव्यात्मकता** और **ऐतिहासिकता** के आवरण को त्याग कर **यथार्थवाद** और **आधुनिक समस्याओं** की ओर रुख किया। इस काल में नाटक दो धाराओं में विकसित हुआ: **सामाजिक यथार्थवादी नाटक** और **नवीन रंगमंचीय नाटक/मोहन राकेश का उदय**।

अ. सामाजिक यथार्थवादी और समस्या नाटक

इस दौर में नाटक ने समकालीन समाज की जटिल समस्याओं और विसंगतियों को उठाया।

- **उपेंद्रनाथ 'अशक':** (*जय-पराजय, छठा बेटा*)। वे मध्यमवर्गीय जीवन की विडंबनाओं और यथार्थवादी चित्रण के लिए जाने जाते हैं।
- **डॉ. रामकुमार वर्मा:** (*चारुमित्रा, पृथ्वीराज की आँखें*)। ये मुख्य रूप से **एकांकी** (One-Act Play) लेखन के लिए प्रसिद्ध हैं। एकांकी विधा इसी युग में अत्यंत लोकप्रिय हुई।

ब. मोहन राकेश और आधुनिक नाट्य-चेतना

आधुनिक हिंदी नाटक को सही मायने में **मोहन राकेश** (1925-1972) ने स्थापित किया। उन्होंने हिंदी रंगमंच को 'प्रसादी दुर्ग' (काव्यात्मकता का किला) से बाहर निकालकर उसे समकालीन यथार्थ और मनुष्य की **अकेलेपन** की भावना से जोड़ा।

मोहन राकेश के नाटक:

- **आषाढ़ का एक दिन** (1958): कालिदास के जीवन पर आधारित, किंतु मूल रूप से **रचनात्मकता और प्रेम के द्वंद्व** का नाटक। यह हिंदी का पहला आधुनिक नाटक माना जाता है।
- **लहरों के राजहंस** (1963): बुद्ध के सौतेले भाई **नंद** के माध्यम से संशय और दुविधाग्रस्त आधुनिक मनुष्य की मनोदशा का चित्रण।
- **आधे-अधूरे** (1969): **मध्यमवर्गीय परिवार के विघटन** और स्त्री-पुरुष संबंधों के जटिल यथार्थ पर आधारित। यह आधुनिक नाट्य-शैली का सर्वोत्तम उदाहरण है।

स. साठोत्तरी और समकालीन नाटक (New Wave Theatre)

मोहन राकेश के बाद हिंदी नाटक में **प्रयोगधर्मिता** बढ़ी। नाटक की विषय-वस्तु समकालीन राजनीति, सामाजिक विसंगतियों और अस्तित्ववाद (Existentialism) पर केंद्रित हुई।

नाटककार	प्रमुख कृतियाँ	विषय-वस्तु और शैली
धर्मवीर भारती	<i>अंधा युग</i> (1954)	काव्य नाटक। महाभारत युद्ध के बाद की अंधकारमय स्थिति और आधुनिक मनुष्य की निराशा का चित्रण।
सुरेंद्र वर्मा	<i>सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक, आठवाँ सर्ग</i>	आधुनिक जीवन के जटिल संबंधों, स्त्री-पुरुष विमर्श और ऐतिहासिक पुनर्पाठ पर केंद्रित।
भीष्म साहनी	<i>हानूश, कबीरा खड़ा बाज़ार में</i>	सामाजिक प्रतिबद्धता और लोकजीवन के संघर्षों पर केंद्रित।
सर्वेश्वर दयाल सक्सेना	<i>बकरी</i> (1974)	राजनीतिक विसंगतियों और भ्रष्टाचार पर लिखा गया नुक्कड़ नाटक की शैली का व्यंग्यपूर्ण नाटक।
मुद्राराक्षस	<i>तिलचट्टा</i>	यौन कुंठाओं और मनुष्य की आंतरिक विकृतियों का मनोवैज्ञानिक चित्रण।

5. नुक्कड़ नाटक और वर्तमान परिदृश्य

- **नुक्कड़ नाटक (Street Play):** इस दौर में नाटक रंगमंच से उतरकर सड़कों पर आया। सफ़दर हाशमी और जन नाट्य मंच ने इसे सामाजिक जागरूकता और विरोध का सशक्त माध्यम बनाया। यह सस्ता, सहज और सीधे जनता से जुड़ने वाला नाट्य रूप है।
- **महिला नाट्यकार:** मृणाल पाण्डे, कुसुम कुमार और मंजुल भगत ने नारी विमर्श और स्त्री के स्वतंत्र अस्तित्व को केंद्रीय विषय बनाया।

निष्कर्ष

नाटक की उत्पत्ति जहाँ आदिम मानव के धार्मिक अनुष्ठानों और दैवीय प्रेरणा में निहित है, वहीं भारतीय नाट्य परंपरा ने भरत मुनि के नाट्यशास्त्र के रूप में विश्व को एक



fuc/k vkj ukVd

अद्भुत **रस सिद्धांत** प्रदान किया। संस्कृत के महान नाटककारों ने इस परंपरा को चरमोत्कर्ष पर पहुँचाया।

हिंदी नाटक का विकासक्रम **भारतेन्दु हरिश्चंद्र** के सामाजिक जागरण से शुरू हुआ, **जयशंकर प्रसाद** की काव्यात्मकता और राष्ट्रीय गौरव से गुज़रा, और अंततः **मोहन राकेश** के हाथों **आधुनिक यथार्थवाद** और **मनोवैज्ञानिक गहराई** प्राप्त की। आज का हिंदी नाटक विविध शैलियों—यथार्थवादी, प्रतीकात्मक, नुक्कड़ नाटक—को अपनाकर समकालीन चुनौतियों को प्रतिबिंबित कर रहा है, और लगातार नए आयामों की खोज में है। हिंदी नाटक ने अपनी यात्रा लोकवृत्त के अनुकरण से आरंभ करके आधुनिक मनुष्य के जटिल सत्य के उद्घाटन तक तय की है।



इकाई 3.2: नाटक की परिभाषा, तत्त्व और विशेषताएँ

उद्देश्य:

fuc/k vkj ukVd

- नाटक की परिभाषा को समझना
- नाट्य तत्वों का विस्तृत अध्ययन
- नाट्य-कला की विशिष्टताओं को जानना

विषय:

3.2.1 नाटक की परिभाषा

- विभिन्न विद्वानों की परिभाषाएँ

3.2.2 नाट्य तत्व

- कथानक, पात्र एवं चरित्र-चित्रण
- संवाद, देशकाल, मंचीयता
- रंगमंच और दर्शक

3.2.3 नाट्य-कला की विशिष्टताएँ

- दृश्यता, अभिनेयता, प्रभावशीलता

3.2 नाटक और नाट्य-कला का विस्तृत अध्ययन

3.2.1 नाटक की परिभाषा एवं स्वरूप

नाटक साहित्य की वह विशिष्ट और प्राचीनतम विधा है जो मानव सभ्यता के विकास के साथ-साथ विकसित हुई है। यह एक ऐसा साहित्यिक रूप है जो केवल पढ़ने के लिए नहीं, बल्कि मुख्य रूप से रंगमंच पर अभिनय के माध्यम से प्रस्तुत करने के लिए रचा जाता है। नाटक की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि यह

श्रव्य और दृश्य दोनों ही माध्यमों का अद्भुत समन्वय है। जहाँ अन्य साहित्यिक विधाएँ जैसे कविता, कहानी या उपन्यास केवल पढ़ी या सुनी जाती हैं, वहीं नाटक को देखा भी जाता है। यही कारण है कि संस्कृत साहित्य में नाटक को 'दृश्य-काव्य' की संज्ञा दी गई है, जो इसके मूल स्वभाव को सटीक रूप से व्यक्त करती है।

नाटक का मूल उद्देश्य जीवन की किसी कथा को पात्रों के माध्यम से संवाद और क्रिया द्वारा जीवंत करना होता है। यह विधा दर्शकों के सामने मानव-जीवन की विभिन्न स्थितियों, संघर्षों, भावनाओं और अनुभवों को इस प्रकार प्रस्तुत करती है कि दर्शक स्वयं को उन स्थितियों में पाते हैं। नाटक का यह गुण इसे अन्य विधाओं से अलग और विशिष्ट बनाता है। जब कोई पाठक उपन्यास पढ़ता है तो वह अपनी कल्पना से पात्रों और घटनाओं को मन में साकार करता है, परंतु नाटक में यह सब कुछ उसकी आँखों के सामने मूर्त रूप में घटित होता है। पात्र जीवित मनुष्यों के रूप में उसके सामने होते हैं, उनके संवाद वास्तविक ध्वनि में सुनाई देते हैं, और उनके हाव-भाव, चाल-ढाल सब कुछ प्रत्यक्ष दिखाई देता है।

नाटक की परिभाषा को समझने के लिए विभिन्न युगों और संस्कृतियों के विद्वानों, साहित्यकारों और नाट्यशास्त्रियों ने अपने-अपने दृष्टिकोण से इसे परिभाषित किया है। भारतीय नाट्यशास्त्र के आदि आचार्य भरत मुनि ने अपने महान ग्रंथ 'नाट्यशास्त्र' में नाटक को परिभाषित करते हुए कहा है कि नाटक उन अवस्थाओं या स्थितियों का अनुकरण है जो लोक-जीवन में घटित होती हैं। उनके अनुसार नाटक लोक-जीवन के भावों का अनुकीर्तन अर्थात् पुनरावृत्ति है। यह परिभाषा नाटक के मूल स्वभाव को स्पष्ट करती है कि नाटक वास्तविक जीवन की नकल या अनुकरण है। भरत मुनि का यह दृष्टिकोण अत्यंत व्यापक और गहरा है क्योंकि वे नाटक को केवल एक कला-रूप के रूप में नहीं, बल्कि समाज के दर्पण के रूप में देखते हैं। उनका मानना था कि नाटक में जो कुछ भी दिखाया जाता है, वह समाज में कहीं न कहीं घटित होता है या हो सकता है। नाटक इन्हीं स्थितियों को मंच पर पुनः प्रस्तुत करता है।

हिंदी साहित्य के महान आलोचक और साहित्यकार आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने नाटक को परिभाषित करते हुए कहा है कि नाटक साहित्य की वह विधा है जिसका मुख्य संबंध अभिनय से है, जिसमें पात्रों द्वारा संवादों के माध्यम से कथावस्तु को प्रत्यक्ष किया जाता है। आचार्य शुक्ल की यह परिभाषा नाटक के तकनीकी पक्ष को उजागर करती है। वे अभिनय को नाटक का केंद्रीय तत्व मानते हैं और इस बात पर बल देते हैं कि नाटक में कथा को सीधे वर्णन के माध्यम से नहीं, बल्कि पात्रों के संवादों और क्रियाओं के माध्यम से प्रस्तुत किया जाता है। यह परिभाषा नाटक और उपन्यास के बीच के मूलभूत अंतर को भी स्पष्ट करती है। उपन्यास में लेखक स्वयं कथा कहता है, घटनाओं का वर्णन करता है, पात्रों के मन की बात बताता है, परंतु नाटक में यह सब कुछ पात्र स्वयं अपने संवादों और क्रियाओं से व्यक्त करते हैं।

पश्चिमी साहित्य और दर्शनशास्त्र में नाटक की परिभाषा पर सबसे महत्वपूर्ण विचार यूनानी दार्शनिक अरस्तू ने प्रस्तुत किए हैं। उनके अनुसार नाटक कार्य का अनुकरण है, न कि मनुष्यों का। यह विशेष रूप से त्रासदी के संदर्भ में उनका प्रसिद्ध मत है। अरस्तू ने अपने ग्रंथ 'पोएटिक्स' में नाटक, विशेषकर त्रासदी की विस्तृत व्याख्या की है। उनका मानना था कि नाटक में केवल पात्रों का चित्रण करना पर्याप्त नहीं है, बल्कि उन कार्यों का चित्रण आवश्यक है जो पात्र करते हैं। कार्य की एकता पर उन्होंने विशेष बल दिया है। उनका कहना था कि नाटक में एक ही मुख्य कार्य या घटना होनी चाहिए जिसके चारों ओर पूरी कथा घूमे। अरस्तू ने नाटक में कार्य, काल और स्थान की एकता के सिद्धांत प्रतिपादित किए जो पश्चिमी नाटक-साहित्य के विकास में अत्यंत प्रभावशाली रहे।

हिंदी साहित्य के प्रसिद्ध विद्वान डॉ. श्यामसुंदर दास ने नाटक की परिभाषा देते हुए कहा है कि नाटक में पात्रों द्वारा रंगमंच पर जीवन की किसी घटना का अनुकरण इस प्रकार किया जाता है कि दर्शक उसे देखकर आनंद और उपदेश दोनों ही ग्रहण करें। यह परिभाषा नाटक के उद्देश्य को स्पष्ट करती है। डॉ. दास का मानना है कि नाटक केवल मनोरंजन के लिए नहीं होता, बल्कि इसका एक शैक्षिक और नैतिक उद्देश्य भी होता है। प्राचीन भारतीय नाट्यशास्त्र में भी नाटक को 'रंजन' और



fuc/k vkj ukVd

'उपदेश' दोनों का साधन माना गया है। संस्कृत नाटकों में 'लोकशिक्षा' का उद्देश्य सदैव विद्यमान रहा है। नाटक दर्शकों को आनंद देने के साथ-साथ उन्हें जीवन के मूल्यों, नैतिकता और धर्म की शिक्षा भी देता है।

इन सभी परिभाषाओं का सार यह है कि नाटक कला का वह रूप है जो अभिनय को केंद्र में रखकर कथा, संवाद और दृश्यता के माध्यम से दर्शकों के सम्मुख जीवन की अनुकृति प्रस्तुत करता है। नाटक में जीवन को यथार्थ रूप में नहीं, बल्कि कलात्मक रूप में प्रस्तुत किया जाता है। नाटककार जीवन के कच्चे माल को लेकर उसे अपनी कल्पना और कला-कौशल से संवारता है, संयोजित करता है और एक सुगठित रूप देता है। नाटक का यह कलात्मक रूपांतरण ही इसे साधारण नकल से ऊपर उठाकर श्रेष्ठ कला बना देता है। नाटक में जीवन का प्रतिबिंब तो होता है, परंतु यह प्रतिबिंब फोटोग्राफी की तरह यांत्रिक नहीं होता, बल्कि चित्रकला की तरह कलात्मक और सृजनात्मक होता है।

3.2.2 नाट्य तत्त्व: नाटक के मूलभूत घटक

एक सफल और प्रभावशाली नाटक की रचना और प्रस्तुति के लिए कुछ मौलिक तत्त्वों का होना अनिवार्य है। ये तत्त्व नाटक की आत्मा हैं और इनके बिना कोई भी रचना पूर्ण नाटक नहीं बन सकती। ये तत्त्व मिलकर नाटक को एक पूर्ण कलात्मक इकाई बनाते हैं और इसकी सफलता को सुनिश्चित करते हैं। नाट्यशास्त्रियों और साहित्यकारों ने नाटक के विभिन्न तत्त्वों की पहचान की है, जिनमें कथानक, पात्र और चरित्र-चित्रण, संवाद, देशकाल और वातावरण, मंचीयता, और रंगमंच तथा दर्शक प्रमुख हैं। इन सभी तत्त्वों का संतुलित और समन्वित प्रयोग ही एक उत्कृष्ट नाटक की रचना को संभव बनाता है।

कथानक: नाटक का आधारभूत ढाँचा

कथानक नाटक का सबसे महत्वपूर्ण और आधारभूत तत्त्व है। यह नाटक का मेरुदंड है जिस पर पूरी रचना टिकी होती है। कथानक से तात्पर्य नाटक की कहानी या घटनाओं के उस क्रम से है जिसे नाटककार एक विशेष उद्देश्य और योजना के साथ प्रस्तुत करता है। कथानक केवल घटनाओं का यादृच्छिक संग्रह नहीं होता, बल्कि यह घटनाओं का एक सुनियोजित, सुसंगत और उद्देश्यपूर्ण विन्यास होता है। नाटककार घटनाओं को इस प्रकार व्यवस्थित करता है कि वे एक निश्चित दिशा में बढ़ें और एक निश्चित परिणाम तक पहुँचें।

कथानक की संरचना को समझने के लिए इसके तीन मुख्य भागों को जानना आवश्यक है। पहला भाग है आरंभ या प्रस्तावना, जहाँ कथा शुरू होती है। इस भाग में नाटककार दर्शकों को नाटक के परिवेश से परिचित कराता है, मुख्य पात्रों का परिचय देता है, और उस स्थिति का निर्माण करता है जिससे आगे की कथा विकसित होगी। आरंभ में ही दर्शकों की जिज्ञासा जगानी होती है और उन्हें नाटक में रुचि लेने के लिए प्रेरित करना होता है। एक अच्छे आरंभ में भविष्य में घटने वाली घटनाओं के संकेत भी छिपे होते हैं, जो धीरे-धीरे प्रकट होते हैं। दूसरा भाग है मध्य या चरम उत्कर्ष, जिसे अंग्रेजी में 'क्लाइमैक्स' कहते हैं। यह कथानक का सबसे रोमांचक और महत्वपूर्ण भाग होता है। यहाँ पहुँचकर नाटक में संघर्ष अपने शिखर पर पहुँच जाता है, तनाव सबसे अधिक होता है, और दर्शक परिणाम जानने के लिए उत्सुक हो उठते हैं। चरम उत्कर्ष में ही नाटक का मुख्य मोड़ आता है जो आगे की घटनाओं की दिशा तय करता है। तीसरा और अंतिम भाग है समाप्ति या उपसंहार, जहाँ संघर्ष का समाधान या अवसान होता है। यहाँ सभी उलझी हुई गुथियाँ सुलझ जाती हैं, पात्रों का भाग्य निर्धारित हो जाता है, और कथा अपने तार्किक अंत तक पहुँचती है।

कथानक में संघर्ष का होना अत्यंत आवश्यक है। वास्तव में संघर्ष ही नाटक की आत्मा है। बिना संघर्ष के नाटक नीरस और गतिहीन हो जाता है। संघर्ष दो प्रकार

का हो सकता है। पहला है बाहरी संघर्ष, जो दो या दो से अधिक पात्रों के बीच, या पात्रों और परिस्थितियों के बीच होता है। उदाहरण के लिए, शेक्सपियर के नाटक 'हैमलेट' में हैमलेट और क्लॉडियस के बीच संघर्ष बाहरी संघर्ष का उदाहरण है। दूसरा है आंतरिक संघर्ष, जो पात्र के मन के भीतर होता है। यह उसके विचारों, भावनाओं, इच्छाओं और कर्तव्यों के बीच का द्वंद्व होता है। हैमलेट के मन में बदला लेने की इच्छा और नैतिक संकोच के बीच का द्वंद्व आंतरिक संघर्ष का श्रेष्ठ उदाहरण है। एक सशक्त कथानक में अक्सर दोनों प्रकार के संघर्ष साथ-साथ चलते हैं।

कथानक को सुगठित, संक्षिप्त और नाटकीय होना चाहिए। सुगठित कथानक वह है जिसमें सभी घटनाएँ एक-दूसरे से तार्किक रूप से जुड़ी हों और किसी भी अनावश्यक घटना को स्थान न दिया गया हो। प्रत्येक घटना का एक उद्देश्य होना चाहिए और वह कथा को आगे बढ़ाने में सहायक होनी चाहिए। संक्षिप्तता का अर्थ है कि कथानक में केवल उतनी ही सामग्री हो जितनी आवश्यक है। अनावश्यक विस्तार से कथानक बोझिल हो जाता है। नाटकीयता का अर्थ है कि कथानक में रोचकता, जिज्ञासा, आश्चर्य और उत्सुकता के तत्व हों। दर्शक लगातार यह जानने के लिए उत्सुक रहें कि आगे क्या होने वाला है।

पात्र एवं चरित्र-चित्रण: नाटक का जीवन

पात्र नाटक के वे जीवित प्राणी हैं जो कथा को संवाद और क्रिया के माध्यम से आगे बढ़ाते हैं। पात्रों के बिना नाटक की कल्पना असंभव है। वे ही कथानक को मूर्त रूप देते हैं और उसे जीवंत बनाते हैं। पात्रों का निर्माण और उनका चरित्र-चित्रण नाटककार की कुशलता का परिचायक होता है। चरित्र-चित्रण से तात्पर्य पात्रों के स्वभाव, मनोभाव, आदर्श, मूल्य और व्यवहार को चित्रित करने की कला से है। एक कुशल नाटककार अपने पात्रों को इतना सजीव, विश्वसनीय और उद्देश्यपूर्ण बनाता है कि दर्शक उन्हें वास्तविक मनुष्य मान लें।

नाटक में विभिन्न प्रकार के पात्र होते हैं। सबसे महत्वपूर्ण होता है नायक या प्रधान पात्र, जिसे अंग्रेजी में 'प्रोटैगनिस्ट' कहते हैं। नायक कथा का केंद्रीय पात्र होता है

और पूरी कथा उसी के चारों ओर घूमती है। नाटक की सफलता या असफलता काफी हद तक नायक के चरित्र-चित्रण पर निर्भर करती है। नायक सामान्यतः सकारात्मक गुणों से युक्त होता है, परंतु यह आवश्यक नहीं है कि वह पूर्णतः आदर्श हो। वास्तव में यदि नायक में कुछ मानवीय दुर्बलताएँ हों तो वह अधिक विश्वसनीय और जीवंत बन जाता है। शेक्सपियर के नायक इसके श्रेष्ठ उदाहरण हैं। उनके नायकों में महान गुणों के साथ-साथ कुछ दोष भी होते हैं जो उन्हें मानवीय बनाते हैं।

नायक के विपरीत प्रतिनायक या खलनायक होता है, जिसे अंग्रेजी में 'एंटीगनिस्ट' कहते हैं। यह वह पात्र है जो नायक के मार्ग में बाधा उत्पन्न करता है या उसके विपरीत होता है। प्रतिनायक का अस्तित्व नाटक में संघर्ष को जन्म देता है और कथा को गति प्रदान करता है। प्रतिनायक सदैव पूर्णतः बुरा या नकारात्मक पात्र नहीं होता। कभी-कभी वह अपनी मान्यताओं और उद्देश्यों में विश्वास रखने वाला व्यक्ति होता है जो नायक से टकराव की स्थिति में आ जाता है। इसके अतिरिक्त नाटक में गौण पात्र भी होते हैं जो मुख्य कथा को सहायता प्रदान करते हैं, उसे विभिन्न आयाम देते हैं और कभी-कभी हास्य या विश्राम के क्षण उत्पन्न करते हैं।

चरित्र-चित्रण की दृष्टि से पात्र तीन प्रकार के हो सकते हैं। पहले हैं सपाट या एकआयामी पात्र, जिनमें केवल एक ही गुण या विशेषता होती है और जो पूरे नाटक में अपरिवर्तित रहते हैं। ये पात्र सरल होते हैं और सरलता से पहचाने जा सकते हैं। दूसरे हैं गोल या बहुआयामी पात्र, जिनमें कई गुण और विशेषताएँ होती हैं। ये पात्र जटिल होते हैं और इनका व्यवहार विभिन्न परिस्थितियों में भिन्न हो सकता है। तीसरे हैं विकासशील पात्र, जो नाटक के दौरान अनुभवों से सीखते हैं और बदलते हैं। एक श्रेष्ठ नाटक में गोल और विकासशील पात्रों का होना वांछनीय है क्योंकि वे अधिक यथार्थवादी और रुचिकर होते हैं।

संवाद: नाटक का प्राण

संवाद नाटक का सबसे महत्वपूर्ण और विशिष्ट उपकरण है। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि संवाद ही नाटक का प्राण है। संवाद से तात्पर्य पात्रों के बीच होने वाली बातचीत से है। उपन्यास या कहानी में जहाँ लेखक स्वयं वर्णन करता है, वहीं नाटक में सब कुछ संवादों के माध्यम से व्यक्त होता है। संवाद ही पात्रों के चरित्र को उजागर करते हैं, कथानक को आगे बढ़ाते हैं, नाटक के उद्देश्य को स्पष्ट करते हैं, और दर्शकों को आवश्यक जानकारी प्रदान करते हैं।

संवाद के कई महत्वपूर्ण कार्य हैं। सबसे पहला कार्य है चरित्र-चित्रण। पात्र जो कहते हैं और कैसे कहते हैं, इससे उनके व्यक्तित्व, शिक्षा, सामाजिक स्थिति, मनोदशा और विचारों का पता चलता है। एक शिक्षित पात्र की भाषा और एक अशिक्षित पात्र की भाषा में स्वाभाविक अंतर होगा। एक राजा की भाषा और एक सेवक की भाषा में भेद होगा। दूसरा महत्वपूर्ण कार्य है कथानक को गति देना। संवादों के माध्यम से ही घटनाएँ प्रकट होती हैं और कथा आगे बढ़ती है। तीसरा कार्य है सूचना प्रदान करना। अतीत की घटनाओं, पात्रों के संबंधों, या ऐसी बातों की जानकारी जो मंच पर नहीं दिखाई जा सकती, संवादों के माध्यम से ही दी जाती है। चौथा कार्य है वातावरण का निर्माण। संवादों की प्रकृति और शैली से नाटक का मूड या वातावरण बनता है।

प्रभावशाली संवादों की कुछ विशेषताएँ होती हैं। सबसे पहली विशेषता है सरलता। संवाद ऐसे होने चाहिए कि दर्शक उन्हें आसानी से समझ सकें। नाटक एक बार में ही सुना और देखा जाता है, इसलिए जटिल और कठिन भाषा का प्रयोग उचित नहीं है। दूसरी विशेषता है संक्षिप्तता। संवाद लंबे और विस्तृत नहीं होने चाहिए। लंबे संवाद नाटक की गति को धीमा कर देते हैं और दर्शकों को बोरे करते हैं। तीसरी विशेषता है प्रभावशीलता। संवाद ऐसे होने चाहिए कि वे दर्शकों के मन पर गहरा प्रभाव छोड़ें। कुछ संवाद इतने प्रभावशाली होते हैं कि वे उद्धरण बन जाते हैं। चौथी विशेषता है पात्रानुकूलता। प्रत्येक पात्र के संवाद उसके व्यक्तित्व, स्थिति और

परिस्थिति के अनुरूप होने चाहिए। पाँचवीं और अत्यंत महत्वपूर्ण विशेषता है मंचीयता। संवाद ऐसे होने चाहिए कि उन्हें मंच पर बोला जा सके। वे अभिनय करने योग्य होने चाहिए।

देशकाल और वातावरण: नाटक का परिवेश

देशकाल और वातावरण से तात्पर्य उस समय, स्थान और सामाजिक परिवेश से है जिसमें नाटक की घटनाएँ घटित होती हैं। यह तत्त्व नाटक को एक ठोस और विश्वसनीय आधार प्रदान करता है। प्रत्येक नाटक किसी न किसी विशेष काल और स्थान में घटित होता है, चाहे वह स्पष्ट रूप से बताया गया हो या न हो। देशकाल का निर्धारण नाटक के सभी पहलुओं को प्रभावित करता है।

काल या समय के दो पहलू हैं। एक है ऐतिहासिक समय, अर्थात् वह युग या काल जिसमें नाटक की घटनाएँ घटित होती हैं। यह प्राचीन काल हो सकता है, मध्यकाल हो सकता है या आधुनिक काल हो सकता है। दूसरा है नाटकीय समय, अर्थात् नाटक की घटनाओं में लगने वाला समय। कुछ नाटकों की घटनाएँ कुछ घंटों में घटित होती हैं, कुछ में कुछ दिनों में, और कुछ में वर्षों का विस्तार हो सकता है। देश या स्थान से तात्पर्य भौगोलिक स्थान से है। यह किसी शहर, गाँव, महल, या किसी विशेष स्थान का हो सकता है।

देशकाल का महत्व इसलिए है कि यह पात्रों के व्यवहार, संवाद और विचारों को विश्वसनीयता प्रदान करता है। उदाहरण के लिए, यदि नाटक मध्यकालीन भारत में घटित होता है तो पात्रों की भाषा, वेशभूषा, रीति-रिवाज, सामाजिक मान्यताएँ सब उसी युग के अनुरूप होंगी। यदि पात्र आधुनिक भाषा बोलें या आधुनिक विचार रखें तो वह अविश्वसनीय लगेगा। इसी प्रकार यदि नाटक ग्रामीण परिवेश में घटित होता है तो पात्रों की भाषा, व्यवहार और समस्याएँ शहरी पात्रों से भिन्न होंगी।

वातावरण से तात्पर्य नाटक में सृजित भावनात्मक और मनोवैज्ञानिक माहौल से है। यह दर्शकों की भावनाओं को प्रभावित करता है और नाटक के मूड को निर्धारित



fuc/k vkj ukVd

करता है। वातावरण भय का हो सकता है, जैसे किसी रहस्य या भूतिया कहानी में। यह उल्लास का हो सकता है, जैसे किसी उत्सव या विवाह के दृश्य में। यह उदासी या करुणा का हो सकता है, जैसे किसी त्रासदी में। वातावरण के निर्माण में संवाद, संगीत, प्रकाश, और मंच-सज्जा सभी योगदान देते हैं।

मंचीयता: नाटक की व्यावहारिकता

मंचीयता या अभिनेयता नाटक की वह अनिवार्य विशेषता है जो इसे अन्य साहित्यिक विधाओं से अलग करती है। मंचीयता से तात्पर्य नाटक की उस क्षमता से है जिसके कारण उसे रंगमंच पर सफलतापूर्वक प्रस्तुत किया जा सके। एक नाटक कितना भी साहित्यिक दृष्टि से उत्कृष्ट क्यों न हो, यदि उसे मंच पर प्रस्तुत नहीं किया जा सकता तो वह अपूर्ण रहता है। नाटक को केवल पढ़ा नहीं जाता, बल्कि मुख्य रूप से देखा जाता है। इसलिए नाटककार को लिखते समय हमेशा इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि उसका नाटक मंच पर प्रस्तुत किया जा सकेगा या नहीं।

मंचीयता के कई पहलू हैं। पहला है पात्रों की क्रियाओं का मंच पर प्रदर्शन। नाटक में जो भी क्रियाएँ या घटनाएँ दिखाई जाती हैं, वे व्यावहारिक रूप से संभव होनी चाहिए। उदाहरण के लिए, यदि नाटक में युद्ध का दृश्य है तो उसे मंच की सीमाओं में प्रस्तुत करना संभव होना चाहिए। दूसरा है संवादों की बोलचाल योग्यता। संवाद ऐसे होने चाहिए कि अभिनेता उन्हें आसानी से बोल सकें। बहुत लंबे या जटिल संवाद अभिनय में कठिनाई उत्पन्न करते हैं। तीसरा है दृश्य-परिवर्तन। नाटक में दृश्यों का परिवर्तन इस प्रकार होना चाहिए कि उसे मंच पर व्यावहारिक रूप से किया जा सके। बहुत अधिक या बहुत तीव्र दृश्य-परिवर्तन कठिनाई उत्पन्न करते हैं।

मंचीयता के लिए नाटककार को समय और स्थान की सीमाओं का ध्यान रखना पड़ता है। एक नाटक का मंचन सामान्यतः दो से तीन घंटे में होता है, इसलिए कथा को इसी समयसीमा में समेटना होता है। मंच का स्थान भी सीमित होता है, इसलिए बहुत बड़े या जटिल दृश्यों से बचना चाहिए। इन सीमाओं के बावजूद नाटककार को अपनी कथा को पूर्णता और प्रभावशीलता के साथ प्रस्तुत करना होता है। यह

नाटककार की कुशलता का परिचायक है कि वह इन सीमाओं के भीतर रहते हुए भी एक सशक्त और प्रभावी नाटक की रचना करे।

रंगमंच और दर्शक: नाटक की पूर्णता

रंगमंच और दर्शक नाटक के दो अत्यंत महत्वपूर्ण तत्त्व हैं जो इसे पूर्णता प्रदान करते हैं। रंगमंच वह भौतिक स्थान है जहाँ नाटक का अभिनय होता है। यह केवल एक मंच नहीं है, बल्कि एक जटिल तकनीकी व्यवस्था है जिसमें मंच की रचना, सज्जा, प्रकाश व्यवस्था, ध्वनि व्यवस्था, पर्दे और अन्य तकनीकी साधन शामिल हैं। रंगमंच का स्वरूप और तकनीक नाटक की प्रस्तुति को बहुत प्रभावित करती है।

रंगमंच के विभिन्न प्रकार होते हैं। प्राचीन यूनानी रंगमंच खुले में बना होता था और अर्धवृत्ताकार होता था। भारतीय परंपरा में नाट्यगृह का विस्तृत विवरण मिलता है। आधुनिक युग में प्रोसीनियम मंच सबसे प्रचलित है जिसमें दर्शक एक ओर बैठते हैं और मंच सामने होता है। इसके अलावा एरेना मंच होता है जिसमें दर्शक चारों ओर बैठते हैं, और थ्रस्ट मंच होता है जो दर्शकों के बीच निकला हुआ होता है।

रंगमंच की साज-सज्जा नाटक के देशकाल और वातावरण को दृश्य रूप देती है। यदि नाटक किसी महल में घटित होता है तो मंच को महल की तरह सजाया जाता है। यदि यह जंगल में है तो जंगल का दृश्य बनाया जाता है। प्रकाश व्यवस्था अत्यंत महत्वपूर्ण होती है क्योंकि यह न केवल मंच को प्रकाशित करती है, बल्कि वातावरण का निर्माण भी करती है। उदास दृश्यों में मंद और ठंडी रोशनी, खुशी के दृश्यों में तेज और गर्म रोशनी का प्रयोग किया जाता है। ध्वनि व्यवस्था में संगीत और विभिन्न ध्वनि प्रभाव शामिल होते हैं जो नाटक को जीवंत बनाते हैं।

दर्शक नाटक को पूर्णता प्रदान करने वाला सबसे महत्वपूर्ण तत्त्व है। बिना दर्शकों के नाटक अधूरा है। नाटक एक सामूहिक अनुभव है जो केवल दर्शकों की उपस्थिति में ही संपन्न होता है। दर्शक केवल निष्क्रिय देखने वाले नहीं होते, बल्कि वे नाटक में सक्रिय भागीदार होते हैं। उनकी प्रतिक्रिया, चाहे वह तालियों के रूप में



fuc/k vkj ukVd

हो, हँसी के रूप में हो, या गहन चुप्पी के रूप में हो, नाटक का अभिन्न अंग बन जाती है। यह प्रतिक्रिया अभिनेताओं को प्रोत्साहित करती है और उनके अभिनय को प्रभावित करती है।

दर्शकों का तत्काल जुड़ाव नाटक की विशेषता है। जब दर्शक किसी पात्र के दुख में दुखी होते हैं, उसकी खुशी में खुश होते हैं, तो नाटक सफल होता है। नाटककार और निर्देशक दर्शकों की रुचि, समझ और संवेदनशीलता को ध्यान में रखकर नाटक की रचना और प्रस्तुति करते हैं। दर्शकों की विविधता के कारण नाटककार को ऐसी रचना करनी होती है जो विभिन्न स्तरों के दर्शकों को आकर्षित कर सके।

3.2.3 नाट्य-कला की विशिष्टताएँ

नाटक को साहित्य की अन्य विधाओं से अलग और विशिष्ट बनाने वाली कुछ मौलिक विशेषताएँ हैं। ये विशेषताएँ नाटक की पहचान हैं और इन्हीं के कारण नाटक एक अद्वितीय कला-रूप बन जाता है। इन विशेषताओं को समझना नाटक को समझने के लिए अत्यंत आवश्यक है।

दृश्यता: आँखों से अनुभव करने की कला

दृश्यता नाटक की सबसे प्रमुख और पहचानने योग्य विशेषता है। नाटक एक दृश्य-काव्य है, अर्थात् यह देखने की कविता है। जहाँ उपन्यास, कहानी या कविता को पढ़कर या सुनकर समझा जाता है, वहीं नाटक को देखा जाता है। दर्शक नाटक में घटनाओं को होते हुए प्रत्यक्ष रूप से देखते हैं। यह प्रत्यक्षता नाटक को अत्यंत शक्तिशाली और प्रभावशाली बनाती है।

दृश्यता की इस विशेषता के कई महत्वपूर्ण प्रभाव हैं। सबसे पहला प्रभाव है तीव्र प्रभावशीलता। जब हम किसी घटना के बारे में केवल पढ़ते हैं तो हमें कल्पना का सहारा लेना पड़ता है, परंतु जब हम उसी घटना को अपनी आँखों के सामने घटित होते देखते हैं तो उसका प्रभाव कहीं अधिक गहरा और तीव्र होता है। उदाहरण के

लिए, यदि हम किसी उपन्यास में किसी पात्र की मृत्यु के बारे में पढ़ें तो हमें दुख होगा, परंतु यदि हम नाटक में उस पात्र को मरते हुए देखें, अन्य पात्रों के दुख को देखें, तो हमारी भावनाएँ कहीं अधिक प्रबल होंगी।

दूसरा महत्वपूर्ण प्रभाव है संवाद और क्रिया का समन्वय। नाटक में हम केवल पात्रों के संवाद नहीं सुनते, बल्कि उनके हाव-भाव, चाल-ढाल, शारीरिक भाषा भी देखते हैं। कभी-कभी एक पात्र जो कह रहा है और उसका शरीर जो दिखा रहा है, दोनों में अंतर हो सकता है। यह अंतर अतिरिक्त अर्थ और गहराई प्रदान करता है। उदाहरण के लिए, यदि कोई पात्र मुँह से कुछ और कह रहा है परंतु उसका चेहरा कुछ और व्यक्त कर रहा है, तो दर्शक उसकी वास्तविक भावनाओं को समझ सकते हैं।

तीसरा प्रभाव है सौंदर्यात्मक अनुभव। नाटक में दृश्य सौंदर्य का विशेष महत्व है। मंच की सज्जा, पात्रों की वेशभूषा, प्रकाश व्यवस्था, रंगों का प्रयोग, ये सब मिलकर एक दृश्य सौंदर्य की सृष्टि करते हैं जो दर्शकों को आनंदित करता है। एक सुंदर दृश्य दर्शकों के मन पर गहरी छाप छोड़ता है। इस प्रकार दृश्यता नाटक को केवल साहित्यिक अनुभव नहीं, बल्कि एक संपूर्ण कलात्मक अनुभव बना देती है।

अभिनेयता: जीवन का साकार रूप

अभिनेयता या मंचीयता नाटक का मूलभूत तत्व है। नाटक की रचना ही इस उद्देश्य से होती है कि उसे मंच पर अभिनीत किया जाए। यह विशेषता नाटक को सभी अन्य साहित्यिक विधाओं से मूलभूत रूप से अलग करती है। उपन्यास या कहानी को पढ़ा जाता है, परंतु नाटक को खेला जाता है, अभिनीत किया जाता है। अभिनय नाटक की आत्मा है।

अभिनेयता की यह विशेषता नाटक की रचना पर कई प्रकार के प्रभाव डालती है। सबसे महत्वपूर्ण प्रभाव है समय और स्थान की सीमाएँ। नाटककार को इस बात का ध्यान रखना होता है कि उसके नाटक का मंचन कुछ घंटों में किया जा सके।



fuc/k vkj ukVd

इसलिए उसे घटनाओं का चयन सावधानीपूर्वक करना होता है। वह केवल उन्हीं घटनाओं को शामिल करता है जो कथा के लिए आवश्यक हैं। इसी प्रकार मंच की स्थानिक सीमा के कारण नाटककार को दृश्यों का चयन सोच-समझकर करना होता है। वह ऐसे दृश्य नहीं रख सकता जिन्हें मंच पर प्रस्तुत करना असंभव हो।

दूसरा महत्वपूर्ण प्रभाव है संवादों की प्रकृति। नाटक के संवाद ऐसे होने चाहिए कि उन्हें बोला जा सके। वे बोलचाल की भाषा में होने चाहिए, न कि अत्यधिक साहित्यिक या जटिल भाषा में। संवाद छोटे और प्रभावशाली होने चाहिए। लंबे और विस्तृत संवाद मंच पर उबाऊ लगते हैं। इसी प्रकार संवादों में क्रियाशीलता होनी चाहिए। केवल बातचीत करते रहने से नाटक नीरस हो जाता है। संवादों के साथ-साथ क्रिया भी होनी चाहिए।

तीसरा प्रभाव है चरित्र-चित्रण की विधि। नाटक में पात्रों के मन की बात को सीधे नहीं बताया जा सकता। उपन्यास में लेखक पात्र के मन में क्या चल रहा है, यह बता सकता है, परंतु नाटक में यह संभव नहीं है। नाटक में पात्र के विचार और भावनाएँ उसके संवादों, क्रियाओं और हाव-भाव से ही व्यक्त होनी चाहिए। इसके लिए नाटककार को बड़ी कुशलता की आवश्यकता होती है। वह एकालाप या स्वगत कथन का प्रयोग करता है जिसमें पात्र अकेले में अपने मन की बात कहता है, परंतु यह तकनीक सीमित रूप से ही प्रयोग की जा सकती है।

अभिनेयता का एक और महत्वपूर्ण पहलू है अभिनेता की भूमिका। अभिनेता नाटककार और दर्शक के बीच की कड़ी है। वह नाटककार के लिखे पात्र को जीवन प्रदान करता है। एक कुशल अभिनेता अपने अभिनय से एक साधारण नाटक को भी उत्कृष्ट बना सकता है, और एक अकुशल अभिनेता एक अच्छे नाटक को भी बिगाड़ सकता है। अभिनेता का कार्य केवल संवाद बोलना नहीं है, बल्कि पात्र को अपने भीतर जीना है। उसे पात्र के भाव, विचार, स्वभाव को समझना होता है और उसे अपनी अदायगी, हाव-भाव, स्वर के माध्यम से व्यक्त करना होता है।

प्रभावशीलता और जीवंतता: सामूहिक अनुभव की शक्ति

नाटक की तीसरी महत्वपूर्ण विशेषता है इसकी तीव्र प्रभावशीलता और जीवंतता। नाटक का प्रभाव तात्कालिक और सामूहिक होता है, जो इसे अन्य कला-रूपों से अलग करता है। जब कोई व्यक्ति उपन्यास पढ़ता है तो यह एक व्यक्तिगत और एकांतिक अनुभव होता है। वह अपने समय और गति से पढ़ सकता है, कहीं रुक सकता है, वापस जा सकता है। परंतु नाटक देखना एक सामूहिक अनुभव है जो एक निश्चित समय में घटित होता है।

सामूहिकता नाटक की विशेष शक्ति है। जब सैकड़ों लोग एक साथ एक नाटक देखते हैं तो वे एक सामूहिक भावनात्मक अनुभव से गुजरते हैं। यदि नाटक में कोई दुखद दृश्य है तो सभी दर्शक एक साथ दुखी होते हैं। यदि कोई हास्य दृश्य है तो सभी एक साथ हँसते हैं। यह सामूहिक प्रतिक्रिया अनुभव को और गहरा बना देती है। दर्शकों की सामूहिक ऊर्जा एक विशेष वातावरण की सृष्टि करती है जो प्रत्येक व्यक्तिगत दर्शक के अनुभव को प्रभावित करती है।

जीवंतता नाटक की दूसरी विशेष शक्ति है। नाटक में सब कुछ जीवंत और वर्तमान में घटित होता है। अभिनेता पात्रों को स्वयं में जीते हैं। वे केवल पात्रों का अभिनय नहीं करते, बल्कि उस क्षण के लिए वे पात्र बन जाते हैं। यह जीवंतता दर्शकों और कथा के बीच की दूरी को समाप्त कर देती है। दर्शक यह नहीं सोचते कि यह केवल एक कहानी है, बल्कि वे इसे वास्तविकता के रूप में अनुभव करते हैं। वे पात्रों के साथ हँसते हैं, रोते हैं, क्रोधित होते हैं, भयभीत होते हैं।

नाटक की प्रभावशीलता का एक और कारण है इसकी बहुआयामिता। नाटक केवल साहित्य नहीं है, बल्कि यह कई कलाओं का समन्वय है। इसमें साहित्य के साथ-साथ अभिनय कला, संगीत कला, नृत्य कला, चित्रकला, प्रकाश कला, सभी का समावेश होता है। मंच की सजा में चित्रकला का प्रयोग होता है। पात्रों की वेशभूषा और रूप-सजा में कला का प्रयोग होता है। संगीत और ध्वनि प्रभाव वातावरण का निर्माण करते हैं। कभी-कभी नृत्य का भी प्रयोग किया जाता है।

प्रकाश व्यवस्था एक अलग कला है जो दृश्यों को अर्थ और गहराई प्रदान करती है। इन सभी कलाओं का संयुक्त प्रभाव नाटक को अत्यंत शक्तिशाली और प्रभावशाली बना देता है।

नाटक की प्रभावशीलता का एक महत्वपूर्ण पहलू है इसकी तात्कालिकता। नाटक को रोककर फिर से शुरू नहीं किया जा सकता। यह एक निरंतर प्रवाह में चलता है। यह तात्कालिकता एक विशेष तनाव और उत्सुकता उत्पन्न करती है। दर्शक जानते हैं कि जो कुछ हो रहा है वह अभी हो रहा है और दुबारा नहीं होगा। यदि वे किसी क्षण को चूक गए तो वह हमेशा के लिए चला जाता है। इस भावना से दर्शकों में एकाग्रता बनी रहती है।

नाटक की एक और विशेषता है इसकी संवादात्मकता। हालाँकि दर्शक सीधे नाटक में भाग नहीं लेते, परंतु उनकी प्रतिक्रिया नाटक का अभिन्न अंग बन जाती है। दर्शकों की हँसी, तालियाँ, सन्नाटा, सभी अभिनेताओं को प्रभावित करते हैं। यह एक प्रकार का मौन संवाद है जो मंच और दर्शक-दीर्घा के बीच चलता रहता है। इस संवाद से नाटक जीवंत बनता है। एक ही नाटक अलग-अलग दर्शकों के साथ अलग-अलग अनुभव बन सकता है।

निष्कर्ष: नाटक का समग्र स्वरूप

नाटक साहित्य की सबसे प्राचीन, जटिल और जीवंत विधा है। यह मानव सभ्यता के आरंभ से ही विद्यमान है और प्रत्येक संस्कृति में किसी न किसी रूप में पाई जाती है। नाटक की लोकप्रियता और स्थायित्व इस तथ्य से सिद्ध होती है कि हजारों वर्ष पुराने नाटक आज भी प्रासंगिक हैं और मंचित किए जाते हैं। यूनान के सोफोक्लीज़ और यूरिपिडीज़ के नाटक, भारत के कालिदास और भवभूति के नाटक, आज भी दर्शकों को मंत्रमुग्ध कर देते हैं।

नाटक की यह कालजयिता इसलिए है क्योंकि नाटक मानव-जीवन के शाश्वत सत्यों को प्रस्तुत करता है। मनुष्य के आनंद और दुख, उसके संघर्ष और विजय, उसके



fuc/k vkj ukVd

प्रेम और घृणा, उसकी आकांक्षाएँ और निराशाएँ, ये सब नाटक के विषय हैं। ये विषय युगों से एक समान रहे हैं और इसलिए नाटक भी समय के साथ प्रासंगिक बना रहता है। जब हम आज शेक्सपियर का 'हैमलेट' देखते हैं तो हम उसमें अपने समय के प्रश्नों को देखते हैं। जब हम कालिदास का 'अभिज्ञानशाकुंतलम्' देखते हैं तो उसमें प्रेम, त्याग और पुनर्मिलन की शाश्वत कथा हमें आज भी उतनी ही प्रभावित करती है। नाटक का महत्व केवल मनोरंजन तक सीमित नहीं है। नाटक समाज का दर्पण है। यह समाज की समस्याओं, विसंगतियों और बुराइयों को उजागर करता है। यह समाज को चिंतन के लिए प्रेरित करता है। महान नाटककार अपने नाटकों के माध्यम से सामाजिक सुधार का कार्य करते हैं। वे दर्शकों को मानवीय मूल्यों, न्याय, सत्य और नैतिकता के प्रति सजग बनाते हैं। भारतीय नाट्यशास्त्र में नाटक को 'लोकशिक्षा' का माध्यम माना गया है। नाटक मनोरंजन के साथ-साथ शिक्षा भी देता है।

नाटक की रचना और प्रस्तुति एक जटिल और बहुआयामी कार्य है। इसमें नाटककार, निर्देशक, अभिनेता, मंच-सज्जाकार, प्रकाश-विशेषज्ञ, संगीतकार, सभी का सहयोग आवश्यक है। यह एक सामूहिक कला है जिसमें अनेक कलाकारों का योगदान मिलकर अंतिम उत्पाद बनता है। इसी कारण नाटक की सफलता या असफलता किसी एक व्यक्ति पर निर्भर नहीं करती, बल्कि पूरी टीम के समन्वित प्रयास पर निर्भर करती है।

आधुनिक युग में नाटक ने नए आयाम प्राप्त किए हैं। तकनीकी विकास ने मंच-प्रस्तुति के नए साधन उपलब्ध कराए हैं। प्रकाश और ध्वनि की आधुनिक तकनीक ने नाटक को अधिक प्रभावशाली बना दिया है। परंतु इन सभी विकासों के बावजूद नाटक का मूल तत्व अपरिवर्तित रहा है। आज भी नाटक का केंद्र मानव और उसकी कथा है। आज भी अभिनेता और दर्शक के बीच का वह जीवंत संबंध नाटक की आत्मा है।



fuc/k vkj ukVd

नाटक एक ऐसी कला-विधा है जो साहित्य और प्रदर्शन कला का अद्भुत मिश्रण है। यह केवल पढ़ने के लिए नहीं, बल्कि देखने और अनुभव करने के लिए है। इसमें शब्द और मौन, गति और स्थिरता, प्रकाश और छाया, सभी का अपना महत्व है। नाटक जीवन की संपूर्णता को रंगमंच की सीमित परिधि में प्रस्तुत करने का प्रयास है। यह असंभव को संभव बनाने की कला है। इसी कारण नाटक युगों से मनुष्य को आकर्षित करता रहा है और आगे भी करता रहेगा।

नाटक की विभिन्न परिभाषाओं, उसके तत्त्वों और विशेषताओं का अध्ययन करने से हमें इस विधा की गहराई और विविधता का बोध होता है। नाटक केवल एक साहित्यिक विधा नहीं है, बल्कि यह जीवन को समझने और अभिव्यक्त करने का एक माध्यम है। इसमें मानव-अनुभव की सभी छवियाँ समाहित हैं। इसलिए नाटक का अध्ययन केवल साहित्य का अध्ययन नहीं है, बल्कि मानव-जीवन और समाज का अध्ययन है। नाटक हमें यह सिखाता है कि जीवन एक रंगमंच है और हम सब इसमें अभिनेता हैं। इस रंगमंच पर हमारी भूमिका क्या है, यह प्रश्न प्रत्येक मनुष्य को अपने लिए तय करना होता है।

इकाई 3.3: संस्कृत, पाश्चात्य और हिंदी नाट्य परंपरा



fuc/k vkj ukVd

उद्देश्य:

- संस्कृत नाट्य परंपरा को समझना
- पाश्चात्य नाट्य सिद्धांतों का परिचय
- हिंदी नाटक पर विभिन्न परंपराओं के प्रभाव का अध्ययन

विषय:

3.3.1 संस्कृत नाट्य परंपरा

- भरतमुनि का नाट्यशास्त्र, रस सिद्धांत

3.3.2 पाश्चात्य नाट्य परंपरा

- अरस्तू का अनुकरण सिद्धांत, शेक्सपीयर

3.3.3 हिंदी नाटक पर प्रभाव और समन्वय

- परंपरागत और आधुनिक तत्वों का संयोजन

इकाई 3.3: संस्कृत, पाश्चात्य और हिंदी नाट्य परंपरा

प्रस्तावना

नाट्यकला मानव सभ्यता के आरंभ से ही अभिव्यक्ति, मनोरंजन और शिक्षा का एक सशक्त माध्यम रही है। यह साहित्य और प्रदर्शन का अद्भुत संगम है, जो समाज के अनुभवों, मूल्यों और संघर्षों को जीवंत करता है। विश्व में नाट्य की तीन प्रमुख धाराएँ हैं— भारतीय नाट्य परंपरा (विशेषकर **संस्कृत नाट्य परंपरा**), **पाश्चात्य नाट्य परंपरा**, और इन दोनों के समन्वय से जन्मी **हिंदी नाट्य परंपरा**।

इस इकाई का उद्देश्य इन तीनों परंपराओं के मूल सिद्धांतों को समझना, उनकी विशिष्टताओं को रेखांकित करना और यह देखना है कि किस प्रकार हिंदी नाटक ने इन दोनों विश्वदृष्टिकोणों से प्रेरणा लेकर अपनी स्वतंत्र पहचान स्थापित की। संस्कृत नाट्यशास्त्र ने 'रस' के माध्यम से आनंद की उदात्त अनुभूति को केंद्र में रखा, जबकि पाश्चात्य परंपरा ने 'अनुकरण' और 'विरेचन' पर बल देते हुए मानवीय संघर्ष और त्रासदी को प्रमुखता दी। हिंदी नाटक इन दोनों शैलियों के बीच एक रचनात्मक सेतु का कार्य करता है।

3.3.1 संस्कृत नाट्य परंपरा

संस्कृत नाट्य परंपरा का गौरवशाली इतिहास लगभग 200 ईसा पूर्व से 1000 ईस्वी तक फैला हुआ है। यह परंपरा मात्र मनोरंजन तक सीमित नहीं थी, बल्कि इसे 'पंचम वेद' (पाँचवा वेद) माना गया, जिसका उद्देश्य धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष—चारों पुरुषार्थों की सिद्धि में सहायक होना था।

भरतमुनि का नाट्यशास्त्र

संस्कृत नाट्यकला का आधारभूत, सबसे प्राचीन और प्रमाणिक ग्रंथ **भरतमुनि का नाट्यशास्त्र** है। यह ग्रंथ नाट्यकला, अभिनय, संगीत, नृत्य, अलंकार, रंगमंच निर्माण (प्रेक्षागृह) और नाट्य सिद्धांतों का एक encyclopedic (विश्वकोशीय) विवेचन प्रस्तुत करता है। इसमें 36 अध्याय हैं।

भरतमुनि के अनुसार, नाट्यकला का जन्म देवताओं की प्रार्थना पर हुआ, ताकि समाज में व्याप्त क्लेश और संघर्ष को दूर किया जा सके। 'नाट्यशास्त्र' को न केवल नाटककारों बल्कि कलाकारों, निर्देशकों और दर्शकों के लिए भी एक मार्गदर्शक सिद्धांत माना जाता है।

नाट्यशास्त्र के मूल तत्व:

1. **नाटक की परिभाषा:** भरत के अनुसार, नाटक लोक-चरित्र (लोगों के जीवन) का अनुकरण है, जो विभिन्न भावों, स्थितियों और क्रियाओं से युक्त होता है।
2. **चतुर्विध अभिनय (Four Types of Abhinaya):** नाटक के सफल मंचन के लिए चार प्रकार के अभिनय अनिवार्य हैं:
 - **आंगिक (Physical):** शरीर, मुख और भंगिमाओं द्वारा किया गया अभिनय।
 - **वाचिक (Vocal):** संवाद, काव्य पाठ और उच्चारण।
 - **आहार्य (Decorative):** वेशभूषा, रंगसज्जा और साज-सज्जा।
 - **सात्त्विक (Emotional):** आंतरिक भावनाओं का प्रदर्शन, जैसे अश्रु, स्वेद (पसीना), रोमांच आदि।
3. **नाट्यवृत्ति (Styles of Representation):** चार नाट्यवृत्तियाँ हैं—**भारती** (वाचिक/भाषण-प्रधान), **सात्त्वती** (भावना-प्रधान), **आरभटी** (संघर्ष/उग्र-प्रधान), और **कैशिकी** (कोमल/भृंगार-प्रधान, नृत्य-संगीत युक्त)।
4. **नाटकीय संरचना (Five Arthaprakritis and Five Avasthas):** नाटक की कथावस्तु (Plot) पाँच संधियों (*मुख, प्रतिमुख, गर्भ, विमर्श, निर्वहण*) और पाँच कार्य-अवस्थाओं (*आरंभ, यत्न, प्राप्त्याशा, नियताप्ति, फलागम*) के माध्यम से पूर्णता प्राप्त करती है।

रस सिद्धांत (The Rasa Theory)

रस सिद्धांत संस्कृत नाट्य परंपरा का **सबसे महत्वपूर्ण और मौलिक योगदान** है। यह सिद्धांत नाटक के अंतिम उद्देश्य—**आनंद की अनुभूति**—को स्पष्ट करता है।

रस की परिभाषा: 'रस' का शाब्दिक अर्थ है "सार, स्वाद या निचोड़"। नाट्यशास्त्र के संदर्भ में, रस वह अलौकिक आनंद है जो सहृदय दर्शक को नाटक देखने या काव्य पढ़ने से प्राप्त होता है। यह लौकिक सुख-दुःख से परे, एक transcendental (पराभौतिक) Aesthetic (सौंदर्यात्मक) अनुभव है।

रस-सूत्र (The Rasa Sutra): भरतमुनि का प्रसिद्ध रस-सूत्र है:

विभावानुभावव्यभिचारिसंयोगाद्रसनिष्पत्तिः

(अर्थात्, विभाव, अनुभाव और व्यभिचारी भावों के संयोग से रस की निष्पत्ति होती है।)

इस सूत्र के चार प्रमुख घटक हैं:

1. **स्थायी भाव (Dominant Emotion):** मन की वे स्थायी और प्रमुख भावनाएँ जो प्रत्येक व्यक्ति में सुषुप्त अवस्था में विद्यमान रहती हैं। मूलतः 8 स्थायी भाव माने गए हैं (बाद में निर्वेद को मिलाकर 9) और प्रत्येक स्थायी भाव से एक रस उत्पन्न होता है।
2. **विभाव (Determinants):** वे कारण या आलंबन जो स्थायी भाव को जागृत करते हैं।
 - **आलंबन विभाव (Basic Determinant):** वह व्यक्ति या वस्तु जिसके कारण भाव जागृत होता है (जैसे नायक-नायिका)।
 - **उद्दीपन विभाव (Excitant Determinant):** वे बाह्य परिस्थितियाँ या वातावरण जो भाव को और अधिक उद्दीप्त करते हैं (जैसे चांदनी रात, सुंदर उद्यान)।
3. **अनुभाव (Consequents):** स्थायी भाव के जाग्रत होने के बाद आश्रय (जिसके मन में भाव उत्पन्न हुआ) की बाहरी शारीरिक चेष्टाएँ, जो दर्शक को भाव की सूचना देती हैं (जैसे खुशी में हँसना, क्रोध में आँखें लाल होना)।
4. **व्यभिचारी भाव / संचारी भाव (Transient Emotions):** वे अस्थायी भाव जो स्थायी भावों को पुष्ट करते हुए आते-जाते रहते हैं (जैसे चिंता, ग्लानि, श्रम)। इनकी संख्या 33 मानी गई है।

अष्ट/नव रस (The Eight/Nine Rasas):

स्थायी भाव	रस (Rasa)	प्रमुख रंग
रति (प्रेम)	शृंगार (Erotic)	श्याम/नीला
हास (हास्य)	हास्य (Comic)	श्वेत
शोक (दुःख)	करुण (Pathetic)	कपोत (ग्रे)
क्रोध (क्रोध)	रौद्र (Furious)	रक्त (लाल)
उत्साह (ऊर्जा)	वीर (Heroic)	गौरा (पीला)
भय (डर)	भयानक (Fearful)	कृष्ण (काला)
जुगुप्सा (घृणा)	बीभत्स (Odious)	नील
विस्मय (आश्चर्य)	अद्भुत (Wondrous)	पीत
निर्वेद (शांत)	शांत (Peaceful)	श्वेत (उज्ज्वल)

शांत रस: अभिनवगुप्त ने शांत रस को नौवाँ और सर्वोच्च रस माना, जिसका स्थायी भाव निर्वेद (वैराग्य) है। यह मोक्ष की भावना से जुड़ा है और सभी रसों का मूल एवं परम लक्ष्य है।

संस्कृत नाट्य परंपरा की विशिष्टताएँ

- **सुखांत की अनिवार्यता:** संस्कृत नाटकों में त्रासदी (Tragedy) का अभाव है। नायक का अंततः विजयी होना और नाटक का मंगलमय समापन (*भरत वाक्य*) अनिवार्य है।
- **उदात्त विषय-वस्तु:** कथावस्तु देवताओं, राजाओं और महापुरुषों के जीवन से ली जाती थी।
- **भाषा-भेद:** उच्च वर्ग के पात्र संस्कृत बोलते थे, जबकि निम्न वर्ग और महिलाएँ प्राकृत या अपभ्रंश बोलती थीं, जो इस परंपरा का एक अनूठा विशेषता है।

3.3.2 पाश्चात्य नाट्य परंपरा

पाश्चात्य नाट्य परंपरा की जड़ें प्राचीन यूनान (Greece) में निहित हैं, विशेषकर 5वीं शताब्दी ईसा पूर्व में, जहाँ धार्मिक उत्सवों (डायोनिशस के सम्मान में) से इसका जन्म हुआ। इसका विकास यूनानी त्रासदी, रोमन कॉमेडी, और फिर पुनर्जागरण (Renaissance) के माध्यम से हुआ।

अरस्तू का अनुकरण सिद्धांत और ट्रेजेडी

पाश्चात्य नाट्य सिद्धांतों के जनक यूनानी दार्शनिक **अरस्तू (Aristotle)** हैं, जिन्होंने अपने ग्रंथ '**पेरी पोएटिकेस**' (**Poetics**) में काव्य और नाटक का वैज्ञानिक विवेचन किया।

अनुकरण सिद्धांत (Theory of Imitation/Mimesis): अरस्तू ने कला को **अनुकरण (Mimesis)** माना। उनके अनुसार, कला प्रकृति या जीवन का हबहू नकल नहीं है, बल्कि उसका रचनात्मक पुनर्सृजन है। नाटककार यथार्थ को जैसा वह है, या जैसा उसे होना चाहिए, उस रूप में प्रस्तुत करता है। यह अनुकरण मात्र नकल न होकर, यथार्थ के सार्वभौमिक तत्वों को उजागर करता है।

त्रासदी (Tragedy) की परिभाषा: अरस्तू ने त्रासदी को काव्य का सर्वोच्च रूप माना। उनकी त्रासदी की प्रसिद्ध परिभाषा है: "त्रासदी किसी गंभीर, पूर्ण और निश्चित परिमाण वाले कार्य का अनुकरण है, जिसकी भाषा अलंकृत होती है, और जो क्रियात्मक रूप में प्रस्तुत किया जाता है, न कि वर्णनात्मक रूप में। यह करुणा और भय के माध्यम से इन भावनाओं का **विरेचन (Catharsis)** करता है।"

त्रासदी के छह तत्व (Six Elements of Tragedy): अरस्तू ने त्रासदी के 6 अनिवार्य अंग बताए:

1. **कथानक/कथावस्तु (Plot/Mythos):** सबसे महत्वपूर्ण तत्व। यह त्रासदी की आत्मा है। कथावस्तु में आरंभ, मध्य और अंत का सुसंगत क्रम होना चाहिए। इसमें तीन मुख्य अंग होते हैं:

- **पेरीपेटिया (Peripeteia):** विडंबना या भाग्य का आकस्मिक उलटफेर (The reversal of fortune)।
- **अनग्रॉरिसिस (Anagnorisis):** नायक द्वारा सत्य या अपनी गलती की पहचान (The recognition).
- **पैथोस (Pathos):** पीड़ा और दुख का क्षण।
- 2. **चरित्र/पात्र (Character/Ethos):** नायक श्रेष्ठ, महान और नैतिक रूप से अच्छा होना चाहिए।
- 3. **विचार/भावना (Thought/Dianoia):** पात्रों के संवादों में व्यक्त होने वाला दर्शन, नैतिकता और तर्क।
- 4. **पदावली/शब्द विन्यास (Diction/Lexis):** भाषा की गुणवत्ता, अलंकरण और लय।
- 5. **गेयता/गीत (Melody/Melopoia):** कोरस द्वारा गाया जाने वाला संगीत।
- 6. **दृश्य-विधान (Spectacle/Opsis):** मंच की साज-सज्जा और दृश्य प्रभाव (सबसे कम महत्वपूर्ण तत्व)।

विरेचन सिद्धांत (Catharsis Theory): अरस्तू का विरेचन सिद्धांत पाश्चात्य नाट्य परंपरा का केंद्रीय दर्शन है। **विरेचन** का अर्थ है **शुद्धि (Purification)** या **शमन (Purgation)**। त्रासदी दर्शक के मन में करुणा (Pity) और भय (Fear) की भावनाओं को उत्तेजित करती है, और फिर इन भावनाओं का एक स्वस्थ निकास (Healthy Outlet) प्रदान करती है। दर्शक जब नायक के दुख को देखता है, तो वह इन भावनाओं को अपने भीतर महसूस करता है और नाटक के अंत तक वह इनसे मुक्त होकर एक नैतिक रूप से शुद्ध अवस्था को प्राप्त करता है। यह एक मानसिक-भावनात्मक चिकित्सा है।

शेक्सपीयर (William Shakespeare) और पुनर्जागरण नाटक

पुनर्जागरण काल (Renaissance) में विलियम शेक्सपीयर (16वीं शताब्दी) ने अरस्तू के सिद्धांतों को चुनौती देते हुए पाश्चात्य नाट्य को एक नई दिशा दी।

शेक्सपीयर का योगदान:

- **मानवीयता का केंद्र:** शेक्सपीयर ने देवताओं और भाग्य के स्थान पर **मानव मन के आंतरिक संघर्ष** को नाटक का केंद्र बनाया। उनके नायक (जैसे हैमलेट, ओथेलो, किंग लियर) नैतिक रूप से त्रुटिपूर्ण होते हैं, और उनकी **त्रासद त्रुटि (Tragic Flaw/Hamartia)** ही उनके पतन का कारण बनती है।
- **यूनितियों का खंडन:** उन्होंने अरस्तू द्वारा प्रतिपादित **त्रय-यूनिटी (Three Unities)**—समय (Unity of Time), स्थान (Unity of Place) और क्रिया (Unity of Action)—को प्रायः तोड़ा, जिससे नाटक को अधिक विस्तार और स्वतंत्रता मिली।
- **भावों का मिश्रण:** उन्होंने त्रासदी और कॉमेडी को मिलाकर **ट्रेजी-कॉमेडी** की रचना की, जिससे जीवन के यथार्थ की जटिलता सामने आई।
- **चरित्रों की जटिलता:** उनके पात्र **मनोवैज्ञानिक रूप से गहरे** और बहुआयामी होते हैं। उदाहरण के लिए, हैमलेट का संशय, ईयागो का द्वेष, किंग लियर का अहंकार—ये सभी आधुनिक मनोविज्ञान की नींव रखते हैं।

पाश्चात्य परंपरा की विशिष्टताएँ

- **यथार्थवाद और संघर्ष:** इस परंपरा में जीवन के यथार्थवादी चित्रण और मनुष्य-मनुष्य या मनुष्य-समाज के बीच के संघर्ष पर बल दिया गया।
- **त्रासदी की प्रधानता:** त्रासदी को एक गंभीर और महत्वपूर्ण विधा माना गया, जहाँ दुख और पतन के माध्यम से गहन मानवीय सत्य उद्घाटित होता है।
- **खुले मंच की अवधारणा:** यूनानी मंच से लेकर एलिज़ाबेथन मंच तक, मंच अक्सर खुला और कम कृत्रिम होता था।

3.3.3 हिंदी नाटक पर प्रभाव और समन्वय

हिंदी नाट्य परंपरा का आधुनिक स्वरूप 19वीं शताब्दी में **भारतेन्दु हरिश्चंद्र** के साथ शुरू हुआ। हिंदी नाटक एक संगम स्थल है, जहाँ संस्कृत की गौरवशाली विरासत, पाश्चात्य यथार्थवादी दृष्टि और भारतीय लोक-नाट्य की जीवंतता का समन्वय हुआ है।

संस्कृत नाट्य परंपरा का प्रभाव

भारतेन्दु युग और उसके बाद के नाट्यकारों पर संस्कृत परंपरा का गहरा प्रभाव रहा, जो विशेष रूप से नाटकों की संरचना और प्रस्तुति में दिखाई देता है:

1. **प्रारंभिक तत्व:** हिंदी नाटकों में संस्कृत नाटकों के तत्वों का प्रयोग हुआ:
 - **नांदी पाठ:** नाटक के आरंभ में मंगलाचरण।
 - **प्रस्तावना (Prelude):** सूत्रधार और नटी द्वारा नाटक की कथावस्तु, कवि और उद्देश्य का परिचय।
 - **भरत-वाक्य:** नाटक के अंत में शांति, समृद्धि और शुभ कामना का उद्घोष।
2. **आदर्शवाद और उदात्तता:** जयशंकर प्रसाद के ऐतिहासिक नाटकों (जैसे 'स्कंदगुप्त', 'चंद्रगुप्त') में संस्कृत परंपरा का **आदर्शवादी दृष्टिकोण** झलकता है। उनके नाटकों के नायक उच्च मूल्यों और नैतिक आदर्शों के लिए संघर्ष करते हैं, भले ही उनका अंत त्रासद न होकर उदात्तता लिए हुए हो।
3. **रस-सिद्धांत का प्रयोग:** प्रेम (शृंगार) और वीरता (वीर रस) जैसे रसों को केंद्रीय स्थान दिया गया। प्रसाद के नाटकों में **शृंगार और करुण** रस की गहरी अनुभूति होती है।

पाश्चात्य नाट्य परंपरा का प्रभाव

20वीं शताब्दी के आरंभ में, और विशेष रूप से स्वातंत्र्योत्तर युग में, पाश्चात्य नाट्य परंपरा का यथार्थवाद, मनोवैज्ञानिक चित्रण और आधुनिक रंगमंच की तकनीकों का प्रभाव हिंदी नाटक पर हावी हुआ।

1. **यथार्थवाद और समस्या-नाटक:** पाश्चात्य नाटकों से प्रेरित होकर हिंदी में **समस्या-नाटक (Problem Play)** का जन्म हुआ। लक्ष्मीनारायण मिश्र, उपेंद्रनाथ 'अशक', और बाद में **मोहन राकेश** के नाटकों में यह प्रभाव स्पष्ट है। नाटक सामाजिक, राजनीतिक और पारिवारिक समस्याओं को यथार्थवादी ढंग से प्रस्तुत करने लगे।
2. **त्रासदी और संघर्ष का केंद्र:** जहाँ संस्कृत नाटक में त्रासदी वर्जित थी, वहीं पाश्चात्य प्रभाव के कारण **त्रासदी और अस्तित्ववादी संघर्ष** केंद्रीय विषय बने। मोहन राकेश के नाटकों

(‘आषाढ़ का एक दिन’, ‘लहरों के राजहंस’) में नायक-नायिका का मानसिक संघर्ष, चुनाव की पीड़ा और नियति से हारना पाश्चात्य त्रासदी के निकट है।

3. **मनोवैज्ञानिक गहराई:** पात्रों के आंतरिक द्वंद्व, अवचेतन मन की क्रियाएँ और जटिल मनोवैज्ञानिक परतें पाश्चात्य यथार्थवाद (विशेषकर इब्सन, चेखव और आधुनिक यूरोपीय नाटककारों) से प्रेरित हैं। मोहन राकेश के ‘आधे-अधूरे’ में एक परिवार के विघटन का मनोवैज्ञानिक चित्रण इसका उत्कृष्ट उदाहरण है।
4. **शिल्प और संरचना:** पाँच अंकों की संरचना का स्थान तीन या एक अंक के नाटकों ने ले लिया। मंच पर कृत्रिमता कम हुई और रंगमंचीय संकेत (Stage Directions) अधिक यथार्थवादी हो गए।

समन्वय, लोकनाट्य और आधुनिकता

हिंदी नाटक की असली शक्ति दोनों परंपराओं के **समन्वय** और भारतीय **लोकनाट्य (Folk Theatre)** के तत्वों को अपनाने में निहित है, जिससे एक विशिष्ट ‘भारतीय रंगमंच’ की अवधारणा विकसित हुई।

परंपरागत और आधुनिक तत्वों का संयोजन:

1. **रूपकों का भारतीयकरण:** आधुनिक नाटककारों ने पाश्चात्य **एब्सर्डिटी (Absurdity)** और **एपिक थियेटर** की शैलियों को भारतीय संदर्भ में ढाला।
 - **धर्मवीर भारती का ‘अंधा युग’:** यह एक बेहतरीन उदाहरण है। इसका कथानक महाभारत के पौराणिक आख्यान (संस्कृत परंपरा) पर आधारित है, लेकिन इसमें युद्ध के बाद के **अस्तित्ववादी खोखलेपन, निराशा और मानवीय नियति** (आधुनिक पाश्चात्य दर्शन) को दर्शाया गया है। यह नाटक संस्कृत की ‘अंक’ और ‘गर्भांक’ परंपरा को अपनाता है, जबकि इसका संदेश पूर्णतः आधुनिक है।
2. **लोकनाट्य का समावेश:**
 - हबीब तनवीर, गिरीश कर्नाड (हिंदी अनुवाद), और बादल सरकार (हिंदी अनुवाद) जैसे नाटककारों ने पाश्चात्य प्रस्तुति शैली के साथ-साथ **नौटंकी, जात्रा, भवई, और स्वांग** जैसे लोकनाट्य रूपों के तत्वों को जोड़ा।

- लोकनाट्य से रंगमंच में सीधी संवाद शैली, संगीत, नृत्य और सरल मंच-सज्जा आई, जिससे नाटक आम दर्शक के लिए सुलभ और जीवंत बन गया।
- 3. **नए प्रयोग और वैचारिक स्वतंत्रता:**
 - **सुरेन्द्र वर्मा** के नाटक ('सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक') संस्कृत नाटक की पृष्ठभूमि (रानी और राजा) लेते हैं, लेकिन उसमें **यौन स्वतंत्रता, सत्ता संघर्ष और आधुनिक नारीवाद** (आधुनिक वैचारिक प्रभाव) को केंद्र में रखते हैं।
 - **लक्ष्मीनारायण लाल** ने भी लोकनाट्य की शैली और संस्कृत के प्रतीकात्मकता का समन्वय किया।

निष्कर्ष

संस्कृत, पाश्चात्य और हिंदी नाट्य परंपराएँ नाट्यकला की सार्वभौमिक अपील को सिद्ध करती हैं। जहाँ संस्कृत परंपरा ने **आदर्शवाद, रस की उदात्त अनुभूति और आध्यात्मिक आनंद** पर बल दिया, वहीं पाश्चात्य परंपरा ने **यथार्थवाद, त्रासदी का विरेचन और मनोवैज्ञानिक संघर्ष** को उजागर किया।

हिंदी नाटक ने, अपनी रचनात्मक यात्रा में, इन दोनों विशाल धाराओं के बीच एक सेतु बनाया। भारतेन्दु ने जहाँ संस्कृत की रीति-नीति को अपनाया, वहीं प्रसाद ने उसमें भारतीय संस्कृति का उदात्त रंग भरा। स्वातंत्र्योत्तर युग में, मोहन राकेश जैसे नाटककारों ने पाश्चात्य यथार्थवादी दृष्टि से भारतीय जीवन के द्वंद्वों को व्यक्त किया। आधुनिक हिंदी नाटक इसी समन्वय का परिणाम है, जहाँ पौराणिक या ऐतिहासिक कथावस्तु में आधुनिक समस्याओं का समावेश किया जाता है, और शास्त्रीय मंचन शैली को लोकनाट्य की जीवंतता और पाश्चात्य मंच की मनोवैज्ञानिक गहराई के साथ प्रस्तुत किया जाता है। हिंदी नाटक की भविष्य की दिशा इसी रचनात्मक समन्वय पर निर्भर करती है, जो इसे वैश्विक रंगमंच पर एक विशिष्ट स्थान दिलाता है।



fuc/k vkj ukVd

इकाई 3.4: आधुनिक हिंदी नाटक का विकास

उद्देश्य:

- विभिन्न युगों में नाटक के विकास को समझना
- विभिन्न प्रकार के नाटकों का परिचय
- आधुनिक नाट्य प्रवृत्तियों का अध्ययन

विषय:

3.4.1 भारतेन्दु युग से आधुनिक युग तक नाट्य विकास

- प्रसाद युग, प्रसादोत्तर युग

3.4.2 विभिन्न प्रकार के नाटक

- सामाजिक, राजनीतिक, मनोवैज्ञानिक नाटक

3.4.3 मंचन और नाट्य-प्रयोग की आधुनिक प्रवृत्तियाँ

- प्रयोगधर्मी नाटक, नुक्कड़ नाटक

इकाई 3.4: आधुनिक हिंदी नाटक का विकास

परिचय: रंगमंच और नवजागरण

भारतीय साहित्य में नाटक की परंपरा अत्यंत प्राचीन है, जिसका उद्गम भरत मुनि के 'नाट्यशास्त्र' से माना जाता है। संस्कृत नाटकों की गौरवशाली परंपरा के बावजूद, मध्यकाल में जनभाषाओं में रंगमंच और नाटक की विधा शिथिल पड़ गई थी। **आधुनिक हिंदी नाटक** का वास्तविक विकास 19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में, **नवजागरण** और **भारतेन्दु हरिश्चंद्र** के आगमन के साथ हुआ। यह वह काल था जब भारतीय समाज पश्चिम

के प्रभाव, राजनीतिक पराधीनता और आंतरिक रूढ़ियों से जूझ रहा था। नाटक केवल मनोरंजन का साधन नहीं रहा, बल्कि सामाजिक चेतना, राष्ट्रीय प्रेम और सांस्कृतिक अस्मिता की अभिव्यक्ति का एक शक्तिशाली माध्यम बन गया।

आधुनिक हिंदी नाटक के विकास का अध्ययन विभिन्न युगीन प्रवृत्तियों, नाट्य शैलियों और मंचन-प्रयोगों के माध्यम से किया जाता है। इस विस्तृत विश्लेषण का उद्देश्य आधुनिक हिंदी नाटक की यात्रा को भारतेंदु युग से लेकर वर्तमान की प्रयोगधर्मी प्रवृत्तियों तक समझना है।

3.4.1 भारतेंदु युग से आधुनिक युग तक नाट्य विकास

हिंदी नाटक के विकास को प्रमुख रूप से चार चरणों में विभाजित किया जा सकता है: भारतेंदु युग, प्रसाद युग, प्रसादोत्तर युग, और आधुनिक/साठोत्तरी युग।

1. भारतेंदु युग (1850-1900 ई.): आधुनिकता का प्रस्थान बिंदु

भारतेंदु हरिश्चंद्र को हिंदी नाटक का जनक माना जाता है। उन्होंने न केवल स्वयं विपुल नाट्य-रचनाएँ कीं, बल्कि अपने समकालीन लेखकों को भी नाटक लेखन और अभिनय के लिए प्रेरित किया। इस युग की सबसे बड़ी उपलब्धि हिंदी रंगमंच की स्थापना और नाटक को संस्कृत की शास्त्रीयता से निकालकर जन-जीवन के करीब लाना था।

प्रमुख प्रवृत्तियाँ और विशेषताएँ:

- **जन-चेतना और उद्देश्यपरकता:** भारतेंदु युग के नाटकों का प्रमुख उद्देश्य सामाजिक सुधार, राष्ट्रीय भावना और राजनीतिक चेतना का प्रसार करना था। 'भारत दुर्दशा' में देश की तत्कालीन दयनीय स्थिति का चित्रण किया गया, तो 'अंधेर नगरी' में तत्कालीन शासन व्यवस्था पर तीखा व्यंग्य किया गया।
- **विषय-विविधता:** इस युग में **मौलिक** (जैसे 'विषस्य विषमौषधम्'), **अनूदित** (जैसे 'विद्यासुंदर' - बांग्ला से), और **रूपांतरित** (संस्कृत नाटकों का सरल हिंदी रूप) नाटकों की त्रिवेणी प्रवाहित हुई।

- **मंचन-अनुकूलता:** भारतेन्दु स्वयं एक कुशल रंगकर्मी और अभिनेता थे, इसलिए उनके नाटकों में सरल संवादों और त्वरित दृश्यों के माध्यम से मंचन को प्राथमिकता दी गई। हालाँकि, उस समय व्यावसायिक रंगमंच का अभाव था।
- **हास्य और व्यंग्य:** सामाजिक कुरीतियों, धार्मिक पाखंड और विदेशी शासन पर व्यंग्य इस युग के नाटकों की जान थे।
- **प्रमुख नाटककार:**
 - **भारतेन्दु हरिश्चंद्र:** 'भारत दुर्दशा', 'अंधेर नगरी', 'चंद्रावली'।
 - **राधाकृष्ण दास:** 'दुखिनी बाला', 'धर्मालाप'।
 - **श्रीनिवास दास:** 'रणधीर और प्रेममोहिनी', 'संयोगिता स्वयंवर'।

2. द्विवेदी युग (1900-1918 ई.): संक्रमण और शास्त्रीयता

यह युग आचार्य **महावीर प्रसाद द्विवेदी** के साहित्यिक नेतृत्व में रहा। कविता और गद्य में अनुशासन आने के बावजूद, नाटक लेखन में गुणवत्ता और मौलिकता की दृष्टि से यह युग कमजोर रहा। अधिकतर नाटक **उपदेशपरक** और **सिद्धांतवादी** थे। इस काल में पौराणिक और ऐतिहासिक विषयों पर अधिक बल दिया गया।

प्रमुख प्रवृत्तियाँ:

- **अनुवाद की प्रधानता:** संस्कृत और बांग्ला के नाटकों का अनुवाद कार्य जोरों पर था।
- **काव्य और गद्य का मिश्रण:** नाटकों में उपदेशात्मकता हावी रही, जिससे वे कम आकर्षक और कम मंचनीय हो गए।
- **पारसी रंगमंच का प्रभाव:** इस दौरान व्यावसायिक **पारसी रंगमंच** बहुत लोकप्रिय हुआ। यह रंगमंच भड़कीली साज-सज्जा, सस्ते मनोरंजन और अतिरंजित प्रस्तुति पर बल देता था, जिसने उच्च कोटि के साहित्यिक नाटकों के विकास को बाधित किया।
- **प्रमुख नाटककार:**
 - **माधव शुक्ल:** 'महाराणा प्रताप'।
 - **बद्रीनारायण भट्ट:** 'वेणुसंहार' (अनुवाद)।

3. प्रसाद युग (1918-1937 ई.): गौरवशाली पुनर्जागरण

हिंदी नाटक को नई ऊँचाई और साहित्यिक गरिमा प्रदान करने का श्रेय **जयशंकर प्रसाद** को जाता है, इसलिए इस काल को **प्रसाद युग** कहा जाता है। प्रसाद ने हिंदी नाटक को पारसी रंगमंच की व्यावसायिकता से मुक्त कर भारतीय संस्कृति और इतिहास की गहराइयों से जोड़ा।

fuc/k vkj ukVd

जयशंकर प्रसाद की देन:

- **ऐतिहासिक-सांस्कृतिक नाटक:** प्रसाद ने गुप्त और मौर्य काल जैसे स्वर्णिम अतीत की घटनाओं को आधार बनाया (जैसे 'चंद्रगुप्त', 'स्कंदगुप्त', 'ध्रुवस्वामिनी')। उनका उद्देश्य केवल इतिहास बताना नहीं, बल्कि अतीत के माध्यम से वर्तमान की समस्याओं (राष्ट्रीय एकता, स्त्री-विमर्श, त्याग और कर्तव्य) को उद्घाटित करना था।
- **भावुकता और काव्य-तत्व:** प्रसाद के नाटक गद्य-पद्य मिश्रित होते थे। उनके संवाद काव्यात्मक, लंबे और गूढ़ होते थे, जिनमें दार्शनिक चिंतन की गहराई होती थी।
- **मनोवैज्ञानिक और चरित्र-प्रधानता:** पात्रों का चित्रण अत्यंत सूक्ष्म और मनोवैज्ञानिक होता था। पात्र द्वंद्व और संघर्ष से भरे होते थे (जैसे 'स्कंदगुप्त' का अंतर्द्वंद्व)।
- **मंचन की चुनौती:** प्रसाद के नाटक साहित्यिक दृष्टि से उत्कृष्ट थे, लेकिन लंबे संवाद, अनेक दृश्य और जटिल कथावस्तु के कारण उन्हें **मंचन की दृष्टि से कठिन** माना जाता था। यह चुनौती बाद में प्रसादोत्तर युग के नाटककारों ने स्वीकार की।
- **प्रमुख नाटककार:**
 - **जयशंकर प्रसाद:** 'स्कंदगुप्त', 'चंद्रगुप्त', 'ध्रुवस्वामिनी', 'राज्यश्री'।
 - **हरिकृष्ण प्रेमी:** 'रक्षा बंधन', 'शिवा साधना'।
 - **लक्ष्मीनारायण मिश्र:** 'सिंदूर की होली' (यथार्थवादी प्रवृत्तियों की शुरुआत)।

4. प्रसादोत्तर युग और आधुनिकता का उदय (1937-1960 ई.)

प्रसाद की मृत्यु के बाद हिंदी नाटक ने एक निर्णायक मोड़ लिया। अब नाटककारों का ध्यान **काव्यात्मकता से हटकर यथार्थवाद और मंचन की सुगमता** पर केंद्रित हुआ। यह काल **यथार्थवादी सामाजिक नाटक** के उदय का काल है।

प्रमुख प्रवृत्तियाँ:

- **यथार्थवाद और सामाजिक समस्याएँ:** नाटक इतिहास और कल्पना के आकाश से उतरकर समकालीन जीवन की समस्याओं (भ्रष्टाचार, बेरोजगारी, टूटते परिवार, मध्यवर्गीय संघर्ष) को दर्शाने लगे।
- **मंच-अनुकूलता पर बल:** नाटककारों ने छोटे दृश्य, कसे हुए संवाद और सीमित पात्रों का प्रयोग शुरू किया ताकि नाटकों का सफल मंचन किया जा सके। **एकांकी** (One-Act Play) का विकास इस युग की महत्वपूर्ण देन है।
- **मनोवैज्ञानिक गहराई:** लक्ष्मी नारायण मिश्र और उपेन्द्रनाथ 'अशक' के नाटकों में पात्रों के मानसिक द्वंद्व को गहराई से चित्रित किया गया।
- **नये युग की आहट (मोहन राकेश):** इस युग के अंतिम दौर में **मोहन राकेश** का आगमन हुआ, जिन्होंने 1958 में '**आषाढ़ का एक दिन**' लिखकर हिंदी नाटक की दिशा बदल दी। राकेश ने प्रसाद की ऐतिहासिकता को आधुनिक बोध से जोड़ा और हिंदी नाटक को अंतर्राष्ट्रीय स्तर की गंभीरता प्रदान की।
- **प्रमुख नाटककार:**
 - **उपेन्द्रनाथ 'अशक':** 'जय-पराजय', 'अलग-अलग रास्ते', 'छठा बेटा' (एकांकी)।
 - **डॉ. रामकुमार वर्मा:** 'चारुमित्रा' (एकांकी), 'विजय पर्व'।
 - **लक्ष्मी नारायण मिश्र:** 'सिंदूर की होली', 'राक्षस का मंदिर'।

5. साठोत्तरी/आधुनिक युग (1960 ई. के बाद): गहनता और प्रयोगशीलता

1960 के दशक के बाद हिंदी नाटक ने पूर्ण **आधुनिकता** और **प्रयोगशीलता** की ओर कदम बढ़ाया। **मोहन राकेश** के नाटकों ने इस युग का शिलान्यास किया।

मोहन राकेश और त्रयी का प्रभाव:

- मोहन राकेश के 'आषाढ़ का एक दिन', 'लहरों के राजहंस' और 'आधे-अधूरे' ने आधुनिक मनुष्य के अकेलेपन, तनाव, अपूर्णता (**Incompleteness**) और संबंधों के टूटने के दर्द को वाणी दी। 'आधे-अधूरे' को आधुनिक हिंदी नाटक का मील का पत्थर माना जाता है, जहाँ मध्यवर्गीय परिवार के विघटन और पुरुष-स्त्री संबंधों की जटिलता का गहन चित्रण है।
- उनके नाटकों की भाषा-शैली संयमित, संकेतात्मक और यथार्थवादी थी, जो मंचन के लिए अत्यंत उपयुक्त थी।

आधुनिक युग की प्रवृत्तियाँ:

- **विद्रोही स्वर:** व्यवस्था के खिलाफ, सत्ता के पाखंड के खिलाफ और मानवीय मूल्यों के हास के खिलाफ सशक्त विरोध।
- **अस्तित्ववाद और विसंगतिबोध:** पश्चिमी साहित्य से प्रभावित होकर नाटक में **एब्सर्डिटी (Absurdity)** और **एक्जिस्टेंशियलिज्म (Existentialism)** का प्रवेश हुआ।
 - **धर्मवीर भारती** का 'अंधा युग' (पौराणिक संदर्भ में युद्धोत्तर विभीषिका और भविष्यहीनता का चित्रण) इसका सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है।
- **लोकधर्मी रंगमंच:** शहरी मंचों से इतर, नाटककारों ने लोक कथाओं, लोक संगीत और लोक शैलियों का प्रयोग किया (जैसे **हबीब तनवीर** का 'चरणदास चोर')।
- **स्त्री-विमर्श:** नाटकों में स्त्री पात्रों को केवल नायिका या पीड़ित के रूप में न देखकर, एक स्वतंत्र अस्तित्व और संघर्षशील इकाई के रूप में प्रस्तुत किया गया।
- **प्रमुख नाटककार:**
 - **मोहन राकेश:** 'आधे-अधूरे', 'लहरों के राजहंस'।
 - **धर्मवीर भारती:** 'अंधा युग'।
 - **सुरेंद्र वर्मा:** 'द्रौपदी', 'आठवाँ सर्ग' (स्त्री-पुरुष संबंधों की पुनर्व्याख्या)।
 - **भीष्म साहनी:** 'हानूश', 'कबीरा खड़ा बाज़ार में'।
 - **गिरीश कर्नाड** (हिंदी अनुवाद में): 'तुगलक', 'हयवदन'।

इस प्रकार, भारतेंदु युग की सामाजिक चेतना से लेकर प्रसाद युग की सांस्कृतिक भव्यता और मोहन राकेश के मनोवैज्ञानिक यथार्थ तक, हिंदी नाटक ने एक लंबी और बहुआयामी यात्रा तय की है।

3.4.2 विभिन्न प्रकार के नाटक

आधुनिक हिंदी नाटक को विषय वस्तु के आधार पर कई श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है। यहाँ प्रमुख तीन प्रकारों पर विस्तृत चर्चा की गई है:

1. सामाजिक नाटक (Social Drama)

सामाजिक नाटक वे होते हैं जो तत्कालीन समाज की समस्याओं, विसंगतियों, रीति-रिवाजों, और जन-जीवन के यथार्थवादी चित्रण को अपना केंद्र बनाते हैं। ये नाटक दर्शकों को मनोरंजन के साथ-साथ सोचने पर मजबूर करते हैं।

प्रमुख विषय और विशेषताएँ:

- **मध्यवर्गीय जीवन का यथार्थ:** आधुनिक सामाजिक नाटकों का मुख्य फोकस **मध्यवर्ग** के तनाव, आर्थिक असुरक्षा, और महत्वाकांक्षाओं पर रहा है। परिवार में संचार की कमी, पति-पत्नी के रिश्ते की दरार, और पीढ़ियों के बीच का अंतरविरोध आम विषय हैं।
 - **उदाहरण:** मोहन राकेश का '**आधे-अधूरे**' इसका उत्कृष्ट उदाहरण है, जो एक टूटते हुए मध्यवर्गीय परिवार का गहन मनोवैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत करता है।
- **सामाजिक कुरीतियाँ और भ्रष्टाचार:** दहेज प्रथा, जातिवाद, धार्मिक पाखंड और राजनीतिक भ्रष्टाचार जैसे विषय अक्सर इन नाटकों का हिस्सा बनते हैं।
- **नारी-मुक्ति और अधिकार:** सामाजिक नाटकों ने नारी की बदलती स्थिति, उसके शोषण, और स्वतंत्रता की आकांक्षा को सशक्त रूप से उठाया है।
 - **उदाहरण:** लक्ष्मीनारायण मिश्र का '**सिंदूर की होली**' स्त्री के पुनर्विवाह और सामाजिक रूढ़ियों पर प्रश्न उठाता है।

- **आदर्शवाद से यथार्थवाद तक:** भारतेन्दु युग के नाटकों में जहाँ सुधारवादी आदर्शवाद हावी था, वहीं साठोत्तरी नाटकों में जीवन की कटु सच्चाइयों और निराशावाद का अधिक गहरा चित्रण मिलता है।

2. राजनीतिक नाटक (Political Drama)

राजनीतिक नाटक का उद्देश्य सत्ता, शासन व्यवस्था, राजनीति के नैतिक पतन, और जनतंत्र के संघर्षों को नाट्य रूप देना होता है। ये नाटक व्यवस्था पर सीधा प्रश्नचिह्न लगाते हैं और दर्शकों को राजनीतिक रूप से जागरूक करते हैं।

प्रमुख विषय और विशेषताएँ:

- **सत्ता का चरित्र:** ये नाटक सत्ता के केंद्रीकरण, शासक वर्ग की निरंकुशता, और शक्ति के दुरुपयोग को उजागर करते हैं।
 - **उदाहरण:** गिरीश कर्नाड का 'तुगलक' (हिंदी अनुवाद) मध्यकालीन इतिहास के माध्यम से एक आदर्शवादी शासक के विखंडन और उसकी राजनीतिक विफलता का आधुनिक बोध प्रस्तुत करता है।
- **लोकतंत्र की विसंगतियाँ:** चुनाव, भ्रष्टाचार, अवसरवाद, और आदर्शों से भटके हुए नेताओं का चित्रण।
 - **उदाहरण:** सत्यव्रत सिन्हा का 'तीन अपाहिज' या सुरेंद्र वर्मा का 'सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक' (यद्यपि मूलतः मनोवैज्ञानिक, इसमें राजसत्ता के नियम-कानूनों की क्रूरता झलकती है)।
- **युद्ध और त्रासदी:** युद्ध, विभाजन, और राजनीतिक हिंसा के मानवीय परिणामों का चित्रण। **धर्मवीर भारती** का 'अंधा युग' इस श्रेणी का सबसे महत्वपूर्ण नाटक है, जो महाभारत के युद्ध के बहाने आधुनिक युद्धों की निरर्थकता और भयावहता को दिखाता है।
- **प्रतीकात्मकता:** राजनीतिक नाटकों में अक्सर सीधी बात कहने की जगह **प्रतीकों** और **मिथकों** का सहारा लिया जाता है ताकि सेंसरशिप से बचा जा सके और विषय को अधिक गहराया जा सके।

3. मनोवैज्ञानिक नाटक (Psychological Drama)

मनोवैज्ञानिक नाटक बाहरी घटनाक्रमों के स्थान पर पात्रों के **अंतर्मन, मानसिक द्वंद्वों, अवचेतन इच्छाओं, और व्यक्तित्व की जटिलताओं** पर केंद्रित होते हैं। इन नाटकों में क्रिया (Action) कम और चिंतन (Thought) अधिक होता है।

प्रमुख विषय और विशेषताएँ:

- **चरित्र की गहराई:** ये नाटक पात्रों को केवल 'अच्छे' या 'बुरे' के रूप में नहीं देखते, बल्कि उनकी प्रेरणाओं, असुरक्षाओं और आंतरिक संघर्षों को उजागर करते हैं।
- **संबंधों का सूक्ष्म विश्लेषण:** पुरुष-स्त्री संबंध, परिवार के भीतर के अनकहे तनाव, और ईर्ष्या, प्रेम, घृणा जैसे जटिल मानवीय भावों का गहराई से चित्रण।
- **उदाहरण:** मोहन राकेश का '**लहरों के राजहंस**' गौतम बुद्ध के सौतेले भाई नंद और उसकी पत्नी सुंदरी के माध्यम से भोग और त्याग के बीच फँसे मनुष्य के मानसिक द्वंद्व को दर्शाता है।
- **संकेतात्मक संवाद:** संवाद अक्सर सीधे न होकर प्रतीकात्मक, दार्शनिक या संकेतात्मक होते हैं, जो पात्रों की आंतरिक स्थिति को दर्शाते हैं।
- **फ्रायडवादी प्रभाव:** कुछ नाटक फ्रायड (Freud) के मनोविश्लेषण सिद्धांतों से प्रभावित होते हैं, जिनमें अवचेतन मन की प्रेरणाओं को उजागर किया जाता है।
- **एकांकी का महत्व:** एकांकी विधा मनोवैज्ञानिक विश्लेषण के लिए बहुत उपयुक्त साबित हुई, क्योंकि यह एक ही घटना या पात्र के मानसिक संघर्ष पर गहनता से ध्यान केंद्रित कर सकती है।
- **उदाहरण:** डॉ. रामकुमार वर्मा के कई एकांकियों में मनोवैज्ञानिक तत्वों का समावेश है।

आधुनिक हिंदी नाटक में ये तीनों प्रवृत्तियाँ अक्सर आपस में गुंथी हुई मिलती हैं। एक सशक्त सामाजिक नाटक में गहरी मनोवैज्ञानिक परतें हो सकती हैं, और एक राजनीतिक नाटक भी समाज के यथार्थ को आधार बना सकता है।

3.4.3 मंचन और नाट्य-प्रयोग की आधुनिक प्रवृत्तियाँ

आधुनिक नाटक की एक पहचान केवल उसकी विषय-वस्तु में नहीं है, बल्कि उसके प्रस्तुति कौशल और **मंचन-प्रयोगों** में भी है। 1960 के बाद, भारतीय रंगमंच ने पश्चिमी थिएटर की प्रवृत्तियों और अपनी लोक-शैलियों के मिश्रण से नए प्रयोगों को जन्म दिया।

1. प्रयोगधर्मी नाटक (Experimental Drama)

प्रयोगधर्मी रंगमंच का तात्पर्य नाट्य-संरचना, कथा-प्रस्तुति, भाषा, और मंच-सज्जा के पारंपरिक नियमों को तोड़कर नए और अपरंपरागत तरीकों को अपनाना है।

प्रमुख प्रवृत्तियाँ और तकनीकें:

- **संरचना में नवीनता:**
 - **अखंडनीय संरचना (Non-linear Structure):** कथा एक सीधी रेखा में न चलकर अतीत और वर्तमान के बीच टूटती-बिखरती रहती है (जैसे **मोहन राकेश** के नाटकों में फ्लैशबैक और स्मृति का प्रयोग)।
 - **एपिसोडिक संरचना (Episodic Structure):** नाटक दृश्यों के माध्यम से न बनकर स्वतंत्र कड़ियों (एपिसोड) के रूप में प्रस्तुत किया जाता है।
- **रंगमंचीय तत्वों का प्रतीकात्मक उपयोग:**
 - **सेट (Set) का न्यूनतम उपयोग:** जटिल और महंगे सेट की जगह प्रतीकात्मक वस्तुओं (एक कुर्सी, एक मेज, एक रस्सी) का प्रयोग किया जाता है, जो कई अर्थों को वहन करते हैं।
 - **प्रकाश और ध्वनि का प्रयोग:** केवल यथार्थवादी प्रभाव के लिए नहीं, बल्कि पात्रों की मानसिक स्थिति या नाटक के मूड को दर्शाने के लिए रंगीन रोशनी और असामान्य ध्वनियों का प्रयोग।
 - **उदाहरण: 'अंधा युग'** में युद्ध की विभीषिका दिखाने के लिए मंच पर कम से कम वस्तुओं का प्रयोग, जबकि प्रकाश और ध्वनि के माध्यम से त्रासदी का माहौल बनाना।
- **अभिनय शैली में परिवर्तन:**
 - **भावात्मकता का त्याग:** पारसी या प्रसाद युग की अतिरंजित भावुक अभिनय शैली की जगह संयम, आंतरिकता और विचार-प्रधान अभिनय को महत्व दिया गया।



fuc/k vkj ukVd

- **नया दर्शक-पात्र संबंध:** कई प्रयोगधर्मी नाटकों में पात्र दर्शकों से सीधा संवाद करते हैं, जिससे दर्शक नाटक का हिस्सा बन जाते हैं।
- **प्रमुख प्रयोगधर्मी नाटककार:**
 - **धर्मवीर भारती:** 'अंधा युग' (मुक्तछंद, पौराणिक आख्यान का आधुनिक प्रयोग)।
 - **सुरेंद्र वर्मा:** 'आठवाँ सर्ग' (संस्कृत नाटक के संदर्भ में आधुनिक प्रश्न)।
 - **मणि मधुकर:** 'रस गंधर्व' (लोक नाट्य शैली का प्रयोग)।
 - **बाबूलाल बटरोही:** 'अंधेरे का बेटा' (विसंगतिबोध का प्रयोग)।

2. नुक्कड़ नाटक (Street Play/Nukkad Natak)

नुक्कड़ नाटक प्रयोगधर्मी रंगमंच का एक महत्वपूर्ण उप-भाग है, लेकिन यह अपनी विशिष्ट सामाजिक प्रतिबद्धता और मंचन शैली के कारण अलग पहचान रखता है। इसका उद्देश्य मनोरंजन से अधिक **जागरूकता फैलाना** और **सामाजिक परिवर्तन** के लिए उत्प्रेरक बनना है।

प्रमुख विशेषताएँ:

- **मंच की अनिवार्यता का त्याग:** नुक्कड़ नाटक किसी औपचारिक मंच, टिकट, या पर्दे की आवश्यकता नहीं रखते। वे सीधे **सड़क, चौराहे, बाजार या किसी सार्वजनिक स्थल** पर प्रस्तुत किए जाते हैं।
- **सीधा संवाद और अंतःक्रिया:** अभिनेता सीधे दर्शकों के बीच में होते हैं और उनसे लगातार संवाद स्थापित करते हैं। दर्शक प्रायः नाटक में टिप्पणी भी करते हैं।
- **विषय-वस्तु:** नुक्कड़ नाटकों की विषय-वस्तु हमेशा **समसामयिक, ज्वलंत और जन-हितैषी** होती है।
 - **प्रमुख विषय:** महिला सुरक्षा, पर्यावरण संरक्षण, शिक्षा का अधिकार, भ्रष्टाचार, सांप्रदायिक सन्द्राव, स्वास्थ्य जागरूकता (पोलियो, एड्स)।
- **सरल और आक्रामक शैली:** इसकी भाषा सरल, सीधी और आक्रामक होती है ताकि संदेश तुरंत जनता तक पहुँच जाए। गीतों, नारों और कोरियोग्राफी (समूह गति) का भरपूर उपयोग होता है।

- **कलाकार और दल:** नुक्कड़ नाटक अक्सर किसी राजनीतिक, सामाजिक या सांस्कृतिक दल द्वारा प्रस्तुत किए जाते हैं। **सफदर हाशमी** और उनका **जन नाट्य मंच (जनम)** भारत में नुक्कड़ नाटक आंदोलन के अग्रदूत रहे हैं।
- **उदाहरण:** नुक्कड़ नाटक का सबसे बड़ा उदाहरण सफदर हाशमी का '**हल्ला बोल**' है, जो मजदूरों के अधिकारों और संगठित होने की बात करता है।

3. अन्य आधुनिक नाट्य-प्रयोग

- **लोकधर्मी रंगमंच (Folk Theatre):** पश्चिमी प्रभाव से मुक्त होने और अपनी मिट्टी से जुड़ने के लिए, अनेक नाटककारों ने लोक नाट्य शैलियों (जैसे नौटंकी, स्वाँग, भांड, जात्रा) के तत्वों का प्रयोग आधुनिक नाटकों में किया। **हबीब तनवीर** ने छत्तीसगढ़ी लोक कलाकारों के साथ मिलकर '**चरणदास चोर**' जैसे नाटक प्रस्तुत किए, जो लोक संगीत, वेशभूषा और नृत्य का अद्भुत मिश्रण थे।
- **टेलीविजन और रेडियो नाटक:** 20वीं सदी के उत्तरार्ध में नाटक का माध्यम रंगमंच से आगे बढ़कर रेडियो और टेलीविजन तक भी पहुँचा। रेडियो नाटक केवल ध्वनि पर आधारित होने के कारण संवादों और ध्वनि प्रभावों के नए प्रयोगों को जन्म देते थे, जबकि टेलीविजन नाटक दृश्य और कैमरा तकनीक का उपयोग करते थे।
- **अभिनय प्रशिक्षण और रंगमंडल:** राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय (**National School of Drama - NSD**) जैसे संस्थानों की स्थापना से नाटक विधा को अकादमिक समर्थन मिला। इसने अभिनय, निर्देशन, प्रकाश और मंच सज्जा को एक पेशेवर आयाम दिया, जिससे प्रयोगधर्मी नाटक को मजबूती मिली।

आधुनिक नाट्य प्रवृत्तियाँ दिखाती हैं कि हिंदी नाटक अब केवल लिखित साहित्य नहीं है, बल्कि एक जीवंत कला माध्यम है जो समाज से सीधे जुड़कर उसे बदलने की क्षमता रखता है। मंच को एक प्रयोगशाला के रूप में देखा जा रहा है जहाँ नए विचारों, तकनीकों और सामाजिक संवादों को निरंतर गढ़ा जा रहा है।

निष्कर्ष: गतिशीलता और भविष्य

आधुनिक हिंदी नाटक का विकास लगभग डेढ़ शताब्दी की एक गतिशील यात्रा रही है। भारतेन्दु के देशभक्ति और सामाजिक सुधार के प्रारंभिक आह्वान से लेकर, प्रसाद के सांस्कृतिक पुनर्जागरण और गौरवशाली इतिहास के चिंतन तक, और फिर मोहन राकेश के गहन मनोवैज्ञानिक यथार्थ और साठोत्तरी नाटकों के विसंगतिबोध तक, हिंदी नाटक ने भारतीय समाज के हर बड़े बदलाव को आत्मसात किया है।

आज, हिंदी रंगमंच एक बहुआयामी और प्रयोगशील दौर में है। एक ओर जहाँ **सुरेंद्र वर्मा**, **भीष्म साहनी** और अन्य नाटककारों ने सामाजिक-राजनीतिक और मनोवैज्ञानिक नाटकों की परंपरा को समृद्ध किया है, वहीं दूसरी ओर **नुक्कड़ नाटक** जैसे माध्यमों ने कला को जनता के द्वार तक पहुँचाकर उसकी उपयोगिता को सिद्ध किया है। आधुनिक प्रयोगों ने सिद्ध कर दिया है कि **मंचन की सुगमता** और **साहित्यिक गुणवत्ता** एक-दूसरे के विरोधी नहीं, बल्कि पूरक हो सकते हैं।

नाटक केवल समय का दर्पण नहीं, बल्कि उसे बदलने की क्षमता रखने वाला माध्यम भी है। भविष्य में, हिंदी नाटक डिजिटल माध्यमों के साथ नए तालमेल बिठाते हुए, वैश्विक रंगमंच की प्रवृत्तियों को आत्मसात करते हुए और अपने लोकधर्मी जड़ों को मजबूत करते हुए निरंतर विकसित होता रहेगा, ताकि आधुनिक मनुष्य की जटिलताओं और समकालीन समाज के प्रश्नों को गहराई से प्रस्तुत कर सके।

संदर्भ हेतु प्रमुख नाटक और नाटककार:

युग	नाटककार	प्रमुख नाटक (उदाहरण)	प्रमुख प्रवृत्ति
भारतेन्दु	भारतेन्दु हरिश्चंद्र	'भारत दुर्दशा', 'अंधेर नगरी'	सामाजिक चेतना, व्यंग्य, नवजागरण
प्रसाद	जयशंकर प्रसाद	'स्कंदगुप्त', 'ध्रुवस्वामिनी'	ऐतिहासिक-सांस्कृतिक पुनर्जागरण, काव्यमयता
प्रसादोत्तर	लक्ष्मीनारायण मिश्र	'सिंदूर की होली'	यथार्थवाद, सामाजिक समस्याएँ
आधुनिक (60+)	मोहन राकेश	'आधे-अधूरे', 'लहरों के राजहंस'	मनोवैज्ञानिक यथार्थ, संबंधों का टूटना
प्रयोगधर्मी	धर्मवीर भारती	'अंधा युग'	विसंगतिबोध, प्रतीकात्मकता, मिथकीय प्रयोग
लोकधर्मी	हबीब तनवीर	'चरणदास चोर'	लोक शैली, मंच की सरलता, सामाजिक संदेश



3.5 स्व-मूल्यांकन प्रश्न

3.5.1 बहुविकल्पीय प्रश्न (MCQs):

fuc/k vkj ukVd

नाटक एवं नाट्यशास्त्र – प्रमुख तथ्य और लेखक

1. 'नाट्यशास्त्र' के रचयिता कौन हैं?

क) कालिदास

ख) भरतमुनि

ग) भवभूति

घ) भास

उत्तर: ख) भरतमुनि

2. नाटक में कितने रस माने गए हैं?

क) 7

ख) 8

ग) 9

घ) 10

उत्तर: ग) 9 (भरत के अनुसार), घ) 10 (बाद में शांत रस जोड़ा गया)

3. हिंदी नाटक का जनक किसे माना जाता है?

क) जयशंकर प्रसाद

ख) भारतेन्दु हरिश्चंद्र

ग) मोहन राकेश

घ) विष्णु प्रभाकर

उत्तर: ख) भारतेन्दु हरिश्चंद्र



4. नाटक का सबसे महत्वपूर्ण तत्व है:

क) गीत

ख) कथानक और संवाद

ग) मंच सज्जा

घ) संगीत

उत्तर: ख) कथानक और संवाद

fuc/k vkj ukVd

5. अरस्तू ने नाटक में किसे सर्वाधिक महत्वपूर्ण माना?

क) पात्र

ख) कथानक (Plot)

ग) विचार

घ) भाषा

उत्तर: ख) कथानक (Plot)

6. 'अंधेर नगरी' के रचयिता हैं:

क) जयशंकर प्रसाद

ख) भारतेन्दु हरिश्चंद्र

ग) मोहन राकेश

घ) धर्मवीर भारती

उत्तर: ख) भारतेन्दु हरिश्चंद्र

7. 'स्कंदगुप्त' किस प्रकार का नाटक है?

क) सामाजिक

ख) ऐतिहासिक

ग) मनोवैज्ञानिक

घ) प्रतीकात्मक

उत्तर: ख) ऐतिहासिक



fuc/k vkj ukVd

8. भारतीय नाट्य परंपरा में नाटक का मुख्य उद्देश्य है:

- क) केवल मनोरंजन
- ख) रसानुभूति और लोकशिक्षा
- ग) धन अर्जन
- घ) राजनीतिक प्रचार

उत्तर: ख) रसानुभूति और लोकशिक्षा

9. नाटक में त्रिएकता (Three Unities) का सिद्धांत किसने दिया?

- क) भरतमुनि
- ख) अरस्तू
- ग) शेक्सपीयर
- घ) इब्सन

उत्तर: ख) अरस्तू (कथानक, समय, स्थान की एकता)

10. आधुनिक हिंदी नाटक में प्रमुख प्रवृत्ति है:

- क) केवल मिथकीय कथानक
- ख) सामाजिक यथार्थ और प्रयोगधर्मिता
- ग) केवल ऐतिहासिक घटनाएँ
- घ) केवल धार्मिक विषय

उत्तर: ख) सामाजिक यथार्थ और प्रयोगधर्मिता

3.5.2 लघु उत्तरीय प्रश्न (2-3 अंक):

1. नाटक की परिभाषा देते हुए इसके प्रमुख तत्व बताइए।
2. संस्कृत और पाश्चात्य नाट्य परंपरा में क्या अंतर है?
3. हिंदी नाटक के विकास में भारतेन्दु युग का क्या योगदान है?
4. नाटक में संवाद का क्या महत्व है?



5. आधुनिक हिंदी नाटक की तीन प्रमुख प्रवृत्तियाँ बताइए।

3.5.3 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (5-10 अंक):

fuc/k vkj ukVd

1. नाटक की परिभाषा देते हुए इसके प्रमुख तत्वों (कथानक, पात्र, संवाद, देशकाल, मंचीयता) का विस्तार से वर्णन कीजिए।
2. भारतीय और पाश्चात्य नाट्य परंपराओं का तुलनात्मक अध्ययन कीजिए।
3. हिंदी नाटक के उद्भव और विकास का विस्तृत विवेचन कीजिए।
4. भरतमुनि के नाट्यशास्त्र और रस सिद्धांत का विस्तार से परिचय दीजिए।
5. आधुनिक हिंदी नाटक के विकास और प्रवृत्तियों पर विस्तृत निबंध लिखिए।

मॉड्यूल 4: प्रमुख नाटककार एवं उनकी कृतियाँ - विश्लेषणात्मक अध्ययन

इकाई 4.1: भारतेन्दु हरिश्चंद्र

fuc/k vkj ukVd

उद्देश्य:

- भारतेन्दु के नाट्य योगदान को समझना
- 'अंधेर नगरी' का विस्तृत विश्लेषण
- सामाजिक व्यंग्य और नाट्य शिल्प का अध्ययन

विषय:

4.1.1 अंधेर नगरी

- कथावस्तु और संदेश

4.1.2 सामाजिक व्यंग्य और नैतिक संदेश

- अन्याय, अव्यवस्था पर व्यंग्य

4.1.3 भाषा, पात्र, संवाद और रूपक

- सरल भाषा, प्रतीकात्मकता

4.1: भारतेन्दु हरिश्चंद्र: नाट्य-योगदान एवं 'अंधेर नगरी' का विस्तृत विश्लेषण

भारतेन्दु हरिश्चंद्र (1850-1885) आधुनिक हिंदी साहित्य के पितामह, नवजागरण के अग्रदूत और हिंदी नाट्य साहित्य के जनक माने जाते हैं। उनका अल्पकालिक जीवन एक युग-परिवर्तन का साक्षी बना, जहाँ उन्होंने साहित्य की हर विधा—कविता, निबंध, पत्रकारिता, और विशेष रूप से **नाटक**—को एक नई दिशा प्रदान की। भारतेन्दु ने साहित्य को मनोरंजन के दायरे से निकालकर समाज-सुधार और राष्ट्र-प्रेम का माध्यम बनाया।

उनके नाट्य-योगदान को समझना हिंदी साहित्य के इतिहास को समझना है, क्योंकि उन्होंने ही हिंदी रंगमंच की नींव रखी और उसे भारतीय यथार्थ से जोड़ा।

✿ भारतेंदु के नाट्य-योगदान को समझना

भारतेंदु के समय हिंदी में मौलिक नाटकों की परंपरा लगभग नगण्य थी। संस्कृत नाटकों की पांडित्यपूर्ण शैली या अंग्रेजी नाटकों के अपरिचित प्रभाव के बीच, भारतेंदु ने एक ऐसे रंगमंच की आवश्यकता महसूस की जो जनसामान्य की भाषा और समस्याओं को प्रस्तुत कर सके।

✿ हिंदी नाट्य साहित्य के जनक

- **मौलिक नाटकों की रचना:** उन्होंने 'वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति', 'भारत दुर्दशा', 'अंधेर नगरी', 'नील देवी' जैसे लगभग 17 मौलिक नाटकों और कई अनुदित नाटकों की रचना की।
- **विषय-वस्तु में परिवर्तन:** उनके नाटकों का केंद्रीय विषय **राष्ट्रीय चेतना, सामाजिक कुरीतियाँ, धार्मिक पाखंड और तत्कालीन राजनैतिक-आर्थिक दुर्दशा** था। उन्होंने नाटक को 'उपदेश' और 'मनोरंजन' का संतुलित मिश्रण बनाया।
- **यथार्थवादी दृष्टिकोण:** भारतेंदु ने नाटकों में तत्कालीन सामाजिक यथार्थ का सीधा चित्रण किया, जो संस्कृत नाटकों की आदर्शवादी परंपरा से भिन्न था।
- **लोक-शैली का प्रयोग:** उन्होंने लोक-नाट्य शैलियों (जैसे **रास, ख्याल, लावनी**) के तत्वों को अपने नाटकों में समाहित किया, जिससे उनके नाटक रंगमंच पर अधिक प्रभावी और जनता के लिए सुलभ हो सके।

भारतेंदु का सबसे महत्वपूर्ण और लोकप्रिय एकांकी-सा नाटक '**अंधेर नगरी**' (1881) उनके इसी दूरदर्शी नाट्य-योगदान का उत्कृष्ट उदाहरण है।

'अंधेर नगरी' का विस्तृत विश्लेषण

'अंधेर नगरी' एक अत्यंत छोटा, परंतु प्रभाव में विराट **प्रहसन (Farce)** है। यह नाटक मात्र एक रात में काशी में एक रईस के मनोरंजन के लिए लिखा गया था, लेकिन अपने तीखे व्यंग्य, सरल शिल्प और कालजयी संदेश के कारण यह नाटक आज भी उतना ही प्रासंगिक है।

4.1.1 कथावस्तु और संदेश

कथावस्तु (Plot)

नाटक की कथावस्तु अत्यंत सरल है, जिसे भारतेन्दु ने मात्र **छह दृश्यों** में कुशलता से पिरोया है:

1. **पहला दृश्य: बाह्य प्रांत:** महंत जी अपने दो शिष्यों—**नारायण दास** और **गोवर्धन दास**—के साथ शहर में प्रवेश करते हैं। वे शिष्य को उस शहर के बारे में पता लगाने भेजते हैं।
2. **दूसरा दृश्य: बाज़ार:** गोवर्धन दास बाज़ार का अवलोकन करता है, जहाँ **टके सेर भाजी** और **टके सेर खाजा** बिक रहा है। सब कुछ एक ही भाव में मिलने से वह खुश होता है और भविष्य के लिए मिठाई खरीदता है।
3. **तीसरा दृश्य: जंगल:** महंत जी गोवर्धन दास को बताते हैं कि यह **अंधेर नगरी** है जहाँ धर्म, अधर्म, न्याय, अन्याय सब एक बराबर हैं। वे उसे तुरंत शहर छोड़ने का आदेश देते हैं, लेकिन गोवर्धन दास सस्ते भोजन के लालच में वहीं रुक जाता है।
4. **चौथा दृश्य: राजसभा:** राजा, मंत्री और सेवक के साथ बैठे हैं। एक फरियादी आता है जिसकी बकरी दीवार गिरने से मर जाती है। राजा एक अत्यंत मूर्खतापूर्ण और हास्यास्पद ढंग से न्याय की प्रक्रिया शुरू करते हैं, जिसमें दीवार का कारीगर, चूने वाला, भिस्ती, कसाई, गड़रिया, और अंत में कोतवाल को दोषी ठहराया जाता है।
5. **पाँचवाँ दृश्य: अरण्य (कारागार के पास):** कोतवाल को फांसी दिए जाने की तैयारी होती है, पर वह दुबला-पतला होने के कारण फंदे में नहीं आता।
6. **छठा दृश्य: श्मशान:** राजा आदेश देता है कि फंदा खाली नहीं जाना चाहिए, इसलिए कोई मोटा व्यक्ति ढूंढा जाए। गोवर्धन दास, जो खूब खा-खाकर मोटा हो गया था, पकड़

लिया जाता है। फांसी के समय महंत जी आते हैं और एक युक्ति से गोवर्धन दास को बचाते हैं। महंत जी कहते हैं कि इस 'शुभ घड़ी' में फांसी चढ़ने वाला सीधे बैकुंठ जाएगा। यह सुनकर राजा (जो मूर्खता की पराकाष्ठा है) स्वयं फांसी चढ़ने के लिए तैयार हो जाता है, यह कहते हुए कि "जब बैकुंठ जाना है तो राजा ही जाएगा।"

संदेश (Message)

नाटक का मूल संदेश अत्यंत स्पष्ट है:

अंधेरे शासन की मूर्खता और अन्याय का अंत अत्यंत भयावह होता है, भले ही वह शुरुआत में आकर्षक (सस्ता) लगे।

- **शासन की आलोचना:** नाटक **मूर्ख और निरंकुश शासन व्यवस्था** पर सीधा प्रहार है। 'अंधेर नगरी' ऐसा राज्य है जहाँ कोई नियम-कानून नहीं है; न्याय केवल दिखावा है, और निर्णय बुद्धि के बजाय सनक और मनमानी पर आधारित होते हैं।
- **लोभ का दुष्परिणाम:** गोवर्धन दास का लोभ (सस्ते भोजन का लालच) ही उसे मृत्यु के द्वार तक ले जाता है। महंत जी का उपदेश कि "जहाँ टके सेर भाजी और टके सेर खाजा हो, वहाँ रहना उचित नहीं," नाटक का केंद्रीय नैतिक संदेश है।
- **सतर्कता का आह्वान:** नाटक यह चेतावनी देता है कि जहाँ **विवेक** और **तर्क** का अभाव हो, वहाँ क्षणिक सुख या लाभ के लिए रुकना आत्मघाती हो सकता है।

4.1.2 सामाजिक व्यंग्य और नैतिक संदेश

'अंधेर नगरी' प्रहसन होते हुए भी केवल हँसाने के लिए नहीं लिखा गया है; यह एक अत्यंत तीखा **सामाजिक और राजनैतिक व्यंग्य** है।

अन्याय, अव्यवस्था पर व्यंग्य

यह नाटक अपनी संक्षिप्तता में तत्कालीन सामाजिक-राजनैतिक विसंगतियों का दर्पण है।

- **मूर्ख राजा और चौपट राज:** नाटक का राजा बुद्धिहीन, स्वार्थी, आलसी और न्याय के प्रति पूर्णतः उदासीन है। वह न्याय की प्रक्रिया को मज़ाक बना देता है। बकरी मरने पर वह अंतहीन व्यक्तियों को दोषी ठहराता है—कारीगर, चूने वाला, भिंसी, आदि। यह दर्शाता है कि शासन अपनी **असफलता** का दोष छोटी-छोटी कड़ी पर डालकर स्वयं को बचाता है और अंत में सबसे कमजोर कड़ी (**कोतवाल**) को बलि का बकरा बनाता है। यह **ब्रिटिश शासनकाल** की निरंकुश, मनमानी और विवेकहीन न्याय प्रणाली पर सीधा कटाक्ष है।

व्यंग्य उदाहरण: "हम तो केवल हुक्म देने वाले हैं, हमारा न्याय तो धर्म के खंभे पर टिका है।"

- **अव्यवस्था और समरूपता (एकता की विडंबना):** शहर की सबसे बड़ी विडंबना है 'टका सेर भाजी, टका सेर खाजा'। यहाँ **मूल्य का कोई भेद नहीं है**, जो वस्तुतः **विवेक और गुणवत्ता का भेद** न होने का प्रतीक है। धार्मिक-अधार्मिक, न्याय-अन्याय, सत्य-असत्य—सब एक भाव में बिकते हैं। यह समाज और शासन की **नैतिक अव्यवस्था (Moral Disorder)** पर गहरा व्यंग्य है, जहाँ योग्यता और अयोग्यता में कोई अंतर नहीं किया जाता।
- **पेटू समाज और लालच:** गोवर्धन दास का चरित्र **लालची और अविवेकी** आम आदमी का प्रतिनिधित्व करता है जो तात्कालिक लाभ के लिए दूरगामी खतरों को नज़रअंदाज़ करता है। वह 'कढ़ी-पुलाव' के लालच में महंत जी की बुद्धिमानी भरी सलाह को ठुकरा देता है। यह उस भारतीय समाज पर व्यंग्य है जो अपनी छोटी-मोटी ज़रूरतों की पूर्ति के लिए बड़े **राष्ट्रीय और नैतिक हितों** की बलि चढ़ा देता है।
- **न्याय का नाटक:** चौथे दृश्य में न्याय प्रक्रिया की मूर्खता का चरम है। फांसी के लिए दोषी न मिलने पर 'मोटी देह' वाले को पकड़ना—यह दर्शाता है कि **फांसी (दंड) महत्वपूर्ण है, दोषी नहीं**। न्याय का उद्देश्य 'दोषी को दंड' देना नहीं, बल्कि 'राजा के आदेश का पालन' करना बन जाता है, चाहे वह कितना भी अन्यायपूर्ण हो।
-

नैतिक संदेश

नाटक का नैतिक संदेश महंत जी के शब्दों में निहित है:



fuc/k vkj ukVd

"सेत सेत सब एक से, जहाँ कपूर कपास।/ ऐसे देस कुदेस में, कबहूँ न कीजै बास।।"

यह अंधेर नगरी केवल एक भौगोलिक स्थान नहीं, बल्कि एक **मानसिकता** और **शासकीय प्रवृत्ति** का प्रतीक है। नाटक सिखाता है कि **विवेकहीन व्यवस्था** में **क्षणिक लाभ** के पीछे भागना घातक है। जहाँ **सत्य और असत्य** का अंतर मिट जाता है, वहाँ बुद्धिमान व्यक्ति का कर्तव्य है कि वह उस स्थान का त्याग कर दे।

4.1.3 भाषा, पात्र, संवाद और रूपक

'अंधेर नगरी' का शिल्प (नाट्य-शिल्प) इसे हिंदी साहित्य का एक कालजयी नाटक बनाता है। भारतेन्दु ने इसे मंचीय सफलता और तीव्र प्रभाव के लिए डिज़ाइन किया था।

❁□ सरल भाषा और संवाद

- **जनभाषा का प्रयोग:** नाटक की भाषा **खड़ी बोली हिंदी** है, लेकिन इसमें **लोक-भाषा** और **बाज़ारू शब्दावली** का भरपूर प्रयोग है। यह भाषा इतनी सहज, सरल और आम जनता के करीब है कि दर्शक आसानी से इससे जुड़ जाते हैं।
- **तीव्र और चुटीले संवाद:** संवाद छोटे, सीधे और व्यंग्यात्मक हैं। राजा और सेवक के संवादों में मूर्खता इतनी सघनता से भरी है कि हास्य के साथ-साथ करुणा और क्रोध भी पैदा होता है।

उदाहरण (राजा की मूर्खता): "(हँसकर) यह तो बड़ी विचित्र बात हुई कि कोतवाल की गर्दन मोटी है और फांसी का फंदा पतला।... अब ऐसा करो कि कोई मोटा आदमी पकड़ लाओ, जिसकी गर्दन फंदे में ठीक आ जाए।"

👤 पात्र और प्रतीकात्मकता

नाटक के पात्र चरित्र-चित्रण के बजाय **प्रतीक** के रूप में अधिक काम करते हैं:

पात्र	प्रतीकात्मकता
महंत	विवेक, ज्ञान, धर्म और दूरदर्शिता का प्रतीक। वह जीवन के सत्य को जानते हैं और गोवर्धन दास को बचाकर अपने ज्ञान की शक्ति सिद्ध करते हैं।
गोवर्धन दास	अविवेक, लोभ और पैट-प्रवृत्ति वाला आम भारतीय। वह तात्कालिक लाभ (सस्ता खाना) के लिए विवेक (महंत की सलाह) को त्याग देता है।
नारायण दास	आज्ञाकारी शिष्य और संतुलित व्यवहार का प्रतीक। वह महंत जी की आज्ञा का पालन कर शहर छोड़ देता है।
राजा	अज्ञानी, निरंकुश, मनमौजी और अव्यवस्थित ब्रिटिश/सामंती शासन का प्रतीक। वह अपनी मूर्खता के कारण अंततः स्वयं ही मृत्यु को प्राप्त होता है।
सेवक, मंत्री, कारीगर, आदि	भ्रष्ट, डरपोक, और अवसरवादी नौकरशाही और समाज के विभिन्न वर्गों का प्रतीक जो व्यवस्था की मनमानी के सामने नतमस्तक हैं।

Export to Sheets

❏ रूपक (Allegory)

'अंधेर नगरी' मात्र एक नाटक नहीं, बल्कि एक **विशाल रूपक** है:

- 'अंधेर नगरी': यह **ब्रिटिश शासनकाल** के भारत या किसी भी तानाशाही, अज्ञानी और निरंकुश शासन व्यवस्था का रूपक है।
- 'चौपट राजा': यह उस **शक्तिशाली लेकिन बुद्धिहीन शासक वर्ग** का रूपक है, जो केवल अपने स्वार्थ के लिए शासन करता है।
- 'टका सेर भाजी, टका सेर खाजा': यह उस **नैतिक शून्यता और विवेकहीनता** का रूपक है, जहाँ मूल्य, नैतिकता और सत्य-असत्य का भेद मिट जाता है।

महंत जी का अपनी युक्ति से राजा को फांसी पर चढ़वा देना यह दर्शाता है कि **अज्ञानता, मूर्खता और अन्याय की चरम सीमा** स्वयं ही अपने **विनाश** का कारण बन जाती है।

fuc/k vkj ukVd

❗ निष्कर्ष

भारतेंदु हरिश्चंद्र का 'अंधेर नगरी' उनके नाट्य-योगदान की कसौटी है। यह नाटक सिद्ध करता है कि एक महान साहित्यकार अपने गंभीरतम विचारों को अत्यंत सरल, हास्यपूर्ण और संक्षिप्त शैली में भी प्रस्तुत कर सकता है। यह केवल एक प्रहसन नहीं, बल्कि **राजनीतिक व्यंग्य** का एक **तीखा उपकरण** है, जिसने जनता को तत्कालीन **शासन की निरर्थकता** और **अपने लोभ** के दुष्परिणामों से परिचित कराया।

इकाई 4.2: जयशंकर प्रसाद

उद्देश्य:

fuc/k vkj ukVd

- प्रसाद के नाट्य साहित्य को समझना
- 'स्कंदगुप्त' का विश्लेषण
- ऐतिहासिक नाटक की विशेषताओं का अध्ययन

विषय:

4.2.1 स्कंदगुप्त

- ऐतिहासिक नाटक की विशेषताएँ

4.2.2 राष्ट्रवाद, आदर्शवाद और चरित्र चित्रण

- देशभक्ति, त्याग, कर्तव्य

4.2.3 भाषा और नाट्य शिल्प

- काव्यात्मक भाषा, संवाद शैली

❁ जयशंकर प्रसाद और उनका नाट्य साहित्य (Jaishankar Prasad and His Dramatic Literature)

जयशंकर प्रसाद (1889-1937) हिंदी साहित्य के छायावादी युग के चार प्रमुख स्तंभों में से एक हैं। वे न केवल एक महान कवि थे, बल्कि एक असाधारण नाटककार भी थे, जिन्होंने हिंदी नाटक को एक नई दिशा और गहराई प्रदान की। उन्होंने संस्कृत, प्राचीन भारतीय इतिहास और पाश्चात्य नाट्य-शिल्प के तत्वों को मिलाकर ऐसे ऐतिहासिक नाटक लिखे जो भारतीय संस्कृति और राष्ट्रवाद की भावना से ओत-प्रोत थे।

प्रसाद के नाटकों की मुख्य विशेषता यह है कि वे **यथार्थ के धरातल पर आदर्शवाद** की स्थापना करते हैं। उनके नाटकों का उद्देश्य केवल मनोरंजन करना नहीं, बल्कि दर्शकों और पाठकों को **भारतीय इतिहास की गरिमा, त्याग, कर्तव्यनिष्ठा और राष्ट्रीय चेतना** से परिचित कराना था।

उनके प्रमुख नाटकों में 'राज्यश्री', 'अजातशत्रु', 'जनमेजय का नागयज्ञ', 'कामना', 'स्कंदगुप्त', 'चंद्रगुप्त' और 'ध्रुवस्वामिनी' शामिल हैं। इन सभी में, '**स्कंदगुप्त**' (1928) और '**चंद्रगुप्त**' हिंदी के सर्वश्रेष्ठ ऐतिहासिक नाटकों में गिने जाते हैं।

'स्कंदगुप्त' का विश्लेषण (Analysis of 'Skandagupta')

'स्कंदगुप्त' जयशंकर प्रसाद का एक **ऐतिहासिक नाटक** है, जो **गुप्त वंश** के महान सम्राट **स्कंदगुप्त विक्रमादित्य** के जीवन और शासनकाल पर आधारित है। यह नाटक स्कंदगुप्त के सिंहासनारूढ़ होने से लेकर **हूणों** के आक्रमण का सामना करने और साम्राज्य को स्थिरता प्रदान करने की संघर्ष-गाथा को चित्रित करता है।

नाटक पाँच अंकों में विभक्त है और इसकी केंद्रीय कथावस्तु **व्यक्तिगत संघर्ष, राष्ट्रीय संकट और प्रेम-त्याग** के ताने-बाने से बुनी गई है।

4.2.1 स्कंदगुप्त: ऐतिहासिक नाटक की विशेषताएँ (Characteristics of a Historical Play)

प्रसाद ने 'स्कंदगुप्त' में एक उत्कृष्ट **ऐतिहासिक नाटक** की रचना की है, जिसमें इतिहास, कल्पना और आदर्श का सुंदर समन्वय है।

- **ऐतिहासिक आधार और विश्वसनीयता:**

- नाटक की कथावस्तु गुप्त काल (5वीं शताब्दी ईस्वी) के इतिहास पर आधारित है। स्कंदगुप्त का संघर्ष, भीतरी विद्रोह (जैसे भटार्क का षड्यंत्र) और हूणों का आक्रमण ऐतिहासिक तथ्य हैं।

- प्रसाद ने इतिहास को केवल दोहराया नहीं है, बल्कि **आवश्यकतानुसार कल्पना का मिश्रण** करके उसे नाटक के लिए अधिक प्रभावी और रोचक बनाया है। जैसे, देवसेना और विजया के पात्रों की रचना ऐतिहासिक तथ्यों पर आधारित न होकर नाट्य-सौंदर्य के लिए की गई है।
- यह नाटक इतिहास के माध्यम से **वर्तमान राष्ट्रीय चेतना** को जगाने का प्रयास करता है।
- **संस्कृत नाट्य-शिल्प का प्रभाव:**
 - प्रसाद ने संस्कृत नाटकों से **भरतवाक्य** और **नांदी** जैसे तत्वों को अपनाया है।
 - यह नाटक '**प्रसादी नाटक**' कहलाते हैं क्योंकि इनमें भारतीय और पाश्चात्य नाट्य-शिल्प का मेल है। ये नाटक मंचन की दृष्टि से कठिन माने जाते थे, क्योंकि इनमें दृश्यों की अधिकता और काव्यात्मक संवादों की प्रधानता थी।
- **राष्ट्रीय चेतना का उद्घोष:**
 - नाटक का मूल स्वर **राष्ट्रप्रेम और देशभक्ति** है। स्कंदगुप्त का उद्देश्य केवल सिंहासन प्राप्त करना नहीं, बल्कि **आर्यावर्त** को बाहरी आक्रमण (हूण) और आंतरिक कलह से मुक्त करना है।
 - नाटक में कई ऐसे संवाद और गीत हैं जो राष्ट्र की महिमा और कर्तव्य की भावना को दर्शाते हैं।

4.2.2 राष्ट्रवाद, आदर्शवाद और चरित्र चित्रण (Nationalism, Idealism, and Character Portrayal)

'स्कंदगुप्त' केवल ऐतिहासिक घटनाओं का वर्णन नहीं है, बल्कि यह **मानवीय मूल्यों, राष्ट्रीय आदर्शों और गहन चरित्रों** का भी चित्रण करता है।

A. राष्ट्रवाद, देशभक्ति और कर्तव्य (Nationalism, Patriotism, and Duty)

- **राष्ट्रवाद की भावना:** नाटक का केंद्रीय विषय '**राष्ट्र**' है। स्कंदगुप्त के चरित्र में व्यक्तिगत सुख से ऊपर राष्ट्र के प्रति **कर्तव्यनिष्ठा** का भाव स्पष्ट दिखाई देता है। वह अपने प्रेम (देवसेना) का त्याग करके भी साम्राज्य की रक्षा को सर्वोपरि मानता है।

- "मालव!" (स्कंदगुप्त का उद्घोष) "देश का भविष्य बनाना ही जीवन का उद्देश्य होना चाहिए।"
- **देशभक्ति और त्याग:** स्कंदगुप्त और देवसेना जैसे पात्रों के माध्यम से **स्वार्थहीन देशभक्ति** का आदर्श प्रस्तुत किया गया है।
- **देवसेना** का चरित्र **निष्काम प्रेम और त्याग** का प्रतीक है। वह स्कंदगुप्त के प्रति अपने प्रेम को त्याग कर राष्ट्र की सेवा में लीन हो जाती है। उसका प्रसिद्ध गीत, "**आह! वेदना मिली विदाई...**" त्याग और वैराग्य का चरम उत्कर्ष है।
- **कर्तव्य की महत्ता:** नाटक यह स्थापित करता है कि राजा या राष्ट्र-पुरुष के लिए **व्यक्तिगत संबंध और सुख से बढ़कर राज्य का कर्तव्य** होता है। स्कंदगुप्त सत्ता को भोग का साधन नहीं, बल्कि **दायित्व** मानता है।

B. प्रमुख चरित्र चित्रण (Character Portrayal)

चरित्र	विशेषताएँ	महत्व
स्कंदगुप्त	आदर्शवादी, कर्तव्यनिष्ठ, त्यागी, वीर योद्धा, भावुक।	नाटक का नायक । वह शक्ति और त्याग का संतुलित मिश्रण है। उसमें युधिष्ठिर जैसा धर्म-भाव और अर्जुन जैसा शौर्य है। वह प्रेम को त्याग कर साम्राज्य की रक्षा करता है।
देवसेना	निष्काम प्रेमी, त्याग की मूर्ति, आदर्शवादी, राष्ट्रभक्त।	आदर्शवादी प्रेम का प्रतीक। स्कंदगुप्त से निस्वार्थ प्रेम करती है और अंततः आजीवन अविवाहित रहकर राष्ट्र की सेवा करती है। उसके गीत नाटक की काव्यात्मक आत्मा हैं।
विजया	स्वार्थी, महत्वाकांक्षी, ईर्ष्यालु, भटार्क से प्रभावित।	स्वार्थ और लोभ का प्रतीक। वह नाटक में आंतरिक संघर्ष और षड्यंत्रों को जन्म देती है, जो स्कंदगुप्त के संघर्ष को और गहरा करते हैं।
भटार्क	षड्यंत्रकारी, देशद्रोही, महत्वाकांक्षी।	आंतरिक शत्रु का प्रतीक। वह सत्ता के लोभ में राष्ट्र के साथ विश्वासघात करता है, जो नाटक के संघर्ष को बल देता है।

4.2.3 भाषा और नाट्य शिल्प (Language and Dramatic Craftsmanship)

प्रसाद का 'स्कंदगुप्त' हिंदी नाट्य-साहित्य में अपनी **अनूठी भाषा शैली और शिल्पगत विशेषताओं** के कारण विशेष स्थान रखता है।

fuc/k vkj ukVd

A. काव्यात्मक भाषा (Poetic Language)

- **संस्कृतनिष्ठ और तत्सम प्रधान:** प्रसाद की भाषा **संस्कृतनिष्ठ** (तत्सम शब्दावली से युक्त) है, जो गुप्त काल की भव्यता और गरिमा को दर्शाती है। यह भाषा नाटक के ऐतिहासिक वातावरण को सशक्त रूप से प्रस्तुत करती है।
 - उदाहरण: 'विषाद', 'अवकाश', 'अभिनव', 'कर्तव्य', 'निस्संदेह' आदि शब्दों का प्रचुर प्रयोग।
- **भावों की गहराई:** प्रसाद की भाषा में **लाक्षणिकता और प्रतीकात्मकता** है। यह पात्रों के जटिल आंतरिक भावों, दर्शन और चिंतन को गहराई से व्यक्त करती है। उनकी भाषा में एक प्रकार की **अभिजात (Aristocratic)** सुंदरता है।
- **छंदबद्ध गीत:** नाटक में कई स्थानों पर **छंदबद्ध गीतों** का समावेश किया गया है, जो नाटक के कथानक को गति देने के साथ-साथ पात्रों की मनोदशा और दार्शनिक विचारों को अभिव्यक्त करते हैं।
 - **देवसेना का गीत:** "आह! वेदना मिली विदाई!..." यह करुणा, त्याग और दार्शनिकता का अद्भुत संगम है।

B. संवाद शैली (Dialogue Style)

- **दीर्घ और चिंतनशील संवाद:** प्रसाद के संवाद प्रायः **दीर्घ (लंबे)** और **चिंतनप्रधान** होते हैं। वे केवल कहानी को आगे नहीं बढ़ाते, बल्कि **जीवन-दर्शन, राजनीति, इतिहास और प्रेम** जैसे विषयों पर पात्रों के विचारों को प्रकट करते हैं।
- **मंचन में कठिनाई:** अत्यधिक काव्यात्मकता, दार्शनिक गहराई और लंबे संवादों के कारण 'स्कंदगुप्त' जैसे नाटकों का **मंचन (Stage Presentation)** थोड़ा कठिन माना

जाता था। आलोचकों ने इसे 'काव्य-नाटक' की श्रेणी में रखा है, क्योंकि यहाँ साहित्य और कविता का तत्व अभिनय और मंचन के तत्व पर हावी हो जाता है।

- **नाटकीयता और संघर्ष:** संवादों में द्वंद्व और नाटकीयता मौजूद है। जैसे स्कंदगुप्त और विजया या स्कंदगुप्त और भटार्क के बीच के संवाद संघर्ष को तीव्र करते हैं।

■ निष्कर्ष (Conclusion)

'स्कंदगुप्त' जयशंकर प्रसाद की नाट्य-प्रतिभा का एक उत्कृष्ट उदाहरण है। यह नाटक भारतीय इतिहास के गौरवशाली अतीत को पुनर्जीवित करता है और राष्ट्रवाद, आदर्शवाद, त्याग और कर्तव्यनिष्ठा जैसे शाश्वत मूल्यों को स्थापित करता है।

प्रसाद ने एक ऐसे नायक (स्कंदगुप्त) का निर्माण किया जो व्यक्तिगत सुखों को त्याग कर राष्ट्र के प्रति अपने दायित्व को निभाता है, तथा एक ऐसी नायिका (देवसेना) को प्रस्तुत किया जो निष्काम प्रेम और वैराग्य का सर्वोच्च आदर्श स्थापित करती है। अपनी काव्यात्मक, संस्कृतनिष्ठ भाषा और चिंतनशील संवाद-शैली के साथ, 'स्कंदगुप्त' हिंदी साहित्य में एक अविस्मरणीय ऐतिहासिक और सांस्कृतिक धरोहर के रूप में प्रतिष्ठित है।



इकाई 4.3: समकालीन हिंदी नाटक

उद्देश्य:

fuc/k vkj ukVd

- समकालीन नाटक की विषयवस्तु को समझना
- आधुनिक नाट्य प्रवृत्तियों का अध्ययन
- प्रमुख समकालीन नाटककारों का परिचय

विषय:

4.3.1 विषयवस्तु

- सामाजिक यथार्थ, स्त्री विमर्श, अस्तित्वबोध

4.3.2 प्रवृत्तियाँ

- प्रयोगधर्मी नाटक, प्रतीकात्मक नाटक, यथार्थवादी नाटक

4.3.3 प्रमुख नाटककार

- मोहन राकेश, धर्मवीर भारती, विजय तेंदुलकर, बादल सरकार

यह इकाई **समकालीन हिंदी नाटक** के बहुआयामी परिदृश्य का विस्तृत अध्ययन प्रस्तुत करती है। इसका मुख्य उद्देश्य छात्रों को 20वीं शताब्दी के उत्तरार्ध और 21वीं शताब्दी के आरंभिक काल में हिंदी नाटक की **विषयवस्तु** और **शिल्पगत प्रवृत्तियों** से परिचित कराना है। इसके द्वारा, विद्यार्थी नाटक की सामाजिक भूमिका, आधुनिक जीवन के द्वंद्वों, और **मोहन राकेश, धर्मवीर भारती, विजय तेंदुलकर, तथा बादल सरकार** जैसे प्रमुख नाटककारों के योगदान को गहराई से समझ सकेंगे। इस अध्ययन से, हिंदी नाटक के

माध्यम से व्यक्त होने वाले **सामाजिक यथार्थ, स्त्री विमर्श, और अस्तित्वबोध** जैसे गहन विचारों का स्पष्टीकरण हो सकेगा।



fuc/k vkj ukVd

❁ समकालीन हिंदी नाटक: एक परिचय

समकालीन हिंदी नाटक का कालखंड सामान्यतः **मोहन राकेश** के उदय (लगभग 1950-60 के दशक) से शुरू माना जाता है, जिसने हिंदी नाट्य साहित्य को 'भारतेन्दु युग' और 'प्रसाद युग' की ऐतिहासिक, पौराणिक और रोमांटिक परिधि से निकालकर आधुनिकता की जटिल ज़मीन पर ला खड़ा किया। स्वतंत्रता के बाद के भारत में, राजनीतिक मोहभंग, तेजी से बदलते सामाजिक मूल्य, औद्योगीकरण का दबाव, और व्यक्ति की बढ़ती पहचान का संकट समकालीन नाटक की केंद्रीय चिंताएँ बन गईं।

समकालीन नाटककार ने केवल मनोरंजन के साधन के रूप में नाटक का उपयोग नहीं किया, बल्कि इसे **सामाजिक आलोचना, आत्मनिरीक्षण और वैचारिक क्रांति** का एक शक्तिशाली माध्यम बनाया। इस युग के नाटकों ने न केवल पारंपरिक रंगमंच की सीमाओं को तोड़ा, बल्कि कथ्य और शिल्प दोनों स्तरों पर व्यापक प्रयोग किए। इसने आधुनिक मनुष्य की विसंगतियों और संघर्षों को मंच पर उतारकर दर्शकों को केवल 'देखने' नहीं, बल्कि 'सोचने' पर मजबूर किया।

4.3.1 विषयवस्तु (Themes)

समकालीन नाटक की विषयवस्तु अत्यंत व्यापक और गहराई से आधुनिक जीवन के साथ जुड़ी हुई है। तीन प्रमुख विषयवस्तुएँ इस कालखंड के नाटकों में केंद्रीय स्थान रखती हैं: **सामाजिक यथार्थ, स्त्री विमर्श, और अस्तित्वबोध**।

क) सामाजिक यथार्थ (Social Realism)

सामाजिक यथार्थ समकालीन हिंदी नाटक की आत्मा है। स्वाधीनता के बाद देश की जनता ने जिन सपनों को संजोया था, वे जल्द ही भ्रष्टाचार, राजनीतिक अवसरवादिता और आर्थिक विषमता के कारण टूटने लगे। नाटककारों ने इस **भंग होते हुए यथार्थ** को पूरी ईमानदारी से चित्रित किया।

- **भ्रष्टाचार और राजनीति का खोखलापन:** मोहन राकेश के नाटकों में महानगरीय जीवन की ऊब और खोखलापन दिखाई देता है, जबकि बाद के नाटककारों ने सीधे तौर पर राजनीतिक पाखंड, सत्ता के दुरुपयोग और व्यवस्थागत भ्रष्टाचार को अपना विषय बनाया। **विजय तेंदुलकर** (मराठी, पर हिंदी में लोकप्रिय) और **स्वदेश दीपक** के नाटकों में व्यवस्था के क्रूर चेहरे का चित्रण मिलता है।
- **मध्यवर्गीय जीवन का द्वंद्व:** हिंदी का अधिकांश समकालीन नाटक **मध्यवर्ग** के तनावों, महत्वाकांक्षाओं और नैतिक पतन पर केंद्रित है। परिवार, विवाह और संबंधों के पारंपरिक ढाँचों का टूटना, आर्थिक दबाव और नैतिक दुविधाएँ इस यथार्थवाद की मुख्य पहचान हैं।
- **दलित और शोषित वर्ग की आवाज:** 1980 के बाद, नाटक ने हाशिए के लोगों, दलितों और शोषितों के मुद्दों को भी मजबूती से उठाया। **नुक्कड़ नाटक** इस सामाजिक यथार्थ को सीधे जनता तक पहुँचाने का सबसे प्रभावी माध्यम बना, जो जमीनी हकीकत को बिना किसी लाग-लपेट के प्रस्तुत करता था।

ख) स्त्री विमर्श (Feminist Discourse)

समकालीन नाटक ने हिंदी साहित्य में स्त्री के चित्रण को एक नए आयाम तक पहुँचाया। 'प्रसाद युग' की आदर्शवादी, पीड़ाग्रस्त नारी से निकलकर नाटक की स्त्री **आत्म-अन्वेषी, विद्रोही और अपने अस्तित्व के लिए संघर्षरत** व्यक्तित्व के रूप में सामने आई।

- **पहचान का संकट और टूटे रिश्ते:** नाटककारों ने पुरुष-प्रधान समाज में स्त्री की पहचान के संकट को गहराई से उकेरा। विवाह संस्था की विफलता, प्रेम की जटिलता,

और पति-पत्नी के बीच संवादहीनता मुख्य विषय बने। **मोहन राकेश** के नाटक '**आधे-अधूरे**' की **सावित्री** आधुनिक स्त्री की उस अधूरी यात्रा का प्रतीक है, जो जीवन में पूर्णता की तलाश में भटकती है।

- **पितृसत्ता का विरोध:** नाटक अब केवल स्त्री की पीड़ा नहीं, बल्कि **पितृसत्तात्मक संरचनाओं** के प्रति उसके सीधे विरोध को भी दर्शाता है। यह पुरुषवादी सोच और उसके द्वारा थोपी गई भूमिकाओं को चुनौती देती है।
- **नारी-पुरुष संबंधों की जटिलता:** **धर्मवीर भारती** का '**अंधा युग**' (यद्यपि प्रतीकात्मक है) में गांधारी का चित्रण, और समकालीन नाटकों में काम, मुक्ति और स्वायत्तता की तलाश एक प्रमुख बिंदु है। यह विमर्श केवल पुरुषों द्वारा लिखे गए नाटकों तक सीमित नहीं रहा, बल्कि **मृणाल पाण्डे**, **पुष्पा भारती** और **दीनदयाल** जैसे महिला नाटककारों ने भी स्त्री के आंतरिक संसार को सशक्त रूप में प्रस्तुत किया।

ग) अस्तित्वबोध (Existentialism)

पश्चिमी साहित्य के प्रभाव और स्वतंत्रता के बाद की निराशा ने हिंदी नाटक में **अस्तित्ववादी दर्शन** को जन्म दिया। इस दर्शन का मूल केंद्रीय विषय **आधुनिक मनुष्य का अकेलापन, मोहभंग, अर्थहीनता और चुनाव की स्वतंत्रता** है।

- **एकाकीपन और अजनबीपन:** महानगरीय जीवन की भीड़ में मनुष्य का **एकाकीपन** और अपने परिवेश से उसका **अजनबीपन** प्रमुखता से दर्शाया गया। व्यक्ति अपनी सामाजिक भूमिकाओं में बंधा है, पर भीतर से खाली और टूटा हुआ है।
- **जीवन की निरर्थकता:** नाटक जीवन के शाश्वत मूल्यों और अर्थों के प्रति **संदेह** व्यक्त करते हैं। युद्ध, हिंसा और सामाजिक अन्याय ने मानव अस्तित्व को निरर्थक बना दिया है। **धर्मवीर भारती** का '**अंधा युग**' (1953) इस विषयवस्तु का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है, जहाँ युद्धोत्तर तबाही के बीच मनुष्य के नैतिक विघटन और नियति के सामने उसकी लाचारी का प्रश्न उठाया गया है। यह नाटक 'मानव-नियति' और 'अंधे विश्वास' की भयंकर त्रासदी का चित्रण करता है।

- **अपूर्णता और तलाश:** मोहन राकेश के नाटकों में अस्तित्वबोध की गहरी छाप है। 'आधे-अधूरे' का हर पात्र पूर्णता की तलाश में है, पर सभी अधूरे हैं। यह आधुनिक व्यक्ति की उस पीड़ा को दर्शाता है जो निरंतर अपने लिए एक 'अर्थ' और 'पहचान' खोजने के संघर्ष में है।

4.3.2 प्रवृत्तियाँ (Trends/Characteristics)

समकालीन हिंदी नाटक की विषयवस्तु की तरह ही उसका शिल्प भी अत्यंत विविधतापूर्ण और प्रयोगात्मक रहा है। प्रमुख प्रवृत्तियों में **प्रयोगधर्मी नाटक**, **प्रतीकात्मक नाटक**, और **यथार्थवादी नाटक** शामिल हैं।

क) प्रयोगधर्मी नाटक (Experimental Drama)

हिंदी नाटककारों ने पारंपरिक रंगमंच की सीमाओं को तोड़कर और पश्चिमी नाट्य तकनीकों से प्रेरणा लेकर नए प्रयोग किए। यह प्रवृत्ति शिल्प और प्रस्तुति दोनों स्तरों पर दिखाई देती है।

- **शिल्पगत प्रयोग:** कथानक की पारंपरिक त्रिकोण (आरंभ, मध्य, अंत) संरचना को तोड़कर **मुक्त या खंडित संरचना** को अपनाया गया। 'कथा' पर कम और 'विचार' या 'भाव' पर अधिक जोर दिया गया। **फ्लैशबैक**, **चेतना-प्रवाह** और **काव्य-नाटक** जैसी विधाओं का प्रयोग हुआ।
- **रंगमंचीय प्रयोग:** रंगमंच के पारंपरिक 'प्रोसेनियम' (Proscenium) मंच से बाहर निकलकर '**एरेना**' (Arena) या '**बहुआयामी मंच**' (Multi-Dimensional Stage) का उपयोग किया गया। प्रकाश, ध्वनि और मंच सज्जा को प्रतीकात्मक बनाया गया। **बादल सरकार** का '**तीसरा रंगमंच**' (Third Theatre) इस प्रयोगधर्मिता का चरम बिंदु है, जिसने नाटक को पारंपरिक हॉल से बाहर निकालकर सीधे गलियों, चौराहों और जनसमूहों के बीच स्थापित किया।

- **भाषा का प्रयोग:** भाषा को केवल संवाद का माध्यम न रखकर उसे **प्रतीकात्मक, काव्यात्मक और कभी-कभी गद्यात्मक** रूप दिया गया। **मोहन राकेश** की भाषा में गहरी सांकेतिकता और **धर्मवीर भारती** की भाषा में काव्यात्मकता इसकी मिसाल हैं।

ख) प्रतीकात्मक नाटक (Symbolic Drama)

आधुनिक जीवन की जटिलता, गूढ़ दार्शनिक विचारों, और राजनीतिक-सामाजिक आलोचना को सीधे प्रस्तुत करने के बजाय, नाटककारों ने **प्रतीकों** के माध्यम से अभिव्यक्ति को अधिक प्रभावी बनाया।

- **प्रतीकों का उपयोग:** इस प्रवृत्ति में चरित्र, घटनाएँ, स्थान और वस्तुएँ मात्र **भौतिक इकाइयाँ** नहीं होतीं, बल्कि किसी **बड़े विचार, भाव या अवधारणा** का प्रतिनिधित्व करती हैं।
- **सर्वश्रेष्ठ उदाहरण:** धर्मवीर भारती का 'अंधा युग' (1953)। यहाँ अंधापन 'विवेकहीनता' या 'मोह' का प्रतीक है, युयुत्सु 'आधुनिक मनुष्य की दुविधा' का, अश्वत्थामा 'प्रतिशोध की अंधी आग' का और टूटे हुए पहिये 'नैतिक मूल्यों के पतन' का। नाटक महाभारत की कथा को प्रतीकात्मक रूप से प्रयोग करके समकालीन संकटों पर टिप्पणी करता है।
- **सार्वभौमिकता:** प्रतीकात्मकता नाटक को **स्थानीय सीमाओं से मुक्त** करके उसे **सार्वभौमिक** बनाती है, जिससे दर्शक विभिन्न कालों और स्थानों के संदर्भों में उसका अर्थ ग्रहण कर सकते हैं।

ग) यथार्थवादी नाटक (Realistic Drama)

प्रयोग और प्रतीक के समानांतर, समकालीन हिंदी नाटक में यथार्थवाद की एक सशक्त धारा भी प्रवाहित हुई, जो सीधे जीवन की समस्याओं और स्थितियों को उसी रूप में मंच पर उतारने में विश्वास रखती थी।

- **विषयों की स्पष्टता:** इस प्रवृत्ति के नाटक **सामाजिक समस्याओं**, जैसे - बेरोजगारी, गरीबी, महिला उत्पीड़न, जातिवाद और भ्रष्टाचार को बिना किसी दार्शनिक आवरण के

प्रस्तुत करते हैं। संवाद आम बोलचाल की भाषा के करीब होते हैं, ताकि दर्शक तुरंत जुड़ाव महसूस कर सकें।

- **मनोवैज्ञानिक यथार्थवाद:** इस धारा में केवल बाहरी यथार्थ ही नहीं, बल्कि **पात्रों के आंतरिक मनोभावों, कुंठाओं और जटिलताओं** को भी यथार्थवादी ढंग से चित्रित किया गया। **मोहन राकेश** के नाटक इस मनोवैज्ञानिक यथार्थवाद के शिखर हैं, जहाँ पात्रों के आपसी संवाद में छिपी हुई तनावपूर्ण चुप्पी और आंतरिक संघर्ष का गहरा चित्रण होता है।
- **'आधे-अधूरे' का उदाहरण:** **मोहन राकेश** का **'आधे-अधूरे'** (1969) आधुनिक परिवार के विघटन, पति-पत्नी के अहं टकराव, और यौन कुंठाओं को यथार्थवादी शिल्प में प्रस्तुत करता है, जहाँ एक ही अभिनेता विभिन्न पुरुष भूमिकाओं को निभाकर पुरुषों की एकरूपता पर व्यंग्य करता है।

4.3.3 प्रमुख नाटककार (Major Playwrights)

समकालीन हिंदी नाटक को उसकी पहचान दिलाने में निम्नलिखित चार नाटककारों का योगदान अविस्मरणीय है, जिन्होंने कथ्य और शिल्प दोनों स्तरों पर क्रांति की।

क) मोहन राकेश (Mohan Rakesh) (1925-1972)

मोहन राकेश को हिंदी के समकालीन नाट्य-आंदोलन का **अग्रदूत** माना जाता है। उनके तीन प्रमुख नाटक – **'आषाढ़ का एक दिन' (1958)**, **'लहरों के राजहंस' (1963)** और **'आधे-अधूरे' (1969)** – हिंदी नाट्य साहित्य के लिए मील के पत्थर हैं।

- **प्रमुख योगदान:** राकेश ने हिंदी नाटक को पहली बार **आधुनिक भावबोध** और **मनोवैज्ञानिक गहराई** प्रदान की। उन्होंने अतीत या मिथकों के सहारे समकालीन समस्याओं को उठाया, जिससे उनके नाटक कालातीत बन गए।

- **'आषाढ़ का एक दिन':** यह नाटक **कालिदास** के जीवन पर आधारित है, जिसमें रचनात्मकता, प्रेम और महत्वाकांक्षा के बीच के द्वंद्व को दर्शाया गया है। नाटक कालिदास की प्रेयसी **मल्लिका** के त्याग और एकाकीपन को केंद्र में रखता है।
- **'आधे-अधूरे':** इसे हिंदी का पहला सफल **मनोवैज्ञानिक यथार्थवादी नाटक** माना जाता है। यह मध्यमवर्गीय परिवार के विघटन, स्त्री की अपूर्णता की तलाश और पुरुष-स्त्री संबंधों की जटिलता का सजीव चित्रण है।
- **शैली:** उनकी भाषा गहरी सांकेतिकता, काव्यात्मकता और संक्षिप्तता से युक्त है। संवादों में **'मौन'** (Silence) का प्रयोग अत्यंत महत्वपूर्ण है, जो पात्रों के अनकहे आंतरिक संघर्षों को व्यक्त करता है।

ख) धर्मवीर भारती (Dharamvir Bharati) (1926-1997)

धर्मवीर भारती मुख्य रूप से कवि, उपन्यासकार और पत्रकार रहे, लेकिन उनका एकमात्र नाट्य-कृति **'अंधा युग' (1953)** उन्हें समकालीन नाटककारों की अग्रिम पंक्ति में ला खड़ा करती है।

- **प्रमुख योगदान:** 'अंधा युग' एक **काव्य-नाटक** है, जिसने हिंदी नाटक को **आधुनिक त्रासदी** और **अस्तित्ववादी दर्शन** से जोड़ा। यह नाटक **मिथक (महाभारत)** का उपयोग करके **आधुनिक मनुष्य की नियति, युद्ध के बाद की विभीषिका, सत्ता की क्रूरता और नैतिकता के पतन** पर टिप्पणी करता है।
- **विषयवस्तु:** नाटक में **उत्तर-युद्धकालीन मोहभंग और आशा एवं निराशा** के बीच का संघर्ष केंद्रीय है। 'अंधेपन' का प्रतीकवाद (विवेकहीनता) नाटक को एक सार्वभौमिक अपील देता है।
- **शैली:** भारती ने **काव्य और नाटक** का सफल समन्वय किया। संवाद गेयतापूर्ण, प्रतीकात्मक और दार्शनिक गहराई वाले हैं। यह नाटक समकालीन चेतना को एक शाश्वत संदर्भ में प्रस्तुत करता है।



fuc/k vkj ukVd

ग) विजय तेंदुलकर (Vijay Tendulkar) (1928-2008)

भारतीय रंगमंच के दो महान स्तंभ: विजय तेंदुलकर और बादल सरकार का विस्तृत अध्ययन

विजय तेंदुलकर: क्रूर यथार्थवाद के प्रणेता

भारतीय रंगमंच के इतिहास में विजय तेंदुलकर का नाम स्वर्णाक्षरों में अंकित है। यद्यपि वे मूलतः मराठी भाषा के नाटककार थे, किंतु उनका प्रभाव केवल मराठी रंगमंच तक सीमित नहीं रहा, बल्कि समग्र भारतीय नाट्य-परंपरा पर उनकी अमिट छाप है। हिंदी रंगमंच पर उनका प्रभाव विशेष रूप से उल्लेखनीय है, क्योंकि उनके अधिकांश नाटकों का हिंदी में अनुवाद हुआ और इन नाटकों का मंचन हिंदी रंगमंच की प्रमुख घटनाओं में शामिल रहा। तेंदुलकर भारतीय रंगमंच के सबसे प्रभावशाली और साथ ही सबसे विवादास्पद नाटककारों में से एक माने जाते हैं। उनकी विवादास्पदता उनकी निर्भीकता का परिणाम है - वे समाज की उन सच्चाइयों को मंच पर लाने से कभी नहीं हिचकिचाए जिनसे समाज आँख चुराना चाहता था।

तेंदुलकर का सबसे महत्वपूर्ण योगदान भारतीय नाटक में 'क्रूर यथार्थवाद' या 'ब्रूटल रियलिज्म' की शुरुआत करना था। उनसे पहले का भारतीय रंगमंच अपेक्षाकृत सौम्य और परोक्ष था। सामाजिक समस्याओं को उठाया तो जाता था, लेकिन एक निश्चित सीमा के भीतर, एक निश्चित शालीनता के साथ। तेंदुलकर ने इस परंपरा को तोड़ा। उन्होंने जीवन की क्रूरता को वैसे ही दिखाया जैसी वह है - बिना किसी सौंदर्यीकरण के, बिना किसी कोमलता के आवरण के। उनके नाटकों में सामाजिक हिंसा केवल एक विषय नहीं है, बल्कि वह मंच पर जीवंत हो उठती है। यौन विकृतियाँ, जिन्हें पहले भारतीय रंगमंच में छुआ तक नहीं जाता था, तेंदुलकर के नाटकों में केंद्रीय विषय बन जाती हैं। दलितों का शोषण, जिसे आमतौर पर दूर से दिखाया जाता था, तेंदुलकर के यहाँ अपनी पूरी भयावहता में प्रस्तुत होता है। सत्ता की फासीवादी प्रवृत्तियाँ उनके नाटकों में एक भयावह लेकिन यथार्थपरक चित्रण पाती हैं।

तेंदुलकर के नाटकों की यह विशेषता उन्हें विवादास्पद बनाती है, लेकिन साथ ही अत्यंत प्रासंगिक भी। वे दर्शकों को असहज करते हैं, उन्हें झकझोरते हैं, उन्हें सोचने पर मजबूर करते हैं। उनके नाटक मनोरंजन के साधन मात्र नहीं हैं - वे समाज के सामने एक दर्पण हैं, एक ऐसा दर्पण जो सुंदर नहीं है, जो चापलूसी नहीं करता, बल्कि कठोर सच्चाई दिखाता है। इस दृष्टि से तेंदुलकर का रंगमंच एक राजनीतिक और सामाजिक हस्तक्षेप बन जाता है।

हिंदी रंगमंच पर तेंदुलकर का प्रभाव अकाट्य है। उनके नाटकों के हिंदी अनुवाद ने हिंदी रंगमंच को एक नई दिशा दी। हिंदी के प्रमुख रंगकर्मियों ने उनके नाटकों का मंचन किया और इन मंचनों ने हिंदी रंगमंच के इतिहास में महत्वपूर्ण स्थान बनाया। तेंदुलकर के नाटकों ने हिंदी नाटककारों को भी प्रेरित किया कि वे अपने समाज की कठोर सच्चाइयों को खुलकर मंच पर लाएँ। इस अर्थ में तेंदुलकर केवल एक नाटककार नहीं, बल्कि एक आंदोलन थे - एक ऐसा आंदोलन जिसने भारतीय रंगमंच की भाषा और शब्दावली को बदल दिया।

तेंदुलकर के प्रमुख नाटकों में 'घासीराम कोतवाल', 'शांतता! कोर्ट चालू आहे' (जिसका हिंदी अनुवाद 'खामोश! अदालत जारी है' के नाम से प्रसिद्ध है) और 'सखाराम बाइंडर' विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। ये तीनों नाटक अपनी अलग-अलग विषयवस्तु और शैली के बावजूद तेंदुलकर की उस विशिष्ट दृष्टि को प्रतिबिंबित करते हैं जो उन्हें अन्य नाटककारों से अलग करती है।

'घासीराम कोतवाल' ऐतिहासिक नाटक की श्रेणी में आता है, लेकिन यह केवल इतिहास का पुनर्लेखन नहीं है। यह नाटक अठारहवीं शताब्दी के पूना में घासीराम नाम के एक



fuc/k vkj ukVd

ब्राह्मण की कहानी कहता है, जो अपमान और शोषण का शिकार होने के बाद नाना फड़नवीस की सहायता से कोतवाल बन जाता है और फिर अपनी शक्ति का दुरुपयोग करते हुए एक अत्याचारी बन जाता है। लेकिन तेंदुलकर इस कहानी को केवल ऐतिहासिक घटना के रूप में प्रस्तुत नहीं करते। यह नाटक सत्ता की राजनीति, शोषण और प्रतिशोध के दुष्चक्र, और ब्राह्मणवादी सामाजिक व्यवस्था की क्रूरता का एक शक्तिशाली रूपक बन जाता है। नाटक में लावणी और लोक-नाट्य शैली का प्रयोग इसे दृश्यात्मक रूप से भी अत्यंत प्रभावी बनाता है। 'घासीराम कोतवाल' का हिंदी में अनुवाद और मंचन एक महत्वपूर्ण घटना थी क्योंकि इसने हिंदी दर्शकों को ऐतिहासिक नाटक की एक नई संभावना से परिचित कराया - एक ऐसा ऐतिहासिक नाटक जो अतीत के बहाने वर्तमान पर टिप्पणी करता है।

'सखाराम बाइंडर' तेंदुलकर का एक और विवादास्पद नाटक है जो परंपरागत विवाह संस्था और पुरुष-स्त्री संबंधों पर एक कठोर प्रहार करता है। सखाराम एक किताबें जिल्द करने वाला है जो विवाह संस्था में विश्वास नहीं करता और अलग-अलग समय पर अलग-अलग त्यागी हुई स्त्रियों को अपने घर में रखता है। नाटक में सखाराम और दो स्त्रियों - लक्ष्मी और चम्पा - के संबंधों की जटिलता को दिखाया गया है। यह नाटक विवाह, यौनिकता, स्वामित्व और स्वतंत्रता जैसे गंभीर प्रश्न उठाता है। तेंदुलकर यहाँ परंपरागत नैतिकता को चुनौती देते हैं और दिखाते हैं कि कैसे सामाजिक संस्थाएँ व्यक्ति की स्वतंत्रता को कुचल देती हैं। नाटक की भाषा खुली और कहीं-कहीं अश्लील मानी जाने वाली है, जिसने इसे और अधिक विवादास्पद बना दिया। लेकिन तेंदुलकर का तर्क यह था कि जीवन की सच्चाई को दिखाने के लिए भाषा की ईमानदारी आवश्यक है।

'शांतता! कोर्ट चालू आहे' या 'खामोश! अदालत जारी है' तेंदुलकर का संभवतः सबसे चर्चित और सबसे अधिक मंचित नाटक है। यह नाटक एक 'मॉक ट्रायल' या नकली मुकदमे की संरचना में लिखा गया है। नाटक में कुछ शहरी मध्यवर्गीय लोग एक पुराने

भवन में एकत्रित होते हैं और मनोरंजन के लिए एक नाटक की रिहर्सल करते हैं। यह नाटक एक मुकदमे का है जिसमें एक प्रोफेसर पर अपनी पत्नी की हत्या का आरोप है। लेकिन धीरे-धीरे यह रिहर्सल वास्तविक जीवन की जटिलताओं में बदल जाती है, विशेष रूप से जब समूह की एकमात्र अविवाहित युवा स्त्री लीला बेनारे को 'अभियुक्त' की भूमिका में रखा जाता है और उससे गहन व्यक्तिगत प्रश्न पूछे जाते हैं।

यह नाटक मध्यवर्गीय नैतिकता के पाखंड को उजागर करने वाली एक शक्तिशाली रचना है। नाटक दिखाता है कि कैसे सामाजिक रूप से 'सम्मानित' और 'शिक्षित' लोग एक स्त्री के यौन जीवन को लेकर कितने पूर्वाग्रहग्रस्त और क्रूर हो सकते हैं। लीला बेनारे, जो एक स्वतंत्र और आत्मनिर्भर महिला है, को इस 'नाटक' में उसके निजी जीवन के बारे में अपमानजनक प्रश्नों का सामना करना पड़ता है। नाटक में भाग लेने वाले लोग - एक वैज्ञानिक, एक वकील, एक सामाजिक कार्यकर्ता - सभी अपने 'सभ्य' मुखौटों के पीछे गहरी हिंसा और असहिष्णुता छिपाए हुए हैं। वे लीला को उसकी स्वतंत्रता और उसकी निजता के लिए दंडित करना चाहते हैं।

तेंदुलकर इस नाटक के माध्यम से यह प्रश्न उठाते हैं कि समाज को किसी व्यक्ति, विशेष रूप से एक स्त्री के निजी जीवन में हस्तक्षेप करने का क्या अधिकार है। नाटक यह भी दिखाता है कि कैसे मध्यवर्गीय समाज दोहरे मानदंड रखता है - पुरुषों के लिए एक और स्त्रियों के लिए दूसरा। लीला का 'अपराध' यह है कि वह एक स्वतंत्र जीवन जी रही है, कि उसकी अपनी इच्छाएँ और आकांक्षाएँ हैं। मॉक ट्रायल की यह संरचना बेहद प्रभावी है क्योंकि यह दिखाती है कि कैसे हर समय, हर स्थान पर, स्त्रियाँ एक अदृश्य अदालत में खड़ी रहती हैं जहाँ समाज उन्हें परखता है, आँकता है और दंडित करता है।



fuc/k vkj ukVd

नाटक का अंत त्रासद है। लीला, जो शुरुआत में आत्मविश्वासी और मुखर थी, धीरे-धीरे टूट जाती है। जब उससे यह पूछा जाता है कि क्या उसने कभी गर्भपात कराया है, तो वह अंततः स्वीकार करती है। यह स्वीकारोक्ति उसके लिए एक भावनात्मक और मनोवैज्ञानिक पराजय है। नाटक का अंत एक गहरी चुप्पी में होता है - एक ऐसी चुप्पी जो दर्शकों को भी अपराधबोध से भर देती है क्योंकि वे भी इस 'मुकदमे' के मूक दर्शक और भागीदार रहे हैं।

'शांतता! कोर्ट चालू आहे' का हिंदी रंगमंच पर गहरा प्रभाव पड़ा। इस नाटक के अनेक यादगार मंचन हुए और यह नाटक हिंदी रंगमंच की एक क्लासिक रचना बन गया। नाटक की लोकप्रियता का एक कारण इसकी सार्वभौमिक प्रासंगिकता है - यह नाटक किसी एक काल या स्थान तक सीमित नहीं है। स्त्री के यौन जीवन पर समाज का अनैतिक निर्णय, मध्यवर्गीय नैतिकता का पाखंड - ये समस्याएँ आज भी उतनी ही प्रासंगिक हैं जितनी नाटक के लिखे जाने के समय थीं।

तेंदुलकर की नाट्य-शैली में कई विशेषताएँ हैं जो उन्हें अलग करती हैं। सबसे पहली बात यह कि उनके नाटक अक्सर हिंसक होते हैं - यह हिंसा केवल शारीरिक नहीं, बल्कि मनोवैज्ञानिक और भावनात्मक भी है। उनके पात्र एक-दूसरे को शब्दों से घायल करते हैं, एक-दूसरे का मनोवैज्ञानिक दोहन करते हैं। दूसरी बात, उनके नाटक भावनात्मक रूप से भड़काऊ हैं। वे दर्शकों को उदासीन नहीं रहने देते। दर्शक या तो नाटक के पक्ष में होंगे या विपक्ष में, लेकिन तटस्थ नहीं रह सकते। तीसरी बात, तेंदुलकर सामाजिक वर्जनाओं को तोड़ने से नहीं हिचकिचाते। वे उन विषयों को उठाते हैं जिन्हें भारतीय समाज में 'अछूत' माना जाता है - यौनिकता, यौन विकृतियाँ, पारिवारिक हिंसा, जातिगत शोषण।



fuc/k vkj ukVd

तेंदुलकर के नाटकों की एक और महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि वे दर्शकों को मानवीय क्रूरता के दर्शन कराकर आत्म-परीक्षण के लिए मजबूर करते हैं। उनके नाटकों में अच्छाई और बुराई का सरल विभाजन नहीं है। उनके पात्र जटिल हैं - वे एक साथ पीड़ित और अत्याचारी हो सकते हैं। 'घासीराम कोतवाल' में घासीराम एक शोषित ब्राह्मण से एक क्रूर शोषक बन जाता है। 'सखाराम बाइंडर' में सखाराम एक साथ पीड़ादायक और करुणा जगाने वाला है। यह जटिलता तेंदुलकर के नाटकों को यथार्थवादी बनाती है क्योंकि जीवन में भी पात्र इतने सरल नहीं होते।

तेंदुलकर का रंगमंच मनोरंजन से कहीं आगे जाकर एक सामाजिक और राजनीतिक वक्तव्य बन जाता है। उनके नाटक समाज की विसंगतियों, विद्रूपताओं और अन्यायों को उजागर करते हैं। वे दर्शकों को प्रश्न करने के लिए प्रेरित करते हैं - अपने समाज से, अपनी परंपराओं से, और सबसे महत्वपूर्ण, अपने आप से। क्या हम उन पूर्वाग्रहों और क्रूरताओं में भागीदार नहीं हैं जिन्हें हम मंच पर देखते हैं? क्या हम भी उस 'अदालत' के हिस्से नहीं हैं जो हर समय स्त्रियों, दलितों, और कमजोरों का फैसला करती रहती है?

हिंदी रंगमंच पर तेंदुलकर का प्रभाव बहुआयामी है। उन्होंने हिंदी नाटककारों को साहस दिया कि वे वर्जित विषयों को छुएँ। उन्होंने हिंदी रंगमंच को एक नई भाषा दी - एक ऐसी भाषा जो कठोर है, प्रत्यक्ष है, और झूठे सौंदर्यीकरण से मुक्त है। उन्होंने यह दिखाया कि रंगमंच केवल मनोरंजन या कला का माध्यम नहीं, बल्कि सामाजिक परिवर्तन का एक शक्तिशाली औजार हो सकता है। आज भी जब हिंदी में कोई नाटक सामाजिक यथार्थवाद की परंपरा में लिखा जाता है, तो उसमें तेंदुलकर की छाया अवश्य दिखाई देती है।

बादल सरकार: तीसरे रंगमंच के प्रणेता

बादल सरकार भारतीय रंगमंच के इतिहास में एक अद्वितीय स्थान रखते हैं। मूलतः बंगाली नाटककार होने के बावजूद, उनका योगदान समग्र भारतीय रंगमंच के लिए महत्वपूर्ण है, विशेष रूप से रंगमंच की प्रस्तुति शैली के संदर्भ में। हिंदी रंगमंच पर उनका प्रभाव गहरा और दूरगामी है। उनके नाटकों के हिंदी अनुवाद और मंचन ने हिंदी नाट्य-जगत को नई दिशा दी, लेकिन उनका सबसे क्रांतिकारी योगदान 'तीसरे रंगमंच' की अवधारणा है, जिसने भारतीय रंगमंच की समझ को ही बदल दिया।

fuc/k vkj ukVd

बादल सरकार का जन्म 1925 में हुआ था और उनका निधन 2011 में। उनका जीवन काल भारत के उथल-पुथल भरे समय से मेल खाता है - स्वतंत्रता संग्राम, देश का विभाजन, स्वतंत्रता के बाद की निराशा, आपातकाल, और सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन। इन सभी घटनाओं ने उनके रचनात्मक व्यक्तित्व को प्रभावित किया। बादल सरकार केवल एक नाटककार नहीं थे - वे एक दार्शनिक, एक चिंतक, और एक सामाजिक आंदोलनकारी भी थे। उनके लिए रंगमंच केवल कला का माध्यम नहीं था, बल्कि समाज को बदलने का एक साधन था।

बादल सरकार की सबसे महत्वपूर्ण देन 'तीसरे रंगमंच' या 'थर्ड थिएटर' की अवधारणा है। यह समझने के लिए कि तीसरा रंगमंच क्या है, हमें पहले यह समझना होगा कि पहले दो रंगमंच क्या हैं। पहला रंगमंच वह पारंपरिक, व्यावसायिक रंगमंच है जो बड़े थिएटर हॉलों में, महंगे सेट्स और तकनीकी साधनों के साथ, टिकट बेचकर होता है। यह रंगमंच मुख्यतः शहरी मध्यवर्ग के मनोरंजन के लिए होता है। दूसरा रंगमंच वह है जो पारंपरिक लोक-नाट्य परंपराओं - जैसे नौटंकी, जात्रा, तमाशा - का प्रतिनिधित्व करता है। यह रंगमंच ग्रामीण और अर्ध-शहरी जनता तक पहुँचता है, लेकिन इसमें आधुनिक नाट्य-चेतना की कमी होती है।

बादल सरकार का तीसरा रंगमंच इन दोनों से अलग और नई अवधारणा है। यह रंगमंच पारंपरिक हॉल, महंगे सेट और टिकटों की औपचारिकता से मुक्त है। इस रंगमंच का मंचन सीधे जनता के बीच होता है - मैदानों में, सड़कों पर, गाँवों में, या यहाँ तक कि हॉल के फर्श पर भी, जहाँ दर्शक और अभिनेता एक ही स्तर पर होते हैं। यह रंगमंच न्यूनतम संसाधनों में काम करता है - कोई भव्य सेट नहीं, कोई विस्तृत प्रकाश व्यवस्था नहीं, कोई महंगी वेशभूषा नहीं। जो कुछ है वह है अभिनेता का शरीर, उसकी आवाज़, और उसकी प्रतिबद्धता।

लेकिन तीसरा रंगमंच केवल एक तकनीकी या प्रस्तुति संबंधी परिवर्तन नहीं है। यह एक वैचारिक परिवर्तन है। बादल सरकार का मानना था कि रंगमंच को अभिजात्य वर्ग की कला से निकलकर जनसाधारण तक पहुँचना चाहिए। पारंपरिक रंगमंच में एक दूरी होती है - मंच और दर्शक दीर्घा के बीच, अभिनेता और दर्शक के बीच। तीसरा रंगमंच इस दूरी को मिटाता है। यहाँ दर्शक केवल निष्क्रिय देखने वाले नहीं हैं, बल्कि वे प्रदर्शन के सक्रिय भागीदार बन जाते हैं। वे प्रतिक्रिया कर सकते हैं, प्रश्न पूछ सकते हैं, कभी-कभी तो प्रदर्शन में हस्तक्षेप भी कर सकते हैं।

तीसरे रंगमंच की एक और महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि यह आर्थिक रूप से स्वतंत्र है। पारंपरिक रंगमंच को प्रायोजकों, सरकारी अनुदानों, या टिकट की बिक्री पर निर्भर रहना पड़ता है। यह निर्भरता अक्सर रचनात्मक स्वतंत्रता को सीमित कर देती है। तीसरा रंगमंच इस निर्भरता से मुक्त है। चूंकि इसमें कोई भारी खर्च नहीं है, इसलिए यह आर्थिक दबावों से मुक्त होकर काम कर सकता है। यह उन विषयों को उठा सकता है जो व्यावसायिक रंगमंच के लिए 'जोखिम भरे' होते हैं।



fuc/k vkj ukVd

बादल सरकार के नाटकों की विषयवस्तु उनकी सामाजिक और राजनीतिक प्रतिबद्धता को प्रतिबिंबित करती है। उनके नाटक सामाजिक न्याय, शहरीकरण की विसंगतियाँ, नौकरशाही की विफलता और पूंजीवादी शोषण जैसे गंभीर विषयों पर केंद्रित हैं। वे अस्तित्ववादी प्रश्नों से लेकर ठोस राजनीतिक मुद्दों तक की विस्तृत श्रृंखला को छूते हैं। उनके शुरुआती नाटक अधिक अस्तित्ववादी और व्यक्तिगत थे, लेकिन बाद में वे अधिक राजनीतिक और सामाजिक हो गए।

बादल सरकार के प्रमुख नाटकों में 'एवं इंद्रजीत', 'बाकी इतिहास' और 'पगला घोड़ा' विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इन नाटकों का हिंदी में व्यापक रूप से अनुवाद और मंचन हुआ, और ये हिंदी रंगमंच की महत्वपूर्ण रचनाएँ बन गईं।

'एवं इंद्रजीत' बादल सरकार का सबसे प्रसिद्ध और सबसे अधिक मंचित नाटक है। यह 1963 में लिखा गया था और यह आधुनिक भारतीय रंगमंच की एक क्लासिक रचना मानी जाती है। यह नाटक अस्तित्ववाद से प्रभावित है और महानगरीय जीवन की अर्थहीनता, ऊब और पहचान के संकट को दर्शाता है। नाटक का केंद्रीय चरित्र इंद्रजीत है, जो एक आधुनिक शहरी युवक है। लेकिन केवल एक इंद्रजीत नहीं है - नाटक में तीन इंद्रजीत हैं जो एक ही व्यक्ति के विभिन्न पहलुओं का प्रतिनिधित्व करते हैं।

नाटक एक सामान्य मध्यवर्गीय परिवार के दैनिक जीवन को दिखाता है - सुबह उठना, काम पर जाना, घर लौटना, खाना खाना, सोना। यह दिनचर्या दिन-प्रतिदिन दोहराई जाती है। इस दोहराव में ही जीवन की अर्थहीनता छिपी है। इंद्रजीत इस दोहराव से, इस यांत्रिक जीवन से मुक्ति पाना चाहता है। वह कुछ 'अलग' करना चाहता है, कुछ 'सार्थक' करना चाहता है। लेकिन क्या? वह स्वयं नहीं जानता। वह विभिन्न प्रयास करता है - लेखक बनने की कोशिश करता है, अभिनेता बनने की कोशिश करता है, लेकिन हर बार असफल

होता है। अंततः वह उसी यांत्रिक जीवन में वापस लौट आता है जिससे वह भागना चाहता था।

'एवं इंद्रजीत' आधुनिक मनुष्य की विडंबना को बेहद संवेदनशीलता से प्रस्तुत करता है। यह विडंबना यह है कि हम सब जानते हैं कि जीवन अर्थहीन और यांत्रिक हो गया है, लेकिन हम इस पैटर्न को तोड़ने में असमर्थ हैं। हम सब अपने-अपने 'इंद्रजीत' हैं - असंतुष्ट, बेचैन, लेकिन लाचार। नाटक का शीर्षक 'एवं इंद्रजीत' (और इंद्रजीत) भी महत्वपूर्ण है। 'एवं' का अर्थ है 'और' - यह सुझाता है कि इंद्रजीत अकेला नहीं है, हम सब इंद्रजीत हैं, और हर दिन नए इंद्रजीत पैदा हो रहे हैं।

नाटक की शैली भी उल्लेखनीय है। बादल सरकार ने यहाँ समय और स्थान की पारंपरिक सीमाओं को तोड़ा है। नाटक में अतीत, वर्तमान और भविष्य एक साथ मौजूद हैं। एक दृश्य समाप्त होने से पहले ही दूसरा शुरू हो जाता है। पात्र कभी दर्शकों से सीधे बात करते हैं, कभी एक-दूसरे से। यह तकनीक नाटक को एक स्वप्न जैसी गुणवत्ता प्रदान करती है, जो इसके अस्तित्ववादी विषय के अनुकूल है।

'एवं इंद्रजीत' का हिंदी रंगमंच पर गहरा प्रभाव पड़ा। इसने हिंदी नाटककारों और निर्देशकों को दिखाया कि रंगमंच केवल कहानी कहने का माध्यम नहीं, बल्कि दार्शनिक प्रश्न उठाने और अस्तित्व के गहरे अर्थों की खोज का माध्यम भी हो सकता है। नाटक की प्रायोगिक शैली ने हिंदी रंगमंच को पारंपरिक यथार्थवाद से आगे जाने के लिए प्रेरित किया।

'बाकी इतिहास' बादल सरकार का एक और महत्वपूर्ण नाटक है, लेकिन यह 'एवं इंद्रजीत' से बिल्कुल अलग है। यहाँ बादल सरकार अस्तित्ववादी प्रश्नों से आगे बढ़कर ठोस राजनीतिक और सामाजिक मुद्दों की ओर जाते हैं। 'बाकी इतिहास' का शीर्षक ही



fuc/k vkj ukVd

महत्वपूर्ण है - 'बाकी इतिहास' यानी वह इतिहास जो आधिकारिक इतिहास में दर्ज नहीं है, वह इतिहास जो आम लोगों का है, जो शोषितों और दमितों का है।

नाटक गाँव के सामान्य लोगों के जीवन को केंद्र में रखता है। यह दिखाता है कि कैसे बड़ी राजनीतिक और आर्थिक शक्तियाँ सामान्य लोगों के जीवन को प्रभावित करती हैं। गाँव में एक कारखाना खुलता है, जो पहले तो विकास का प्रतीक लगता है, लेकिन धीरे-धीरे यह स्पष्ट हो जाता है कि यह कारखाना वास्तव में गाँव के लोगों का शोषण कर रहा है, उनकी जमीन छीन रहा है, उनके पर्यावरण को नष्ट कर रहा है। नाटक यह भी दिखाता है कि कैसे नौकरशाही और पूंजीवाद मिलकर आम लोगों के विरुद्ध काम करते हैं।

'पगला घोड़ा' (पागल घोड़ा) बादल सरकार का एक और प्रभावशाली नाटक है जो शहरीकरण की समस्याओं, मध्यवर्गीय जीवन की निस्सारता और सामाजिक संवेदनहीनता को उजागर करता है। नाटक का केंद्रीय रूपक - पागल घोड़ा - एक शक्तिशाली प्रतीक है। घोड़ा स्वतंत्रता, शक्ति और गति का प्रतीक है, लेकिन जब वह पागल हो जाता है, तो वह विनाश का कारण बन सकता है। आधुनिक शहरी जीवन भी एक ऐसे ही पागल घोड़े की तरह है - तेज, अनियंत्रित, और संभावित रूप से विनाशकारी।

बादल सरकार की नाट्य-शैली में कई विशिष्ट तत्व हैं। सबसे पहले, उनके नाटक प्रायोगिक हैं। वे पारंपरिक नाट्य-संरचना से मुक्त हैं। समय और स्थान की सीमाएँ लचीली हैं। कथानक रेखिक नहीं, बल्कि चक्रीय या खंडित हो सकता है। दूसरे, उनके नाटक minimalist हैं, विशेष रूप से तीसरे रंगमंच के संदर्भ में। वे न्यूनतम साधनों में अधिकतम प्रभाव उत्पन्न करते हैं। तीसरे, उनके नाटक दर्शकों को सीधे भागीदारी के लिए आमंत्रित करते हैं। दर्शक और अभिनेता के बीच की दीवार को तोड़ा जाता है।

बादल सरकार के नाटकों में अभिनय की शैली भी विशिष्ट है। पारंपरिक रंगमंच में अभिनेता एक चरित्र को 'जीता' है, उस चरित्र में पूरी तरह डूब जाता है। लेकिन तीसरे रंगमंच में अभिनेता और चरित्र के बीच एक दूरी बनाए रखी जाती है। अभिनेता यह स्पष्ट करता है कि वह अभिनय कर रहा है। यह तकनीक ब्रेख्त के 'एलियनेशन इफ़ेक्ट' से प्रभावित है। इसका उद्देश्य यह है कि दर्शक भावनात्मक रूप से नाटक में पूरी तरह डूब न जाएँ, बल्कि एक आलोचनात्मक दूरी बनाए रखें और नाटक द्वारा उठाए गए प्रश्नों पर विचार करें।

तीसरे रंगमंच के माध्यम से बादल सरकार ने नाटक को एक शक्तिशाली राजनीतिक औजार बनाया। उनका मानना था कि रंगमंच केवल मनोरंजन या कलात्मक अभिव्यक्ति का साधन नहीं, बल्कि सामाजिक परिवर्तन का माध्यम है। तीसरा रंगमंच गाँवों में, मजदूरों के बीच, किसानों के बीच जाकर उन्हें उनकी समस्याओं के प्रति जागरूक करता है, उन्हें संगठित होने के लिए प्रेरित करता है। यह रंगमंच केवल समस्याएँ दिखाने तक सीमित नहीं रहता, बल्कि समाधान की दिशा में भी सोचता है।

बादल सरकार ने रंगमंच को एक सामुदायिक अनुभव बनाया। तीसरे रंगमंच में प्रदर्शन एक सामूहिक प्रक्रिया है। इसमें केवल नाटककार, निर्देशक और अभिनेता ही नहीं, बल्कि दर्शक भी शामिल होते हैं। प्रदर्शन के बाद अक्सर चर्चा होती है, जहाँ दर्शक अपने विचार व्यक्त करते हैं, प्रश्न पूछते हैं। इस तरह नाटक एक संवाद बन जाता है, न कि एकतरफा संचार।

हिंदी रंगमंच पर बादल सरकार का प्रभाव बहुआयामी है। उनके नाटकों के हिंदी अनुवाद ने हिंदी दर्शकों को एक नई प्रकार के रंगमंच से परिचित कराया। 'एवं इंद्रजीत' जैसे नाटकों ने हिंदी रंगमंच में अस्तित्ववादी विषयों की शुरुआत की। लेकिन उनका सबसे



fuc/k vkj ukVd

महत्वपूर्ण योगदान तीसरे रंगमंच की अवधारणा है। इस अवधारणा ने हिंदी के अनेक रंगकर्मियों को प्रेरित किया। कई हिंदी रंग-समूहों ने तीसरे रंगमंच के सिद्धांतों को अपनाया। उन्होंने गाँवों में, झुग्गी-झोपड़ियों में, मजदूरों और किसानों के बीच नाटक करना शुरू किया।

तीसरे रंगमंच ने यह सिद्ध किया कि रंगमंच के लिए भव्य थिएटर हॉल, महंगे सेट, और तकनीकी साधन आवश्यक नहीं हैं। जो आवश्यक है वह है प्रतिबद्धता, रचनात्मकता और दर्शकों से जुड़ने की इच्छा। इस दृष्टि से तीसरे रंगमंच ने रंगमंच को लोकतांत्रिक बनाया। यह अब केवल शहरी, शिक्षित, संपन्न वर्ग की कला नहीं रही, बल्कि यह सबकी कला बन गई।

बादल सरकार का रंगमंच एक प्रकार से आंदोलन था। यह केवल नाटक करने का एक तरीका नहीं, बल्कि समाज को देखने और बदलने का एक दृष्टिकोण था। उन्होंने यह दिखाया कि कला और राजनीति को अलग नहीं किया जा सकता, कि कला में राजनीतिक प्रतिबद्धता होना स्वाभाविक और आवश्यक है। लेकिन साथ ही उन्होंने यह भी स्पष्ट किया कि राजनीतिक रंगमंच का अर्थ केवल नारेबाजी या प्रचार नहीं है। राजनीतिक रंगमंच भी कलात्मक रूप से समृद्ध और भावनात्मक रूप से प्रभावी हो सकता है।

बादल सरकार की विरासत आज भी जीवंत है। भारत के विभिन्न भागों में, विशेष रूप से ग्रामीण और अर्ध-शहरी क्षेत्रों में, अनेक रंग-समूह तीसरे रंगमंच के सिद्धांतों पर काम कर रहे हैं। ये समूह जन-नाट्य मंच, आल्ट, आदि के नाम से जाने जाते हैं। ये समूह न केवल मनोरंजन प्रदान करते हैं, बल्कि सामाजिक और राजनीतिक जागरूकता फैलाते हैं। वे किसानों के आंदोलनों, मजदूरों के संघर्षों, पर्यावरण संरक्षण, और अन्य सामाजिक मुद्दों पर नाटक करते हैं।

तेंदुलकर और सरकार: तुलनात्मक दृष्टि

fuc/k vkj ukVd

विजय तेंदुलकर और बादल सरकार - ये दोनों भारतीय रंगमंच के दो स्तंभ हैं, लेकिन उनके दृष्टिकोण और शैली में महत्वपूर्ण अंतर हैं। तेंदुलकर का रंगमंच मुख्यतः शहरी और मध्यवर्गीय है। उनके पात्र अधिकतर शहरी मध्यवर्ग से आते हैं। उनके नाटकों का मंचन पारंपरिक थिएटर हॉलों में होता है। दूसरी ओर, बादल सरकार का रंगमंच, विशेष रूप से तीसरा रंगमंच, अधिक लोकोन्मुख है। यह गाँवों में, मजदूरों के बीच, सड़कों पर होता है।

विषयवस्तु की दृष्टि से भी दोनों में अंतर है। तेंदुलकर मुख्यतः मनोवैज्ञानिक और सामाजिक हिंसा, यौन विकृतियों, और सत्ता के दुरुपयोग जैसे विषयों पर ध्यान केंद्रित करते हैं। उनका दृष्टिकोण अधिक व्यक्तिगत और मनोवैज्ञानिक है। बादल सरकार, विशेष रूप से उनके बाद के नाटकों में, अधिक स्पष्ट रूप से राजनीतिक और आर्थिक मुद्दों पर ध्यान केंद्रित करते हैं। वे पूंजीवादी शोषण, नौकरशाही की विफलता, और वर्ग-संघर्ष जैसे विषयों को सीधे उठाते हैं।

शैली की दृष्टि से भी अंतर है। तेंदुलकर का रंगमंच यथार्थवादी है - क्रूर यथार्थवादी, लेकिन फिर भी यथार्थवादी। उनके पात्र यथार्थवादी तरीके से बोलते और व्यवहार करते हैं। मंचन भी यथार्थवादी होता है। बादल सरकार का रंगमंच अधिक प्रायोगिक और प्रतीकात्मक है। वे यथार्थवाद की सीमाओं को तोड़ते हैं। समय और स्थान लचीले हैं। पात्र कभी दर्शकों से सीधे बात करते हैं।

लेकिन इन सभी अंतरों के बावजूद, दोनों में कुछ समानताएँ भी हैं। दोनों ही प्रतिबद्ध नाटककार हैं जो अपने रंगमंच को सामाजिक परिवर्तन का माध्यम बनाना चाहते हैं। दोनों ही पारंपरिक और सुरक्षित रास्तों से हटकर नए प्रयोग करने से नहीं डरते। दोनों ही अपने समय के विवादास्पद नाटककार थे, और दोनों ने ही भारतीय रंगमंच को समृद्ध किया।

हिंदी रंगमंच के संदर्भ में, दोनों का योगदान अमूल्य है। तेंदुलकर ने हिंदी रंगमंच को साहस दिया - सामाजिक वर्जनाओं को तोड़ने का साहस, कठोर सच्चाइयों को दिखाने का साहस। बादल सरकार ने हिंदी रंगमंच को एक नई दिशा दी - रंगमंच को जनसाधारण तक ले जाने की दिशा, रंगमंच को एक राजनीतिक औजार बनाने की दिशा। आज का हिंदी रंगमंच इन दोनों महान कलाकारों का ऋणी है। उनके बिना भारतीय रंगमंच, और विशेष रूप से हिंदी रंगमंच, वह नहीं होता जो आज है।

■ निष्कर्ष

समकालीन हिंदी नाटक हिंदी साहित्य की एक अत्यंत गतिशील और जीवंत विधा है। इसने 20वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में अपने को पारंपरिक बंधनों से मुक्त करके आधुनिकता की कठोर जमीन पर स्थापित किया। **मोहन राकेश** के साथ शुरू हुआ यह सफर आज भी जारी है, जिसमें नाटककार **सामाजिक यथार्थ** की जटिलताओं, **स्त्री विमर्श** की मुखरता और **अस्तित्वबोध** के गहन प्रश्नों का सामना कर रहे हैं।

प्रयोगधर्मी, प्रतीकात्मक और यथार्थवादी प्रवृत्तियों के माध्यम से, नाटक ने न केवल मंच की भाषा बदली, बल्कि दर्शक और कलाकार के बीच के संबंध को भी पुनर्परिभाषित किया। **मोहन राकेश, धर्मवीर भारती, विजय तेंदुलकर और बादल सरकार** जैसे दिग्गजों ने हिंदी नाटक को वह वैचारिक और शिल्पगत दृढ़ता दी है, जिसके कारण यह आज भी समकालीन भारतीय समाज का एक शक्तिशाली और प्रासंगिक आईना बना हुआ है। यह नाटक हमें केवल देखने को नहीं कहता, बल्कि हमें अपने समय और स्वयं के अस्तित्व पर विचार करने के लिए मजबूर करता है।



fuc/k vkj ukVd

4.4 स्व-मूल्यांकन प्रश्न

4.4.1 बहुविकल्पीय प्रश्न (MCQs):

अंधेर नगरी और स्कंदगुप्त – प्रमुख तथ्य

1. 'अंधेर नगरी' का मुख्य उद्देश्य है:

- क) मनोरंजन
- ख) अन्याय और अव्यवस्था पर व्यंग्य
- ग) धार्मिक उपदेश
- घ) प्रेम कथा

उत्तर: ख) अन्याय और अव्यवस्था पर व्यंग्य

2. 'अंधेर नगरी' में 'टका सेर भाजी, टका सेर खाजा' क्या दर्शाता है:

- क) समृद्धि
- ख) मूल्य व्यवस्था की अराजकता
- ग) खुशहाली
- घ) न्याय

उत्तर: ख) मूल्य व्यवस्था की अराजकता

3. 'स्कंदगुप्त' नाटक का नायक कौन है?

- क) चंद्रगुप्त
- ख) स्कंदगुप्त
- ग) समुद्रगुप्त
- घ) अशोक

उत्तर: ख) स्कंदगुप्त



fuc/k vkj ukVd

4. प्रसाद के नाटकों में प्रमुख है:

- क) केवल सामाजिक समस्याएँ
- ख) राष्ट्रवाद, आदर्शवाद और इतिहास
- ग) केवल प्रेम कथाएँ
- घ) केवल व्यंग्य

उत्तर: ख) राष्ट्रवाद, आदर्शवाद और इतिहास

5. जयशंकर प्रसाद ने कुल कितने नाटक लिखे?

- क) 5
- ख) 7
- ग) 8
- घ) 10

उत्तर: ग) 8 (जैसे – स्कंदगुप्त, चंद्रगुप्त, ध्रुवस्वामिनी आदि)

6. 'आषाढ़ का एक दिन' के रचयिता हैं:

- क) भारतेन्दु
- ख) प्रसाद
- ग) मोहन राकेश
- घ) धर्मवीर भारती

उत्तर: ग) मोहन राकेश

7. समकालीन हिंदी नाटक में प्रमुख विषय है:

- क) केवल धार्मिक कथाएँ
- ख) सामाजिक यथार्थ, स्त्री विमर्श, अस्तित्वबोध
- ग) केवल ऐतिहासिक घटनाएँ
- घ) केवल प्रेम कहानियाँ

उत्तर: ख) सामाजिक यथार्थ, स्त्री विमर्श, अस्तित्वबोध



fuc/k vkj ukVd

8. 'अंधा युग' के रचयिता हैं:

- क) मोहन राकेश
- ख) धर्मवीर भारती
- ग) भारतेन्दु
- घ) प्रसाद

उत्तर: ख) धर्मवीर भारती

9. प्रयोगधर्मी नाटक का उदाहरण है:

- क) अंधेर नगरी
- ख) स्कंदगुप्त
- ग) आधे-अधूरे
- घ) चंद्रगुप्त

उत्तर: ग) आधे-अधूरे (मोहन राकेश)

10. नुक्कड़ नाटक की विशेषता है:

- क) बड़े मंच की आवश्यकता
- ख) सड़कों पर, जन-जन तक पहुँच
- ग) जटिल कथानक
- घ) महंगा निर्माण

उत्तर: ख) सड़कों पर, जन-जन तक पहुँच

4.4.2 लघु उत्तरीय प्रश्न (2-3 अंक):

1. 'अंधेर नगरी' के सामाजिक व्यंग्य को संक्षेप में समझाइए।
2. 'स्कंदगुप्त' में राष्ट्रवाद की अभिव्यक्ति कैसे हुई है?
3. प्रसाद के नाटकों की भाषा की विशेषताएँ बताइए।
4. समकालीन हिंदी नाटक की प्रमुख प्रवृत्तियाँ बताइए।



5. प्रयोगधर्मी नाटक क्या है? संक्षेप में समझाइए।

4.4.3 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (5-10 अंक):

fuc/k vkj ukVd

1. भारतेन्दु हरिश्चंद्र के 'अंधेर नगरी' नाटक का विस्तृत विश्लेषण करते हुए इसके सामाजिक व्यंग्य और नाट्य शिल्प पर प्रकाश डालिए।
2. जयशंकर प्रसाद के 'स्कंदगुप्त' नाटक का विस्तार से परिचय देते हुए इसमें राष्ट्रवाद, आदर्शवाद और चरित्र चित्रण का विवेचन कीजिए।
3. समकालीन हिंदी नाटक की विषयवस्तु और प्रवृत्तियों का विस्तृत वर्णन कीजिए।
4. हिंदी नाटक के विकास में भारतेन्दु और प्रसाद के योगदान का तुलनात्मक अध्ययन कीजिए।
5. आधुनिक हिंदी नाटक में प्रयोगधर्मिता और यथार्थवाद पर विस्तृत निबंध लिखिए।

मॉड्यूल 5: आलोचनात्मक एवं व्यावहारिक पक्ष



इकाई 5.1: निबंध और नाटक के प्रमुख आलोचकों के विचार

fuc/k vkj ukVd

उद्देश्य:

- प्रमुख आलोचकों के विचारों को समझना
- निबंध और नाटक की आलोचना के मानदंडों का अध्ययन
- आलोचनात्मक दृष्टि का विकास

विषय:

5.1.1 निबंध आलोचना

- शुक्ल, द्विवेदी, बाबू गुलाबराय के विचार

5.1.2 नाटक आलोचना

- भरतमुनि, अरस्तू, आधुनिक आलोचक

5.1.3 मूल्यांकन के मानदंड

- कथ्य, शिल्प, भाषा, प्रभाव

इकाई 5.1: निबंध और नाटक के प्रमुख आलोचकों के विचार

उद्देश्य

साहित्यिक आलोचना का प्राथमिक उद्देश्य किसी भी कलाकृति के मूल्य, संरचना, और प्रभाव का वस्तुनिष्ठ एवं सुसंगत मूल्यांकन करना होता है। निबंध (Essay) और नाटक (Drama) दो ऐसी विधाएँ हैं जिनकी प्रकृति, प्रयोजन और शिल्प एक दूसरे से पूर्णतः भिन्न हैं, अतः उनके मूल्यांकन के लिए विकसित मानदंड भी पृथक और विशिष्ट रहे हैं। इस



fuc/k vkj ukVd

इकाई का मुख्य उद्देश्य **प्रमुख आलोचकों के विचारों को समझना** है, जिन्होंने इन विधाओं को शास्त्रीय और आधुनिक परिप्रेक्ष्यों में परिभाषित किया है। इसके अंतर्गत, **निबंध और नाटक की आलोचना के मानदंडों का अध्ययन** करना आवश्यक है, ताकि यह ज्ञात हो सके कि कैसे समय के साथ आलोचनात्मक कसौटियाँ बदली हैं—भरतमुनि के 'रस' सिद्धांत से लेकर अरस्तू के 'विरचन' तक और आचार्य शुक्ल के 'भावयोग' से लेकर आधुनिक आलोचकों की 'रंगमंचीयता' तक। अंततः, इन सिद्धांतों के अध्ययन से पाठक और अध्येता में एक **आलोचनात्मक दृष्टि का विकास** होता है, जिससे वे साहित्यिक कृतियों का संतुलित और परिपक्व मूल्यांकन करने में सक्षम हो सकें। यह अध्ययन न केवल इन विधाओं की ऐतिहासिक यात्रा को दर्शाता है, बल्कि उनके शाश्वत मूल्यों को भी स्थापित करता है।

5.1.1 निबंध आलोचना

निबंध, गद्य की एक ऐसी विधा है जिसे हिंदी में **व्यक्ति की आत्माभिव्यक्ति** का सर्वश्रेष्ठ माध्यम माना गया है। इसकी आलोचना का केंद्रीय विषय सदैव निबंधकार के व्यक्तित्व और विषयवस्तु के बीच के संतुलन को मापना रहा है। हिंदी आलोचना के क्षेत्र में आचार्य रामचंद्र शुक्ल, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, और बाबू गुलाबराय ने निबंध की परिभाषा, वर्गीकरण और मूल्यांकन के लिए स्थायी मानदंड स्थापित किए हैं। इनके विचार निबंध की आलोचनात्मक परंपरा के आधारस्तंभ हैं।

क. आचार्य रामचंद्र शुक्ल के विचार

आचार्य रामचंद्र शुक्ल हिंदी निबंध के सबसे महत्वपूर्ण आलोचक, व्याख्याता और स्वयं में एक आदर्श निबंधकार माने जाते हैं। उनके निबंध संबंधी विचार उनकी कृति '**चिंतामणि**' की भूमिका तथा उनके विचारात्मक निबंधों में बिखरे हुए मिलते हैं। शुक्ल जी ने निबंध को केवल विचारों का संग्रह या विषय का तार्किक विश्लेषण नहीं माना, बल्कि उन्होंने इसे '**गद्य की कसौटी**' कहा। उनके लिए, कविता यदि 'हृदय की मुक्ति साधना' है, तो निबंध '**बुद्धि और हृदय के योग**' से उत्पन्न होने वाली एक कलाकृति है। शुक्ल जी के निबंध-आलोचना का केंद्रीय सिद्धांत यह है कि निबंध में **व्यक्ति-वैशिष्ट्य (Personality)** का



fuc/k vkj ukVd

पुट अवश्य होना चाहिए, किन्तु यह वैशिष्ट्य विषयवस्तु के चिंतन से अलग या उस पर हावी नहीं होना चाहिए।

शुक्ल जी ने निबंधों को मुख्य रूप से दो श्रेणियों में विभाजित किया: **विचारात्मक निबंध (Thought-based)** और **भावनात्मक/भावपरक निबंध (Emotional/Sentimental)**।

विचारात्मक निबंधों में, वे अपेक्षा करते हैं कि विषय का विवेचन गंभीरता, क्रमबद्धता और तार्किक सुसंगति के साथ किया जाए। ऐसे निबंधों में, लेखक की दृष्टि विषय के मूल तक पहुँचती है और एक व्यवस्थित 'मानसिक यात्रा' प्रस्तुत करती है। उदाहरण के लिए, उनके 'क्रोध', 'श्रद्धा और भक्ति' जैसे निबंधों में विषय का मनोवैज्ञानिक और दार्शनिक विश्लेषण अत्यंत गहन है, जहाँ लेखक की निजी भावनाएँ विषय के विवेचन को पुष्ट करती हैं, न कि उसे विचलित। शुक्ल जी के अनुसार, एक सच्चा विचारात्मक निबंधकार विषय के '**भावयोग**' को स्थापित करता है, जिसमें बुद्धि और हृदय का समन्वय दिखाई देता है। यह भावयोग ही निबंध को केवल शुष्क ज्ञान से ऊपर उठाकर कला का रूप प्रदान करता है।

उनके लिए, निबंधकार का '**सहृदयता**' होना आवश्यक है। सहृदयता का अर्थ है कि निबंधकार विषय के साथ भावनात्मक रूप से जुड़कर भी अपनी बौद्धिक तटस्थता बनाए रखे। शुक्ल जी ने उन निबंधों को निम्न श्रेणी का माना जो केवल सूचनात्मक या पत्रकारिता की शैली में लिखे गए हों, जिनमें लेखक का व्यक्तित्व, उसकी '**हृदय की प्रवृत्ति**' या उसका '**अध्ययन की गहराई**' परिलक्षित न हो। उन्होंने स्पष्ट किया कि निबंध का **शिल्प (Craft)** उसकी आत्मा के समान है; वाक्य-विन्यास सुगठित, भाषा परिष्कृत और संस्कृतनिष्ठ हो, और विचारों की अभिव्यक्ति में एक प्रकार का '**प्रवाह**' और '**गठान**' होना चाहिए। इस प्रकार, शुक्ल जी की आलोचना दृष्टि में, निबंध की श्रेष्ठता का मानदंड केवल विचार की मौलिकता नहीं, बल्कि उस मौलिक विचार को लेखक के निजी हृदय और बुद्धि के समन्वय से कलात्मक अभिव्यक्ति देने की क्षमता है।

ख. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के विचार

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने निबंध को आलोचना के बंधनों से मुक्त करने और उसमें **व्यक्तित्व की स्वच्छंदता (Freedom of Personality)** को स्थापित करने का कार्य किया। यदि शुक्ल जी ने विचारात्मक निबंधों को केंद्र में रखा, तो द्विवेदी जी की दृष्टि **ललित निबंधों** के तत्वों और उनकी अंतर्निहित सांस्कृतिक चेतना पर अधिक केंद्रित रही। द्विवेदी जी के लिए, निबंध लेखक की '**अव्यक्त**' आत्माभिव्यक्ति है। उनका मानना था कि निबंधकार का '**व्यक्तित्व**' ही निबंध की आत्मा है। उन्होंने निबंध को एक ऐसा माध्यम माना, जिसमें लेखक अपनी व्यक्तिगत रुचियों, स्मृतियों, और जीवन दर्शन को एक अनौपचारिक, आत्मीय शैली में पिरोता है।

द्विवेदी जी ने निबंध को '**आचार्यत्व**' के बोझ से मुक्त करके उसे एक '**सखाभाव**' प्रदान किया। उन्होंने निबंध को किसी भी विषय पर—चाहे वह 'कुटज' जैसा साधारण वृक्ष हो या 'नाखून क्यों बढ़ते हैं' जैसा सामान्य प्रश्न—स्वेच्छा से भटकने की छूट दी। उनकी आलोचना दृष्टि में, निबंध का मूल्य उसके द्वारा प्रदान की गई सूचना या तर्क में नहीं, बल्कि निबंधकार के **मानवीय स्पर्श, विनोदप्रियता और गहरी सांस्कृतिक जड़ता** में निहित होता है। उनके लिए, एक श्रेष्ठ निबंध वह है जो पाठक को यह अनुभव कराए कि लेखक उसके साथ सहज भाव से बातचीत कर रहा है, न कि उसे ज्ञान दे रहा है।

द्विवेदी जी की आलोचना का दूसरा महत्वपूर्ण पहलू **ऐतिहासिक और सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य** है। वे अपने निबंधों में विषय को इतिहास, पुराण, और लोक जीवन से जोड़कर देखते हैं, जिससे निबंध में एक अद्भुत '**विस्तार**' और '**गहराई**' आती है। उन्होंने निबंध की शैली को अधिक **लचीला और भाषिक रूप से समृद्ध** बनाने पर जोर दिया। उनकी भाषा में संस्कृत की तत्सम शब्दावली के साथ-साथ लोकभाषा के ठेठ शब्द भी सहजता से घुलमिल जाते हैं। इस प्रकार, जहाँ शुक्ल जी की आलोचना निबंध में '**गंभीर चिंतन**' और '**परिष्कृत शिल्प**' पर बल देती है, वहीं द्विवेदी जी की आलोचना निबंध में '**स्वच्छंद व्यक्तित्व**', '**सांस्कृतिक चेतना**' और '**अनौपचारिक आत्मीयता**' को सर्वोपरि महत्व



fuc/k vkj ukVd

देती है। वे निबंधकार को 'अपनी रुचियों का दास' बनने की स्वतंत्रता प्रदान करते हैं, बशर्ते वह अपने अनुभवों और विचारों को प्रामाणिक रूप से व्यक्त करे।

ग. बाबू गुलाबराय के विचार

बाबू गुलाबराय ने हिंदी आलोचना को अधिक **शास्त्रीय, व्यवस्थित और वर्गीकरण** पर आधारित दृष्टिकोण प्रदान किया। वे आचार्य शुक्ल और द्विवेदी के विचारों के बाद आए, और उन्होंने निबंध के स्वरूप को एक आलोचनात्मक ढांचे में बाँधने का प्रयास किया। गुलाबराय की आलोचना पद्धति मुख्य रूप से **विवेचनात्मक और विश्लेषणात्मक** है। उन्होंने निबंध को परिभाषित करते हुए कहा कि "निबंध उस गद्य रचना को कहते हैं जिसमें एक सीमित क्षेत्र के भीतर, किसी विषय का प्रतिपादन, वैयक्तिक विशेषता और विचारों की सुसंबद्धता के साथ किया गया हो।" इस परिभाषा में, उन्होंने **सीमित क्षेत्र (Scope)**, **वैयक्तिक विशेषता (Personality)**, और **सुसंबद्धता (Cohesion)**—तीनों को आवश्यक तत्व माना।

गुलाबराय की सबसे बड़ी देन निबंधों का **व्यवस्थित वर्गीकरण** है। उन्होंने निबंधों को चार प्रमुख वर्गों में बाँटा: **वर्णनात्मक (Descriptive)**, **विचारात्मक (Thought-based)**, **भावात्मक (Emotional)**, और **ललित (Belles-Lettres)**। उनके अनुसार, प्रत्येक वर्ग के निबंधों के मूल्यांकन के लिए अलग-अलग मानदंड होने चाहिए। उदाहरण के लिए, विचारात्मक निबंध में **तर्क की शुद्धता और विचारों की क्रमबद्धता** को महत्व दिया जाना चाहिए, जबकि भावात्मक निबंध में **संवेगों की प्रामाणिकता और भाषा के प्रवाह** को।

गुलाबराय ने निबंध में **संतुलन (Balance)** को महत्व दिया। उनका मानना था कि निबंधकार को विषयवस्तु के साथ-साथ अपने निजी व्यक्तित्व को भी अभिव्यक्ति देनी चाहिए, लेकिन इन दोनों के बीच एक कलात्मक संतुलन आवश्यक है। यदि व्यक्तित्व विषय पर हावी हो जाए, तो निबंध केवल आत्म-प्रलाप बन जाता है; यदि विषयवस्तु हावी हो जाए, तो वह केवल लेख या शोध बन जाता है। गुलाबराय ने ललित निबंधों की विशिष्टता को स्वीकार किया, जहाँ व्यक्तित्व का पुट अधिक होता है, लेकिन उन्होंने वहाँ

भी विषय के 'सौंदर्यानुभूति' और 'जीवन के प्रति राग' को निबंध का मूल आधार माना। संक्षेप में, बाबू गुलाबराय की आलोचना पद्धति ने निबंध के मूल्यांकन को एक **वैज्ञानिक और व्यवस्थित स्वरूप** प्रदान किया, जिससे विभिन्न प्रकार के निबंधों की आलोचना के लिए स्पष्ट मापदंड निर्धारित हो सके।

fuc/k vkj ukVd

5.1.2 नाटक आलोचना

नाटक की आलोचना, साहित्य की अन्य विधाओं की आलोचना से भिन्न है, क्योंकि यह केवल पठन की विषयवस्तु नहीं, बल्कि **प्रदर्शन की कला (Performance Art)** भी है। इसकी आलोचना में पाठ (Text) के साथ-साथ रंगमंच (Stage) और दर्शक (Audience) का तत्व भी शामिल होता है। नाटक आलोचना की परंपरा अत्यंत प्राचीन है, जिसके दो महान स्तंभ भरतमुनि और अरस्तू हैं, और आधुनिक काल में इसमें कई नए आयाम जुड़े हैं।

क. भरतमुनि के विचार (नाट्यशास्त्र)

भरतमुनि का '**नाट्यशास्त्र**' (लगभग 200 ईसा पूर्व से 200 ईस्वी) भारतीय नाट्य और काव्यशास्त्र का मूल आधारग्रंथ है। यह न केवल नाटक की कला का सिद्धांत प्रस्तुत करता है, बल्कि यह अभिनय, संगीत, नृत्य और रंगमंच की तकनीकों का भी विस्तृत विवरण देता है। भरतमुनि की नाट्य आलोचना का केंद्रीय सिद्धांत '**रस सिद्धांत**' है। उनके अनुसार, नाटक का **परम लक्ष्य (Ultimate Goal)** दर्शकों को **रस की अनुभूति** कराना है।

रस सिद्धांत का सार उनके प्रसिद्ध सूत्र में निहित है:

"विभावानुभावव्यभिचारिसंयोगाद्रसनिष्पत्तिः।" अर्थात्, विभाव (कारण), अनुभाव (शारीरिक अभिव्यक्ति), और व्यभिचारी/संचारी भावों (क्षणिक भावों) के संयोग से रस की निष्पत्ति होती है। नाटक के मूल्यांकन के लिए, आलोचक को यह देखना चाहिए कि क्या नाटककार **स्थायी भावों (Permanent Moods)** जैसे रति (प्रेम), हास (हास्य), शोक (करुणा), क्रोध (रौद्र), उत्साह (वीर), भय (भयानक), जुगुप्सा (बीभत्स), और विस्मय

(अद्भुत) को जगाने के लिए उपयुक्त विभावों और अनुभावों का उपयोग करने में सफल हुआ है।



नाट्यशास्त्र के अन्य महत्वपूर्ण आलोचनात्मक मानदंड निम्नलिखित हैं:

fuc/k vkj ukVd

1. **अभिनय (Abhinaya):** भरतमुनि ने अभिनय के चार प्रकार बताए: **आंगिक (Body language), वाचिक (Speech/Dialogue), आहार्य (Costume/Make-up), और सात्विक (Internal emotional expression)**। एक नाटक का मूल्यांकन इस आधार पर किया जाता है कि क्या ये चारों प्रकार के अभिनय नाटक के भावों को समुचित रूप से व्यक्त करने में सक्षम हैं। वाचिक अभिनय (संवाद) की कसौटी यह है कि वह पात्र और परिस्थिति के अनुकूल हो।
2. **वृत्तियाँ (Vrittis):** नाटक की शैलियाँ, जो कथावस्तु के स्वभाव को निर्धारित करती हैं— जैसे **कैशिकी (ललित), सात्वती (उत्साहजनक), आरभटी (उग्र), और भारती (वाचिक)**। नाटक की सफलता इन वृत्तियों के उपयुक्त मिश्रण और उपयोग पर निर्भर करती है।
3. **नाट्यसंधियाँ (Junctions):** कथावस्तु (Plot) के पाँच अनिवार्य चरण: मुख, प्रतिमुख, गर्भ, विमर्श, और निर्वहण। एक सफल नाटक वह है जिसकी कथावस्तु इन संधियों के माध्यम से तार्किक और प्रभावपूर्ण ढंग से विकसित होती है।

भरतमुनि की आलोचना दृष्टि नाटक को '**दृश्य काव्य**' मानती है, जिसका उद्देश्य **धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष** जैसे जीवन के पुरुषार्थों का उपदेश देना और साथ ही मनोरंजन करना भी है। रस की स्थापना ही उनकी आलोचना का सर्वोपरि मानदंड है।

ख. अरस्तू के विचार (पोएटिक्स)

अरस्तू (Aristotle) का ग्रंथ '**पोएटिक्स**' (**काव्यशास्त्र**) पश्चिमी नाट्य आलोचना का आधार है, जिसने सदियों तक नाटक, विशेष रूप से त्रासदी (Tragedy), के मूल्यांकन को प्रभावित किया है। भरतमुनि की तरह, अरस्तू ने भी नाटक की आलोचना के लिए एक



fuc/k vkj ukVd

व्यवस्थित ढाँचा प्रस्तुत किया। अरस्तू के अनुसार, त्रासदी "एक गंभीर, पूर्ण और निश्चित आयाम वाली क्रिया की अनुकृति है" और इसका लक्ष्य 'विरेचन' (Catharsis) है।

विरेचन अरस्तू की आलोचना का केंद्रीय सिद्धांत है, जिसका अर्थ है **करुणा (Pity)** और **भय (Fear)** जैसे भावों के उद्वेग (arousal) के माध्यम से उनका परिशोधन या शुद्धिकरण करना। दर्शक नाटक में निहित दुःख और त्रासदी को देखकर अपने भीतर की इसी प्रकार की भावनाओं को अनुभव करता है और अंत में उनसे मुक्त हो जाता है, जिससे उसे एक प्रकार की शांत मानसिक शांति (Pleasure) प्राप्त होती है।

अरस्तू ने त्रासदी के मूल्यांकन के लिए छह आवश्यक तत्वों का निर्धारण किया:

1. **कथावस्तु (Plot/Mythos):** अरस्तू के लिए, यह **सबसे महत्वपूर्ण तत्व** है, क्योंकि "कथावस्तु ही नाटक की आत्मा है।" एक आदर्श कथावस्तु में **आदि, मध्य और अंत** की सुसंबद्धता होनी चाहिए और उसमें '**एकता (Unity)**' होनी चाहिए, जिसका अर्थ है कि उसमें कोई भी घटना अनावश्यक न हो और प्रत्येक घटना अनिवार्य रूप से पिछली घटना से जुड़ी हो।
 - **विपर्यय (Peripeteia):** भाग्य का विपरीत हो जाना (Reversal of Fortune)।
 - **अभिज्ञान (Anagnorisis):** अज्ञान से ज्ञान की प्राप्ति (Recognition/Discovery)।
 - ये दोनों तत्व कथावस्तु को उत्कृष्ट बनाते हैं।
2. **चरित्र (Character):** चरित्रों को **श्रेष्ठ, विश्वसनीय और सुसंगत** होना चाहिए।
3. **विचार (Thought):** नाटक के संवादों में व्यक्त होने वाले सार्वभौमिक सत्य, तर्क और नैतिकता।
4. **पदविन्यास/संवाद (Diction):** भाषा की कलात्मकता और स्पष्टता।
5. **संगीत (Melody):** गीत और संगीत का प्रयोग।
6. **दृश्यविधान (Spectacle):** रंगमंच पर दृश्यों और वेशभूषा का प्रभाव (अरस्तू ने इसे सबसे कम महत्वपूर्ण माना)।

अरस्तू ने **त्रासदी नायक (Tragic Hero)** की अवधारणा दी, जो एक ऐसा व्यक्ति होता है जिसमें महानता होती है, लेकिन वह किसी **त्रासदीय दोष (Hamartia)** या निर्णायक त्रुटि



fuc/k vkj ukVd

के कारण पतन को प्राप्त होता है। अरस्तू की आलोचना दृष्टि में, एक सफल नाटक वह है जो इन छह तत्वों का सही उपयोग करके दर्शकों में करुणा और भय का भाव उत्पन्न कर विरेचन की प्रक्रिया को पूर्ण करता है।

ग. आधुनिक आलोचक (हिंदी संदर्भ)

बीसवीं सदी में, हिंदी नाटक आलोचना ने भरतमुनि के 'रस' और अरस्तू के 'विरेचन' के शास्त्रीय बंधनों से मुक्त होकर नाटक को **सामाजिक यथार्थ, रंगमंच की व्यवहारिकता और युगचेतना** के संदर्भ में देखना शुरू किया। आधुनिक हिंदी आलोचकों जैसे **डॉ. रामविलास शर्मा, डॉ. बच्चन सिंह, डॉ. नामवर सिंह, और डॉ. नेमिचंद्र जैन** ने नाटक की आलोचना के नए मापदंड स्थापित किए हैं।

आधुनिक आलोचना का सबसे महत्वपूर्ण मानदंड **रंगमंचीयता (Stageability)** है। शास्त्रीय युग में जहाँ नाटक को मुख्य रूप से 'श्रव्य काव्य' माना जाता था, वहीं आधुनिक आलोचक नाटक को **'दृश्य और श्रव्य'** दोनों के समन्वय के रूप में देखते हैं। डॉ. नेमिचंद्र जैन जैसे आलोचकों ने इस बात पर बल दिया कि नाटक की भाषा, शिल्प और संरचना ऐसी होनी चाहिए कि वह मंच पर सफलतापूर्वक और प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत की जा सके। नाटक केवल पढ़ने के लिए नहीं, बल्कि मंच पर जीवित होने के लिए लिखा जाता है।

दूसरा प्रमुख आधुनिक मानदंड **सामाजिक-ऐतिहासिक चेतना (Socio-Historical Consciousness)** है। आधुनिक नाटककार और आलोचक नाटक को समाज की समस्याओं, राजनीतिक विसंगतियों और वर्ग संघर्षों को दर्शाने का माध्यम मानते हैं। डॉ. रामविलास शर्मा जैसे मार्क्सवादी आलोचकों ने नाटक की सफलता को इस बात से आँका कि वह कितना प्रामाणिक रूप से **यथार्थ** को प्रस्तुत करता है और सामाजिक परिवर्तन के लिए कितनी चेतना पैदा करता है। इस दृष्टि से, नाटक की आलोचना अब केवल भाव या रस की नहीं, बल्कि **संघर्ष (Conflict)** और **सामाजिक सार्थकता** की आलोचना बन गई है।



fuc/k vkj ukVd

आधुनिक आलोचकों ने **संवाद (Dialogue)** को भी नया महत्व दिया। संवादों को केवल कथानक को आगे बढ़ाने का माध्यम नहीं, बल्कि **पात्रों के मनोविज्ञान** को उद्घाटित करने का उपकरण माना गया। एकांकी और नुक्कड़ नाटक जैसी नई विधाओं ने आधुनिक आलोचना के लिए नए मूल्यांकन मानदंड स्थापित किए, जहाँ **कम समय में तीव्र प्रभाव, प्रतीकात्मकता, और दर्शक के साथ सीधा जुड़ाव** महत्वपूर्ण बन गए। इस प्रकार, आधुनिक नाटक आलोचना प्राचीन सिद्धांतों का आदर करते हुए भी, नाटक को समकालीन जीवन की चुनौतियों और रंगमंच की व्यावहारिक आवश्यकताओं के आलोक में परखती है।

5.1.3 मूल्यांकन के मानदंड

निबंध और नाटक का मूल्यांकन करते समय, आलोचकों द्वारा सामान्यतः चार प्रमुख मानदंडों का प्रयोग किया जाता है। ये मानदंड किसी भी विधा के आंतरिक मूल्य और उसके बाह्य प्रभाव को मापने के लिए आवश्यक होते हैं। हालाँकि, प्रत्येक विधा के संदर्भ में इन मानदंडों का अनुप्रयोग भिन्न होता है।

क. कथ्य (Content/Theme)

कथ्य का अर्थ है **विषयवस्तु, मूल विचार या अंतर्निहित संदेश** जो लेखक अपनी कृति के माध्यम से व्यक्त करना चाहता है।

निबंध के संदर्भ में: निबंध का कथ्य उसकी **वैचारिकता की मौलिकता (Originality of Thought)**, **विषय की गहनता (Depth of Subject)** और **ज्ञान के क्षेत्र में उसका योगदान** से मापा जाता है। एक श्रेष्ठ निबंध का कथ्य केवल सुनी-सुनाई बातों का दोहराव नहीं होता, बल्कि उसमें लेखक का निजी चिंतन और मौलिक दृष्टिकोण परिलक्षित होता है। विचारात्मक निबंधों में, कथ्य की कसौटी उसकी तार्किक सुसंगति और विषय के विभिन्न पहलुओं को गहराई से छूने की क्षमता होती है। ललित निबंधों में, कथ्य का मूल्यांकन विषय के माध्यम से **जीवन के प्रति लेखक के दृष्टिकोण (Philosophy of Life)** और उसकी **सौंदर्यानुभूति** की अभिव्यक्ति के आधार पर किया जाता है।

नाटक के संदर्भ में: नाटक का कथ्य **कथानक (Plot)**, **उद्देश्य (Purpose)**, और **सार्वभौमिकता (Universality)** पर केंद्रित होता है। कथानक कितना आकर्षक, सुगठित और तार्किक रूप से विकसित हुआ है, यह देखा जाता है। नाटक का कथ्य **मानव जीवन के शाश्वत प्रश्नों (Eternal Questions)** और **सामाजिक संघर्षों** को कितनी सफलतापूर्वक प्रस्तुत करता है, यह उसकी श्रेष्ठता निर्धारित करता है। शास्त्रीय नाटक में, कथ्य की सफलता पुरुषार्थों के निरूपण से होती थी, जबकि आधुनिक नाटक में, कथ्य की कसौटी **यथार्थ की प्रामाणिकता, सामाजिक-राजनीतिक समस्याओं की पहचान, और परिवर्तन की प्रेरणा** देने की क्षमता होती है।

ख. शिल्प (Craft/Technique)

शिल्प का अर्थ है **कृति की संरचना, प्रस्तुति का तरीका और तकनीकी कौशल** जिसके द्वारा लेखक कथ्य को कलात्मक रूप प्रदान करता है।

निबंध के संदर्भ में: निबंध का शिल्प **शैली (Style)**, **वाक्य-विन्यास (Sentence Structure)**, और **विचारों की क्रमबद्धता (Cohesion of Ideas)** पर निर्भर करता है। शुक्ल जी के अनुसार, एक उत्तम निबंध का शिल्प उसकी भाषा की **गठाव** और विचारों के **प्रवाह** में निहित होता है। निबंध में अनावश्यक विस्तार, पुनरावृत्ति, या विषय से भटकना शिल्पगत दोष माने जाते हैं। ललित निबंधों में, शिल्प की सफलता उसकी **अनौपचारिकता, आत्मीयता और संवेदनात्मकता** को बनाए रखने में है, जहाँ विचारों का तारतम्य तर्क से नहीं, बल्कि **भावों के तार** से जुड़ा होता है। लेखक द्वारा चुनी गई शैली—चाहे वह व्यास शैली हो या समास शैली—कथ्य को कितना प्रभावशाली बनाती है, यह शिल्प का महत्वपूर्ण मापदंड है।

नाटक के संदर्भ में: नाटक का शिल्प अत्यंत जटिल होता है, जिसमें कई तत्व शामिल होते हैं: **कथानक का गठन (Plot Construction)**, **संवाद लेखन (Dialogue Writing)**, **पात्रों का चित्रण (Characterization)**, **दृश्य-विधान (Scene Arrangement)**, और **रंग-निर्देश (Stage Directions)**। एक सफल नाटक का शिल्प वह है जिसमें **संघर्ष (Conflict)** को प्रभावी ढंग से स्थापित किया गया हो, **चरित्र**

अपने संवादों और क्रियाओं से स्वाभाविक रूप से विकसित होते हैं, और **संवाद** संक्षिप्त, तीक्ष्ण और पात्रानुकूल हों। आधुनिक आलोचना में, **रंगमंचीय व्यवहारिकता (Practicality for Stage)** को शिल्प की कसौटी माना जाता है—अर्थात्, नाटक का मंचन कितना सरल, प्रभावशाली और गतिशील है। नाटक में **एकांकियों** का प्रयोग, **प्रतीकों** का समावेश, और **फ्लैशबैक** जैसी तकनीकें भी शिल्प के मूल्यांकन का हिस्सा होती हैं।

ग. भाषा (Language/Diction)

भाषा वह माध्यम है जिसके द्वारा लेखक कथ्य को मूर्त रूप देता है। यह अभिव्यक्ति की स्पष्टता, सौंदर्य और प्रभावशीलता का निर्धारण करती है।

निबंध के संदर्भ में: निबंध की भाषा की कसौटी उसकी **स्पष्टता (Clarity)**, **परिशुद्धता (Precision)**, और **लेखक के व्यक्तित्व का प्रतिबिंब (Reflection of Personality)** है। विचारात्मक निबंधों में, भाषा **तर्कसंगत, परिष्कृत और संस्कृतनिष्ठ** होने पर बल दिया जाता है, जैसा कि शुक्ल जी की भाषा में देखने को मिलता है। भावनात्मक और ललित निबंधों में, भाषा **सहज, आत्मीय, लोकोक्तियों और मुहावरों से युक्त** हो सकती है, जैसा कि द्विवेदी जी के निबंधों में है। एक सफल निबंध की भाषा अपने विषय और लेखक की शैली के अनुकूल होती है; यह न तो इतनी क्लिष्ट होनी चाहिए कि पाठक को समझने में कठिनाई हो, और न ही इतनी शिथिल कि विचारों का प्रभाव कम हो जाए। निबंध की भाषा में **गद्य का स्वाभाविक लय और प्रवाह** होना आवश्यक है।

नाटक के संदर्भ में: नाटक की भाषा की कसौटी अत्यंत व्यावहारिक होती है—वह **पात्रानुकूल (Suitable to Character)** और **मंचन योग्य (Actable)** होनी चाहिए। यदि नाटक ऐतिहासिक है, तो भाषा में उस काल की ध्वनि होनी चाहिए; यदि पात्र ग्रामीण हैं, तो भाषा में आंचलिकता का पुट आवश्यक है। नाटक के संवादों को **संक्षिप्त, प्रभावशाली और क्रियाशील (Action-oriented)** होना चाहिए, क्योंकि मंच पर लंबे संवाद ऊब पैदा कर सकते हैं। आलोचक यह देखते हैं कि क्या संवाद केवल सूचना देते हैं या वे पात्रों के **मनोवैज्ञानिक द्वंद्व** को भी उजागर करते हैं। भाषा का प्रयोग **नाटकीयता**

को कितना बढ़ाता है, और ध्वनि तथा उच्चारण के माध्यम से वह मंच पर कितना जीवंत हो उठता है, यह नाटक आलोचना में भाषा का प्रमुख मानदंड है।

घ. प्रभाव (Effect/Impact)

प्रभाव से तात्पर्य है कि कृति पढ़ने या देखने के बाद पाठक या दर्शक पर क्या मनोवैज्ञानिक, बौद्धिक या भावनात्मक प्रतिक्रिया होती है।

निबंध के संदर्भ में: निबंध का प्रभाव मुख्य रूप से **बौद्धिक या आत्मिक संतुष्टि** के रूप में देखा जाता है। एक श्रेष्ठ निबंध पाठक को केवल सूचना नहीं देता, बल्कि उसे **सोचने पर मजबूर** करता है, उसके **विचारों में एक नई दिशा** प्रदान करता है, और उसे एक प्रकार की **मानसिक उत्तेजना** देता है। भावनात्मक निबंधों में, प्रभाव **सहृदयता, करुणा, या विनोद** के रूप में महसूस किया जाता है, जहाँ पाठक लेखक के भावों के साथ एकरूप हो जाता है। निबंध का अंतिम प्रभाव पाठक के भीतर **आलोचनात्मक और चिंतनशील दृष्टिकोण** का विकास करना होना चाहिए, जो उसे जीवन के विभिन्न पहलुओं पर विचार करने के लिए प्रेरित करे।

नाटक के संदर्भ में: नाटक का प्रभाव सबसे पहले **रस निष्पत्ति** (भारतीय शास्त्रीयता) या **विरेचन** (पश्चिमी शास्त्रीयता) के रूप में देखा जाता है। भरतमुनि के अनुसार, नाटक का प्रभाव **'लोक रंजन' (Audience Entertainment)** और **'लोक उपदेश' (Moral Instruction)** दोनों होना चाहिए। अरस्तू के अनुसार, त्रासदी का प्रभाव **करुणा और भय के माध्यम से मन का शुद्धिकरण** होना चाहिए। आधुनिक आलोचना में, नाटक का प्रभाव **सामाजिक चेतना, दर्शकों की भागीदारी, और कथ्य की मार्मिकता** के माध्यम से मापा जाता है। एक सफल नाटक वह है जो दर्शकों को भावुक, आंदोलित या उत्साहित करता है, और उन्हें रंगमंच छोड़ने के बाद भी अपने कथ्य पर विचार करने के लिए बाध्य करता है। नाटक का प्रभाव उसकी **रंगमंच पर प्रस्तुति** के क्षणिक अनुभव से लेकर दर्शकों के **दीर्घकालिक सामाजिक या नैतिक दृष्टिकोण** में परिवर्तन तक फैला होता है।

निष्कर्ष

निबंध और नाटक की आलोचना की परंपराएँ अत्यंत समृद्ध और जटिल रही हैं। निबंध आलोचना में, आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने **बुद्धि और हृदय के समन्वय** तथा **गद्य की कसावट** पर बल दिया; आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने **व्यक्तिगत स्वच्छंदता और सांस्कृतिक चेतना** को निबंध की आत्मा माना; जबकि बाबू गुलाबराय ने **व्यवस्थित वर्गीकरण और संतुलन** को महत्व दिया। इन तीनों आलोचकों ने निबंध को एक ऐसी साहित्यिक विधा के रूप में स्थापित किया जो लेखक के व्यक्तित्व को उसके विचारों के माध्यम से कलात्मक रूप से प्रकट करती है।

वहीं, **नाटक आलोचना** में, भरतमुनि के **रस सिद्धांत** ने **भारतीय सौन्दर्यशास्त्र** का आधार बनाया, जहाँ नाटक का मूल्यांकन **भावों की अभिव्यक्ति और रस की अनुभूति** के आधार पर किया जाता है। इसके समानांतर, अरस्तू के **विरेचन सिद्धांत** ने पश्चिमी आलोचना को **कथावस्तु की एकता और त्रासदी नायक** के नैतिक पतन के माध्यम से **करुणा और भय** के परिशोधन पर केंद्रित किया। आधुनिक हिंदी आलोचकों ने इन शास्त्रीय मानदंडों के साथ **रंगमंचीयता, सामाजिक यथार्थ और संघर्ष** को जोड़कर नाटक को समकालीन जीवन का प्रभावी दर्पण बना दिया।

मूल्यांकन के चार प्रमुख मानदंड—**कथ्य, शिल्प, भाषा, और प्रभाव**—प्रत्येक विधा के लिए विशिष्ट कसौटियाँ प्रस्तुत करते हैं, लेकिन उनका मूल उद्देश्य लेखक के सृजनात्मक कौशल और कृति के समग्र मूल्य को मापना ही रहता है। इस प्रकार, आलोचना का अध्ययन हमें केवल कृतियों को समझने में मदद नहीं करता, बल्कि हमें साहित्य के उद्देश्य, प्रकृति और कलात्मकता को गहराई से पहचानने की अंतर्दृष्टि भी प्रदान करता है।



इकाई 5.2: निबंध और नाटक में भाषा, शैली एवं शिल्प

उद्देश्य:

fuc/k vkj ukVd

- भाषा और शैली के विभिन्न रूपों को समझना
- शिल्प के तकनीकी पहलुओं का अध्ययन
- रचनात्मक लेखन कौशल का विकास

विषय:

5.2.1 निबंध में भाषा और शैली

- विचारात्मक, व्यंग्यात्मक, व्यक्तित्वात्मक शैली

5.2.2 नाटक में भाषा और शैली

- संवाद शैली, मंचीय भाषा

5.2.3 शिल्पगत विशेषताएँ

- संरचना, प्रस्तुति, तकनीक

निबंध और नाटक में भाषा, शैली, और शिल्पगत विशेषताएँ

साहित्य के क्षेत्र में, भाषा और शैली किसी भी विधा की आत्मा होती हैं। ये न केवल विचारों को व्यक्त करने का माध्यम हैं, बल्कि वे लेखक के व्यक्तित्व, दृष्टिकोण और अभिव्यक्ति के उद्देश्य को भी निर्धारित करती हैं। **शिल्पगत विशेषताएँ** (संरचना, प्रस्तुति, तकनीक) उस नींव का काम करती हैं जिस पर यह साहित्यिक भवन खड़ा होता है।

इस विस्तृत अध्ययन में, हम दो प्रमुख गद्य विधाओं—निबंध और नाटक—में भाषा और शैली के तत्वों का, तथा उनके साझा शिल्पगत आयामों का सूक्ष्म विश्लेषण करेंगे।

5.2.1 निबंध में भाषा और शैली

निबंध (Essay) गद्य की वह विधा है जिसमें लेखक किसी विषय पर अपने विचारों, भावनाओं और दृष्टिकोणों को एक सुसंगठित और कलात्मक रूप में प्रस्तुत करता है। 'निबंध' शब्द का अर्थ ही है 'बाँधना' या 'गूँथना'—अर्थात् विचारों को एक सूत्र में पिरोना। इस बाँधने की प्रक्रिया में **भाषा** और **शैली** केंद्रीय भूमिका निभाती हैं।

निबंध की भाषा

निबंध की भाषा: विषयवस्तु, लेखक के व्यक्तित्व और पाठक वर्ग के अनुरूप एक विस्तृत अध्ययन

निबंध साहित्य की एक ऐसी विधा है जो लेखक के व्यक्तित्व, उसके विचारों और उसकी अभिव्यक्ति शैली का प्रत्यक्ष प्रतिबिंब होती है। निबंध लेखन में भाषा का चयन केवल एक तकनीकी निर्णय नहीं होता, बल्कि यह लेखक की बौद्धिक क्षमता, सांस्कृतिक पृष्ठभूमि और संप्रेषण कौशल का संपूर्ण परिचायक होता है। जब हम निबंध की भाषा की बात करते हैं, तो हमें यह समझना आवश्यक है कि भाषा केवल शब्दों का एक यांत्रिक संयोजन नहीं है, अपितु यह विचारों के प्रवाह का एक सजीव माध्यम है जो लेखक और पाठक के बीच एक अदृश्य सेतु का निर्माण करता है।

निबंध की भाषा का निर्धारण करते समय तीन प्रमुख तत्वों को ध्यान में रखना अनिवार्य होता है। प्रथम, विषयवस्तु की प्रकृति, जो यह निर्धारित करती है कि किस प्रकार की शब्दावली और अभिव्यक्ति शैली उपयुक्त होगी। द्वितीय, लेखक का व्यक्तित्व, जो उसकी अनूठी दृष्टि और चिंतन पद्धति को प्रतिबिंबित करता है। तृतीय, पाठक वर्ग की अपेक्षाएं और समझ का स्तर, जो यह निर्धारित करता है कि संप्रेषण कितना प्रभावी होगा। इन तीनों तत्वों का सामंजस्यपूर्ण संतुलन ही एक सफल निबंध की नींव रखता है।

विषयवस्तु के अनुरूप भाषा का चयन निबंध लेखन की प्रथम और सर्वाधिक महत्वपूर्ण आवश्यकता है। यदि निबंध का विषय दार्शनिक या वैज्ञानिक है, तो भाषा में गंभीरता और

तकनीकी परिशुद्धता अपेक्षित होती है। वहीं, यदि विषय सामाजिक, मनोवैज्ञानिक या व्यक्तिगत अनुभवों से संबंधित है, तो भाषा में सहजता और आत्मीयता का समावेश आवश्यक हो जाता है। इस प्रकार, विषय की प्रकृति ही भाषा के स्वरूप का प्राथमिक निर्धारक होती है।

लेखक का व्यक्तित्व निबंध की भाषा में एक विशिष्ट रंग भरता है। प्रत्येक लेखक की अपनी अभिव्यक्ति शैली होती है, जो उसके चिंतन, संस्कार और जीवन दृष्टि से निर्मित होती है। कुछ लेखक सरल और सीधी भाषा में अपनी बात कहना पसंद करते हैं, जबकि अन्य जटिल वाक्य संरचना और गहन शब्दावली का प्रयोग करते हैं। यह विविधता ही हिंदी निबंध साहित्य को समृद्ध और बहुआयामी बनाती है।

पाठक वर्ग की समझ और अपेक्षाओं का ध्यान रखना भी उतना ही महत्वपूर्ण है। एक शोधपरक निबंध की भाषा विशेषज्ञों और शोधार्थियों को ध्यान में रखकर लिखी जाती है, जबकि एक लोकप्रिय निबंध की भाषा सामान्य पाठकों के लिए सुगम और बोधगम्य होनी चाहिए। यदि भाषा पाठक वर्ग के अनुरूप नहीं होगी, तो संप्रेषण का उद्देश्य ही विफल हो जाएगा।

स्पष्टता और सटीकता: निबंध भाषा का मूलाधार

निबंध लेखन में स्पष्टता और सटीकता दो ऐसे स्तंभ हैं जिन पर संपूर्ण रचना का भवन खड़ा होता है। स्पष्टता का अर्थ है कि लेखक के विचार पाठक तक बिना किसी विकृति या भ्रम के पहुंचें। सटीकता का अर्थ है कि प्रयुक्त शब्द और अभिव्यक्ति ठीक उसी अर्थ को संप्रेषित करें जो लेखक के मन में है। इन दोनों गुणों के अभाव में निबंध केवल शब्दों का एक अस्पष्ट समूह बनकर रह जाता है, जिसका कोई सार्थक प्रभाव नहीं होता।

स्पष्टता की अनिवार्यता को समझने के लिए हमें यह जानना आवश्यक है कि निबंध का प्राथमिक उद्देश्य विचारों का संप्रेषण है। यह कविता नहीं है जहां अस्पष्टता या संकेत भी



fuc/k vkj ukVd

कलात्मक हो सकते हैं, और न ही यह कहानी है जहां रहस्य और अनिश्चितता कथा को रोचक बनाती है। निबंध में लेखक अपने विचारों को सीधे, स्पष्ट और प्रभावी रूप से प्रस्तुत करता है। यदि भाषा में अस्पष्टता होगी, तो पाठक भ्रमित हो जाएगा और निबंध का उद्देश्य विफल हो जाएगा।

अस्पष्टता कई कारणों से उत्पन्न हो सकती है। पहला कारण है अनुपयुक्त शब्द चयन। जब लेखक ऐसे शब्दों का प्रयोग करता है जो विषय के संदर्भ में सटीक नहीं हैं, या जिनके अनेक अर्थ हो सकते हैं, तो अस्पष्टता उत्पन्न होती है। उदाहरण के लिए, यदि कोई लेखक 'विकास' शब्द का प्रयोग करता है तो पाठक के मन में प्रश्न उठ सकता है कि क्या वह आर्थिक विकास की बात कर रहा है, सामाजिक विकास की, या व्यक्तिगत विकास की। ऐसे में संदर्भ को स्पष्ट करना और उपयुक्त विशेषणों का प्रयोग करना आवश्यक हो जाता है।

दूसरा कारण है जटिल और लंबी वाक्य संरचना। जब एक वाक्य में अनेक उपवाक्य, शर्तें और अपवाद समाहित कर दिए जाते हैं, तो पाठक मूल विचार को समझने में कठिनाई अनुभव करता है। हिंदी भाषा में संस्कृत के प्रभाव के कारण लंबे और जटिल वाक्य बनाने की प्रवृत्ति रही है, परंतु आधुनिक निबंध लेखन में संक्षिप्त और सुगठित वाक्यों को अधिक प्रभावी माना जाता है। यह आवश्यक नहीं कि सभी वाक्य अत्यंत छोटे हों, परंतु प्रत्येक वाक्य में केवल एक मुख्य विचार होना चाहिए और उसकी संरचना ऐसी होनी चाहिए कि पाठक उसे एक बार पढ़कर ही समझ सके।

तीसरा कारण है द्व्यर्थकता, जो तब उत्पन्न होती है जब किसी कथन की दो या अधिक व्याख्याएं संभव हों। हिंदी भाषा में सर्वनामों के प्रयोग से अक्सर द्व्यर्थकता उत्पन्न होती है। उदाहरण के लिए, "राम ने श्याम से कहा कि वह कल आएगा" इस वाक्य में यह स्पष्ट नहीं है कि 'वह' किसे संकेतित कर रहा है - राम को या श्याम को। ऐसी द्व्यर्थकता से बचना निबंध लेखक का दायित्व है।

सटीकता का अर्थ है प्रत्येक शब्द और अभिव्यक्ति का उचित और परिशुद्ध प्रयोग। विशेष रूप से विचारात्मक और शोधपरक निबंधों में पारिभाषिक शब्दों का सटीक प्रयोग अत्यंत

आवश्यक होता है। प्रत्येक विषय क्षेत्र की अपनी तकनीकी शब्दावली होती है, और उन शब्दों का प्रयोग उनके स्थापित अर्थ में ही किया जाना चाहिए। उदाहरण के लिए, साहित्यिक आलोचना में 'रस', 'अलंकार', 'छंद' जैसे शब्दों का विशिष्ट अर्थ है, और इन्हें सामान्य अर्थों में प्रयोग करना अनुचित होगा।

सटीकता केवल पारिभाषिक शब्दों तक ही सीमित नहीं है, बल्कि सामान्य शब्दों के प्रयोग में भी आवश्यक है। हिंदी भाषा में अनेक ऐसे शब्द हैं जो देखने में समान लगते हैं परंतु उनके अर्थों में सूक्ष्म अंतर होता है। उदाहरण के लिए, 'आदर' और 'सम्मान', 'प्रेम' और 'स्नेह', 'क्रोध' और 'रोष' - इन सभी शब्द युग्मों में सूक्ष्म अर्थभेद है। एक कुशल निबंधकार इन सूक्ष्म अंतरों को समझता है और संदर्भानुसार उपयुक्त शब्द का चयन करता है।

विचारात्मक निबंधों में सटीकता का महत्व और भी अधिक बढ़ जाता है क्योंकि इनमें जटिल अवधारणाओं और सिद्धांतों की व्याख्या की जाती है। दार्शनिक, वैज्ञानिक या समाजशास्त्रीय निबंधों में एक शब्द का गलत प्रयोग पूरे तर्क को कमजोर कर सकता है। इसलिए ऐसे निबंधों में लेखक को अत्यंत सावधानी से शब्दों का चयन करना चाहिए और यदि आवश्यक हो तो पारिभाषिक शब्दों की परिभाषा भी देनी चाहिए।

स्पष्टता और सटीकता के लिए यह भी आवश्यक है कि वाक्यों की बनावट तार्किक हो। प्रत्येक वाक्य में कर्ता, क्रिया और कर्म का संबंध स्पष्ट होना चाहिए। हिंदी में कर्ता का लोप संभव है, परंतु ऐसा केवल तभी किया जाना चाहिए जब संदर्भ से कर्ता स्पष्ट हो। अन्यथा भ्रम की स्थिति उत्पन्न हो सकती है। इसी प्रकार, क्रिया काल और पुरुष का सही प्रयोग भी आवश्यक है।

स्पष्टता और सटीकता को बनाए रखने के लिए लेखक को अनावश्यक जटिलता से बचना चाहिए। कभी-कभी लेखक अपने ज्ञान का प्रदर्शन करने या प्रभावित करने के लिए अत्यधिक कठिन शब्दों और जटिल वाक्य संरचनाओं का प्रयोग करते हैं। यह दृष्टिकोण



fuc/k vkj ukVd

निबंध लेखन के मूल उद्देश्य के विपरीत है। निबंध का उद्देश्य विचारों को सरल और प्रभावी रूप से संप्रेषित करना है, न कि पाठक को भ्रमित या हतोत्साहित करना।

संक्षेप में, स्पष्टता और सटीकता निबंध की भाषा के वे मूलभूत गुण हैं जो इसे प्रभावी और उद्देश्यपूर्ण बनाते हैं। इनके अभाव में निबंध केवल शब्दों का एक संग्रह बनकर रह जाता है, जिसका कोई स्थायी प्रभाव नहीं होता।

प्रवाह और गति: निबंध भाषा की जीवंतता

निबंध की भाषा में प्रवाह और गति वे गुण हैं जो रचना को जीवंत और पठनीय बनाते हैं। प्रवाह का अर्थ है विचारों की एक सहज और निरंतर धारा, जो पाठक को एक वाक्य से दूसरे वाक्य और एक अनुच्छेद से दूसरे अनुच्छेद तक स्वाभाविक रूप से ले जाती है। गति का अर्थ है वह लय और ताल जो भाषा में निहित होती है और जो पढ़ने के अनुभव को सुखद और आकर्षक बनाती है।

प्रवाह निबंध के पठन को एक सुखद अनुभव बनाता है। जब एक निबंध में प्रवाह होता है, तो पाठक बिना किसी बाधा के उसे पढ़ता चला जाता है। विचार एक के बाद एक इस प्रकार प्रकट होते हैं कि उनके बीच कोई खाई या असंगति नहीं दिखाई देती। यह प्रवाह केवल वाक्यों के स्तर पर ही नहीं, बल्कि अनुच्छेदों और संपूर्ण निबंध के स्तर पर भी आवश्यक होता है।

वाक्य स्तर पर प्रवाह तब उत्पन्न होता है जब वाक्य रचना सहज और स्वाभाविक हो। हिंदी भाषा में वाक्य संरचना की अपनी विशेषताएं हैं। सामान्यतः कर्ता-कर्म-क्रिया का क्रम होता है, परंतु कभी-कभी भाषा में विविधता लाने के लिए इस क्रम में परिवर्तन किया जा सकता है। महत्वपूर्ण यह है कि परिवर्तन स्वाभाविक और उद्देश्यपूर्ण हो, न कि केवल भिन्नता के लिए।

वाक्यों की लंबाई में विविधता भी प्रवाह के लिए महत्वपूर्ण है। यदि सभी वाक्य एक जैसे लंबे या छोटे होंगे, तो भाषा में एकरसता आ जाएगी। एक कुशल लेखक छोटे, मध्यम और

लंबे वाक्यों का संतुलित मिश्रण प्रयोग करता है। छोटे वाक्य तीक्ष्णता और स्पष्टता लाते हैं, जबकि लंबे वाक्य विस्तृत विवेचन के लिए उपयुक्त होते हैं। मध्यम आकार के वाक्य सामान्य कथन और व्याख्या के लिए उपयुक्त होते हैं।

वाक्यों के बीच संबंध स्थापित करने के लिए संयोजकों का उचित प्रयोग आवश्यक है। 'और', 'परंतु', 'किंतु', 'इसलिए', 'अतः', 'फलस्वरूप', 'क्योंकि', 'यदि', 'तो' जैसे संयोजक वाक्यों के बीच तार्किक संबंध स्थापित करते हैं। इन संयोजकों का सावधानीपूर्वक प्रयोग विचारों के प्रवाह को सुगम बनाता है। उदाहरण के लिए, यदि एक वाक्य में कोई कारण बताया गया है और अगले वाक्य में उसका परिणाम, तो 'इसलिए' या 'अतः' का प्रयोग स्वाभाविक होगा।

अनुच्छेद स्तर पर प्रवाह तब उत्पन्न होता है जब प्रत्येक अनुच्छेद एक केंद्रीय विचार के चारों ओर संगठित हो। अनुच्छेद का प्रथम वाक्य सामान्यतः मुख्य विचार को प्रस्तुत करता है, और शेष वाक्य उस विचार की व्याख्या, विस्तार या समर्थन करते हैं। अनुच्छेद के अंत में एक संक्षेप या संक्रमण वाक्य हो सकता है जो अगले अनुच्छेद से जोड़ता है।

एक अनुच्छेद से दूसरे अनुच्छेद में संक्रमण निबंध के समग्र प्रवाह के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। यह संक्रमण अचानक या बेतरतीब नहीं होना चाहिए। प्रत्येक अनुच्छेद पिछले अनुच्छेद से किसी न किसी रूप में जुड़ा होना चाहिए। यह जुड़ाव शब्दों, विचारों या संदर्भों के माध्यम से हो सकता है। कभी-कभी एक अनुच्छेद का अंतिम विचार अगले अनुच्छेद का प्रारंभ बिंदु बन जाता है, जिससे एक स्वाभाविक प्रवाह उत्पन्न होता है।

गति निबंध की भाषा में एक लयात्मकता लाती है। यह लय केवल ध्वनि की नहीं, बल्कि विचारों की भी होती है। कुछ अंश धीमी गति से विस्तृत विवेचन के लिए होते हैं, जबकि कुछ अंश तेज गति से मुख्य बिंदुओं को प्रस्तुत करते हैं। यह गति में परिवर्तन पाठक की रुचि बनाए रखता है और एकरसता को दूर करता है।

गति को प्रभावित करने वाले कई तत्व होते हैं। शब्दों की लंबाई एक महत्वपूर्ण कारक है। छोटे शब्द तेज गति उत्पन्न करते हैं, जबकि लंबे और जटिल शब्द गति को धीमा कर देते

हैं। इसी प्रकार, वाक्यों की लंबाई भी गति को प्रभावित करती है। लघु वाक्य तीव्र गति लाते हैं, जबकि दीर्घ वाक्य चिंतनशील और धीमी गति उत्पन्न करते हैं।

fuc/k vkj ukVd

विराम चिह्नों का प्रयोग भी गति को नियंत्रित करता है। अल्पविराम छोटे ठहराव देते हैं, अर्धविराम मध्यम विराम, और पूर्ण विराम संपूर्ण रोक लगाते हैं। विस्मयादिबोधक चिह्न तीव्रता लाते हैं, जबकि दीर्घ विराम (डैश) गहन विचार के लिए स्थान देते हैं। एक कुशल लेखक इन विराम चिह्नों का सोच-समझकर प्रयोग करता है ताकि वांछित गति उत्पन्न हो सके।

हिंदी भाषा की अपनी एक स्वाभाविक लय होती है, जो संस्कृत से प्राप्त छंदशास्त्र की परंपरा से प्रभावित है। यद्यपि गद्य में छंद नहीं होता, परंतु अच्छे गद्य में एक अंतर्निहित लयात्मकता होती है। यह लयात्मकता शब्दों के चयन, वाक्य संरचना और ध्वनि समूहों से उत्पन्न होती है। उदाहरण के लिए, समान ध्वनि वाले शब्दों का समूहन या तुकबंदी गद्य में भी एक मधुर प्रभाव उत्पन्न कर सकता है, यद्यपि इसका अति प्रयोग कृत्रिमता ला सकता है।

प्रवाह और गति का महत्व विभिन्न प्रकार के निबंधों में भिन्न होता है। ललित निबंधों में, जहां भाषा की सुंदरता और कलात्मकता महत्वपूर्ण है, प्रवाह और गति पर विशेष ध्यान दिया जाता है। लेखक शब्दों और वाक्यों का ऐसा चयन करता है कि पूरा निबंध एक संगीत की तरह प्रवाहित हो। वहीं, विचारात्मक या शोधपरक निबंधों में प्रवाह और गति के साथ स्पष्टता और तार्किकता भी उतनी ही महत्वपूर्ण होती है।

पठनीयता निबंध की सफलता का एक महत्वपूर्ण मापदंड है, और पठनीयता काफी हद तक प्रवाह और गति पर निर्भर करती है। यदि निबंध में प्रवाह है, तो पाठक उसे रुचि के साथ पढ़ता है। यदि गति उपयुक्त है, तो पाठक न तो ऊबता है और न ही थकता है। एक अच्छा निबंध पाठक को अपने साथ बहा ले जाता है, और यह संभव होता है केवल तभी जब भाषा में प्रवाह और गति हो।

शब्दावली: निबंध भाषा का वैविध्य

निबंध की भाषा में शब्दावली का चयन उसके प्रभाव और प्रभावशीलता को निर्धारित करता है। हिंदी भाषा की एक विशेष समृद्धि यह है कि इसमें विभिन्न स्रोतों से आए शब्द सम्मिलित हैं - संस्कृत से आए तत्सम शब्द, संस्कृत से विकसित हुए तद्भव शब्द, और अरबी, फारसी, अंग्रेजी तथा अन्य भाषाओं से आए विदेशी शब्द। इस बहुआयामी शब्द संपदा का उपयुक्त प्रयोग निबंध को समृद्ध और बहुस्तरीय बना सकता है।

तत्सम प्रधान शब्दावली: गांभीर्य और प्रामाणिकता का आधार

तत्सम शब्द वे होते हैं जो संस्कृत से ज्यों के त्यों हिंदी में ग्रहण किए गए हैं। इनमें संस्कृत की ध्वनि और रूप दोनों सुरक्षित रहते हैं। तत्सम शब्दावली का प्रयोग निबंध को एक गंभीर, औपचारिक और विद्वतापूर्ण स्वरूप प्रदान करता है। यह शब्दावली विशेष रूप से गंभीर, विचारात्मक, दार्शनिक, वैज्ञानिक और शोधपरक निबंधों में प्रयुक्त होती है।

तत्सम शब्दों की प्रमुख विशेषता उनकी ध्वनि और रूप की शुद्धता है। जैसे 'आत्मा', 'चेतना', 'अध्यात्म', 'विवेचना', 'समालोचना', 'परिशीलन', 'अन्वेषण' आदि। ये शब्द न केवल अपने अर्थ में परिशुद्ध होते हैं, बल्कि इनका प्रयोग भाषा को एक विशिष्ट गरिमा भी प्रदान करता है। जब कोई लेखक 'आत्म-साक्षात्कार' जैसे शब्द का प्रयोग करता है, तो वह केवल 'स्वयं से मिलना' नहीं कह रहा होता, बल्कि एक गहन दार्शनिक अवधारणा को व्यक्त कर रहा होता है।

दार्शनिक निबंधों में तत्सम शब्दावली की अनिवार्यता इसलिए होती है क्योंकि भारतीय दर्शन की परंपरा संस्कृत में विकसित हुई है। 'ब्रह्म', 'माया', 'मोक्ष', 'निर्वाण', 'कर्म', 'धर्म' जैसे शब्द केवल शब्द नहीं हैं, बल्कि संपूर्ण दार्शनिक परंपरा के वाहक हैं। इन शब्दों का अनुवाद या समानार्थी शब्दों से प्रतिस्थापन संभव नहीं है क्योंकि इनमें सदियों की चिंतन परंपरा निहित है।



fuc/k vkj ukVd

वैज्ञानिक और तकनीकी निबंधों में भी तत्सम शब्दावली का महत्वपूर्ण स्थान है। हिंदी में वैज्ञानिक शब्दावली का निर्माण मुख्यतः संस्कृत के आधार पर ही हुआ है। 'अणु', 'परमाणु', 'अभिक्रिया', 'यौगिक', 'विलयन', 'जीवाणु', 'प्राणी विज्ञान', 'भूगोल' आदि शब्द तत्सम हैं और इनका प्रयोग वैज्ञानिक विषयों पर लिखे गए निबंधों में आवश्यक होता है। ये शब्द परिशुद्धता और मानकता दोनों प्रदान करते हैं।

साहित्यिक समालोचना के निबंधों में तत्सम शब्दावली का प्रयोग विशेष महत्व रखता है। 'रस', 'अलंकार', 'छंद', 'वृत्ति', 'शृंगार', 'वीर', 'करुण' जैसे पारिभाषिक शब्द संस्कृत काव्यशास्त्र से आए हैं और हिंदी साहित्य समालोचना में इनका प्रयोग अनिवार्य है। 'काव्य', 'गद्य', 'पद्य', 'नाटक', 'प्रबंध', 'मुक्तक' जैसे शब्द भी तत्सम हैं और साहित्यिक विधाओं को दर्शाते हैं।

तत्सम शब्दावली का प्रयोग निबंध को एक क्लासिकल और कालजयी स्वरूप देता है। जब हम आचार्य रामचंद्र शुक्ल, हजारीप्रसाद द्विवेदी, या नंददुलारे वाजपेयी के निबंधों को पढ़ते हैं, तो हम पाते हैं कि उनकी भाषा में तत्सम शब्दावली की प्रधानता है। यह शब्दावली उनके निबंधों को एक विशिष्ट गरिमा प्रदान करती है और उन्हें कालजयी बनाती है।

परंतु तत्सम शब्दावली के प्रयोग में संतुलन आवश्यक है। अत्यधिक संस्कृतनिष्ठ भाषा कभी-कभी दुरूह और अगम्य हो सकती है। यदि पाठक वर्ग सामान्य है, तो अत्यधिक तत्सम शब्दों का प्रयोग उन्हें निबंध से दूर कर सकता है। इसलिए एक कुशल लेखक यह ध्यान रखता है कि तत्सम शब्दों का प्रयोग संदर्भानुसार और आवश्यकतानुसार हो।

तत्सम शब्दावली का एक और लाभ यह है कि यह भाषा में एकरूपता और मानकीकरण लाती है। चूंकि संस्कृत एक सुव्यवस्थित और नियमबद्ध भाषा है, इसलिए इससे आए शब्दों में एक स्थिरता होती है। वैज्ञानिक और तकनीकी साहित्य में यह स्थिरता अत्यंत महत्वपूर्ण है।

तद्भव प्रधान शब्दावली: सहजता और आत्मीयता का स्रोत

तद्भव शब्द वे होते हैं जो संस्कृत से विकसित होकर लोक-व्यवहार में प्रचलित हुए हैं। समय के साथ इन शब्दों की ध्वनि और रूप में परिवर्तन हुआ है, और ये बोलचाल की भाषा के अधिक निकट हो गए हैं। तद्भव शब्दावली निबंध को सरल, सहज और आत्मीय बनाती है। यह शब्दावली विशेष रूप से व्यक्तित्वात्मक, ललित और भावात्मक निबंधों में प्रयुक्त होती है।

fuc/k vkj ukVd

तद्भव शब्दों का मूल संस्कृत में होता है, परंतु वे ध्वनि परिवर्तन के नियमों के अनुसार बदल गए हैं। उदाहरण के लिए, संस्कृत का 'हस्त' तद्भव 'हाथ' बन गया, 'मुख' 'मुंह' बन गया, 'क्षीर' 'खीर' बन गया, 'कर्म' 'काम' बन गया। ये शब्द आम बोलचाल में प्रयुक्त होते हैं और इनमें एक सहज प्रवाह होता है।

व्यक्तित्वात्मक निबंधों में तद्भव शब्दावली का प्रयोग लेखक और पाठक के बीच एक आत्मीय संबंध स्थापित करता है। जब कोई लेखक अपने व्यक्तिगत अनुभवों या भावनाओं को व्यक्त करता है, तो तत्सम शब्दावली की औपचारिकता उपयुक्त नहीं होती। ऐसे में तद्भव शब्द अधिक स्वाभाविक और प्रभावी होते हैं। उदाहरण के लिए, यदि कोई लेखक अपनी मां के स्नेह का वर्णन कर रहा है, तो 'मातृ-स्नेह' की अपेक्षा 'मां का प्यार' अधिक हृदयस्पर्शी होगा।

ललित निबंधों में तद्भव शब्दावली की प्रधानता होती है। इन निबंधों में भाषा का सौंदर्य और प्रवाह महत्वपूर्ण होता है, और तद्भव शब्द इसमें सहायक होते हैं। कुबेरनाथ राय, विद्यानिवास मिश्र, या कृष्णनाथ जैसे ललित निबंधकारों की भाषा में तद्भव शब्दों की भरमार होती है। ये शब्द उनके निबंधों को एक मधुरता और सहजता प्रदान करते हैं।

तद्भव शब्दावली का प्रयोग निबंध को जन-सामान्य के निकट लाता है। सामान्य पाठक के लिए तत्सम शब्दावली कभी-कभी कठिन हो सकती है, परंतु तद्भव शब्द उनकी रोजमर्रा की भाषा के अंग होते हैं। इसलिए लोकप्रिय निबंधों में, जो व्यापक पाठक वर्ग के लिए लिखे जाते हैं, तद्भव शब्दावली का अधिक प्रयोग होता है।

सामाजिक और सांस्कृतिक विषयों पर लिखे गए निबंधों में भी तद्भव शब्दावली प्रभावी होती है। जब लेखक समाज में प्रचलित रीति-रिवाजों, त्योहारों, या जीवन शैली का वर्णन करता है, तो लोक-प्रचलित शब्दों का प्रयोग अधिक उपयुक्त होता है। 'विवाह' के स्थान पर 'शादी', 'भोजन' के स्थान पर 'खाना', 'गृह' के स्थान पर 'घर' जैसे शब्द अधिक स्वाभाविक लगते हैं।

तद्भव शब्दावली में एक विशेष प्रकार की ऊर्जा और जीवंतता होती है। ये शब्द भाषा को गतिशील और स्पंदनशील बनाते हैं। जब हम 'सूर्य' के स्थान पर 'सूरज', 'चंद्र' के स्थान पर 'चांद', 'प्रातः' के स्थान पर 'सुबह' जैसे शब्दों का प्रयोग करते हैं, तो भाषा में एक ताजगी आ जाती है।

परंतु यह ध्यान रखना आवश्यक है कि तद्भव शब्दावली का प्रयोग विषय की गंभीरता के अनुरूप हो। दार्शनिक या वैज्ञानिक विषयों पर लिखे गए निबंधों में तद्भव शब्दावली की अधिकता उपयुक्त नहीं हो सकती। ऐसे निबंधों में तत्सम और तद्भव का संतुलित मिश्रण अधिक प्रभावी होता है।

तद्भव शब्दावली का एक और महत्वपूर्ण पक्ष यह है कि यह क्षेत्रीय विविधता को भी प्रतिबिंबित करती है। हिंदी के विभिन्न क्षेत्रों में कुछ तद्भव शब्द अलग-अलग रूपों में प्रयुक्त होते हैं। एक निबंधकार जो अपनी क्षेत्रीय पहचान को बनाए रखना चाहता है, वह अपने क्षेत्र के विशिष्ट तद्भव शब्दों का प्रयोग कर सकता है, यद्यपि इसमें सावधानी आवश्यक है कि भाषा अत्यधिक क्षेत्रीय न हो जाए।

विदेशी शब्दावली: आधुनिकता और वैश्विकता का प्रतीक

हिंदी भाषा में विदेशी शब्दों का समावेश एक स्वाभाविक प्रक्रिया रही है। अरबी, फारसी, तुर्की, अंग्रेजी और अन्य भाषाओं से आए शब्द हिंदी का अभिन्न अंग बन गए हैं। निबंध

लेखन में इन शब्दों का प्रयोग संदर्भानुसार और उद्देश्यपूर्ण रूप से किया जाता है। विदेशी शब्दावली निबंध को आधुनिक, समकालीन और वैश्विक परिप्रेक्ष्य प्रदान करती है।

उर्दू शब्दावली हिंदी में सबसे अधिक प्रचलित विदेशी शब्दों में से है। 'इंसाफ', 'तरक्की', 'इंकलाब', 'जमीन', 'आसमान', 'दिल', 'वक्त', 'हालात', 'मुश्किल', 'खयाल' जैसे शब्द हिंदी के रोजमर्रा के प्रयोग में इतने घुल-मिल गए हैं कि इन्हें विदेशी कहना भी उचित नहीं लगता। साहित्यिक निबंधों में, विशेष रूप से उर्दू साहित्य या शायरी पर लिखे गए निबंधों में, उर्दू शब्दावली का प्रयोग अनिवार्य हो जाता है।

अंग्रेजी शब्दावली का प्रयोग समकालीन निबंधों में बहुतायत से होता है। आधुनिक विषयों, विशेष रूप से विज्ञान, प्रौद्योगिकी, प्रशासन, अर्थशास्त्र, और वैश्विक मुद्दों पर लिखे गए निबंधों में अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग अपरिहार्य हो गया है। 'टेक्नोलॉजी', 'इंटरनेट', 'कंप्यूटर', 'ग्लोबलाइजेशन', 'डेमोक्रेसी', 'इकोनॉमी' जैसे शब्द हिंदी निबंधों में सहजता से प्रयुक्त होते हैं।

अंग्रेजी शब्दों के प्रयोग का एक कारण यह भी है कि कुछ आधुनिक अवधारणाओं के लिए हिंदी में पर्याप्त या स्थापित शब्द नहीं हैं। उदाहरण के लिए, 'सोशल मीडिया', 'आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस', 'क्लाइमेट चेंज' जैसी अवधारणाओं के लिए हिंदी में शब्द तो बनाए गए हैं ('सामाजिक माध्यम', 'कृत्रिम बुद्धिमत्ता', 'जलवायु परिवर्तन'), परंतु व्यवहार में अंग्रेजी शब्द अधिक प्रचलित हैं।

व्यंग्यात्मक निबंधों में विदेशी शब्दों का प्रयोग विशेष प्रभाव उत्पन्न करने के लिए किया जाता है। हरिशंकर परसाई, शरद जोशी जैसे व्यंग्यकारों ने अंग्रेजी और उर्दू शब्दों का बहुत प्रभावी ढंग से प्रयोग किया है। कभी-कभी अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग व्यंग्य को तीखा बनाने के लिए किया जाता है, विशेष रूप से जब आधुनिकता, पाश्चात्यकरण, या अंग्रेजीदां संस्कृति पर व्यंग्य किया जा रहा हो।



fuc/k vkj ukVd

विदेशी शब्दावली के प्रयोग में संतुलन अत्यंत महत्वपूर्ण है। अत्यधिक विदेशी शब्दों का प्रयोग निबंध की हिंदी पहचान को धूमिल कर सकता है। कुछ लेखक प्रगतिशील या आधुनिक दिखने के प्रयास में अनावश्यक रूप से अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग करते हैं, जो भाषा की मौलिकता को नष्ट करता है।

विदेशी शब्दों का प्रयोग तब उपयुक्त है जब:

1. हिंदी में कोई समानार्थी शब्द न हो या वह पर्याप्त प्रचलित न हो
2. विदेशी शब्द संदर्भ के लिए अधिक उपयुक्त हो
3. विशिष्ट तकनीकी या पारिभाषिक शब्द हो
4. सांस्कृतिक या ऐतिहासिक संदर्भ के लिए आवश्यक हो

समकालीन निबंध लेखन में एक मिश्रित शब्दावली का प्रयोग सामान्य हो गया है, जिसमें तत्सम, तद्भव और विदेशी शब्द सभी सम्मिलित होते हैं। यह मिश्रण निबंध को समृद्ध और बहुआयामी बनाता है। एक कुशल लेखक इन तीनों प्रकार की शब्दावलियों का संतुलित और उद्देश्यपूर्ण प्रयोग करता है।

निष्कर्ष

निबंध की भाषा का चयन एक बहुआयामी और जटिल प्रक्रिया है जो लेखक की कलात्मक संवेदना, विषय की प्रकृति और पाठक की अपेक्षाओं के बीच एक सूक्ष्म संतुलन स्थापित करती है। स्पष्टता और सटीकता निबंध की नींव हैं, जो यह सुनिश्चित करती हैं कि लेखक के विचार पाठक तक बिना किसी विकृति के पहुंचें। प्रवाह और गति निबंध को जीवंत और पठनीय बनाते हैं, जिससे पाठक का निबंध से गहरा जुड़ाव होता है। शब्दावली का चयन - चाहे वह तत्सम प्रधान हो, तद्भव प्रधान हो, या विदेशी शब्दों का समावेश हो - निबंध को उसका विशिष्ट चरित्र प्रदान करता है।

एक सफल निबंध वह है जो इन सभी तत्वों का समन्वित रूप से उपयोग करता है। लेखक को यह समझना चाहिए कि विषयवस्तु क्या मांग करती है, उसका अपना व्यक्तित्व कैसे प्रतिबिंबित हो सकता है, और पाठक वर्ग की क्या अपेक्षाएं हैं। इन तीनों के बीच सामंजस्य स्थापित करना ही निबंध लेखन की कला है। भाषा केवल एक माध्यम नहीं है, बल्कि यह निबंध की आत्मा है, जो विचारों को जीवंत करती है और पाठक के मन-मस्तिष्क को स्पर्श करती है। **निबंध की शैली**

शैली का तात्पर्य लेखक के उस विशिष्ट ढंग से है जिससे वह अपने विचारों को अभिव्यक्त करता है। निबंध में शैली का चयन ही निबंध के प्रकार को निर्धारित करता है।

1. विचारात्मक शैली (Ideological / Reflective Style)

यह शैली मुख्य रूप से गंभीर विषयों—जैसे दर्शन, विज्ञान, आलोचना, सामाजिक, राजनीतिक या आर्थिक समस्याओं—के विश्लेषण के लिए उपयोग की जाती है।

- **उद्देश्य:** किसी विषय के विभिन्न पक्षों का तर्क, प्रमाण और विश्लेषण के आधार पर मूल्यांकन करना।
- **विशेषताएँ:**
 - **तर्क प्रधानता:** यह शैली **तर्क** और **बुद्धि** पर आधारित होती है। इसमें भावनात्मकता के लिए कम जगह होती है।
 - **गंभीरता:** भाषा में गंभीरता और परिपक्वता होती है। वाक्य प्रायः **दीर्घ** और **जटिल** होते हैं, जिनमें उपवाक्य (clauses) और समासिक शब्दों का प्रयोग अधिक होता है।
 - **प्रामाणिकता:** लेखक अपने विचारों को पुष्ट करने के लिए **कोटेशन**, **संदर्भ** और **आँकड़ों** का प्रयोग करता है।
 - **निष्कर्ष उन्मुख:** इसका प्रवाह हमेशा एक **सुसंगत निष्कर्ष** की ओर होता है।
 - **उदाहरण:** आचार्य रामचंद्र शुक्ल के आलोचनात्मक निबंध, डॉ. रामविलास शर्मा के वैचारिक लेख।



fuc/k vkj ukVd

- **स्वरूप:** यह शैली विश्लेषणात्मक (Analytical), गवेषणात्मक (Research-based), या समालोचनात्मक (Critical) हो सकती है।

2. व्यंग्यात्मक शैली (Satirical Style)

यह शैली समाज, राजनीति, या किसी व्यक्ति की विसंगतियों और विकृतियों पर प्रहार करने के लिए अपनाई जाती है। यह सीधे उपदेश न देकर, हास्य और कटाक्ष के माध्यम से सत्य को सामने लाती है।

- **उद्देश्य:** समाज सुधार, दोषों पर प्रहार, और पाठक को हँसाते हुए सोचने पर मजबूर करना।
- **विशेषताएँ:**
 - **हास्य और विडंबना (Humor and Irony):** यह शैली तीखेपन और मजाक का मिश्रण होती है। विडंबना (Irony) इसका मूल तत्व है, जहाँ कहने का अर्थ कुछ और होता है, जबकि शब्द कुछ और व्यक्त करते हैं।
 - **अनाचार और पैरोडी (Incongruity and Parody):** इसमें विषय को उसके वास्तविक संदर्भ से हटाकर हास्यास्पद तरीके से प्रस्तुत किया जाता है।
 - **तीखापन (Pungency):** भाषा में एक धार और चुटीलापन होता है। शब्दों का चयन ऐसा होता है जो सीधे चोट करता है, किंतु वह चोट मीठी होती है।
 - **संवादात्मकता:** यह शैली प्रायः संवादात्मक और अनौपचारिक (Informal) होती है, जैसे लेखक सीधे पाठक से बात कर रहा हो।
 - **उदाहरण:** हरिशंकर परसाई की रचनाएँ ('विकलांग श्रद्धा का दौर'), शरद जोशी के व्यंग्य।

3. व्यक्तित्वात्मक शैली (Personal / Subjective Style)

इस शैली को ललित निबंध शैली भी कहा जाता है। इसमें विषयवस्तु गौण हो जाती है, और लेखक का व्यक्तित्व, भावनाएँ और निजी अनुभव प्रमुख हो जाते हैं।

- **उद्देश्य:** लेखक के आत्म-प्रकाशन और भावनाओं की अभिव्यक्ति के माध्यम से पाठक के साथ एक आत्मीय संबंध स्थापित करना।
- **विशेषताएँ:**
 - **आत्म-परकता (Subjectivity):** यह शैली 'मैं' (I) के प्रयोग पर आधारित होती है, जहाँ लेखक खुलकर अपने सुख-दुख, स्मृतियाँ और कल्पनाएँ साझा करता है।
 - **भावुकता और कल्पना:** इसमें **भावनाओं की प्रधानता** होती है। लेखक अपने विचार किसी क्रमबद्ध तर्क के बजाय **कल्पना की उड़ान** के साथ प्रस्तुत करता है।
 - **आत्मीयता और सहजता:** भाषा अत्यंत सरल, मधुर और **लचीली** होती है। वाक्य छोटे, मधुर और प्रवाहमय होते हैं।
 - **चित्रमयता:** भाषा में **बिंबों** (Images) और **प्रतीकों** का अत्यधिक प्रयोग होता है, जिससे गद्य में कविता जैसा सौंदर्य और चित्रमयता आ जाती है।
 - **उदाहरण:** आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ('कुटज', 'अशोक के फूल'), विद्यानिवास मिश्र ('मेरे राम का मुकुट भीग रहा है') के निबंध।

5.2.2 नाटक में भाषा और शैली

नाटक (Drama) एक दृश्य-श्रव्य विधा है। इसकी भाषा और शैली को न केवल पढ़ने वाले के लिए, बल्कि मंच पर **अभिनय** और **श्रोता** के लिए भी उपयुक्त होना चाहिए। नाटक की भाषा को **द्वि-आयामी** (Dual-dimensional) होना पड़ता है—वह साहित्य भी है और प्रदर्शन (Performance) का साधन भी।

नाटक की भाषा की विशिष्टता

नाटक की भाषा का चयन पात्रों की **सामाजिक पृष्ठभूमि, शिक्षा, आयु, लिंग, और परिवेश** के अनुसार किया जाता है।

1. **क्रियाशीलता (Action-Oriented):** नाटक की भाषा स्थिर या वर्णनात्मक (Descriptive) नहीं हो सकती। इसे **कार्य** (Action) को प्रेरित करना चाहिए। एक भी



fuc/k vkj ukVd

संवाद ऐसा नहीं होना चाहिए जो नाटक की कथावस्तु या चरित्र विकास में योगदान न दे रहा हो।

2. **सांकेतिकता और घनत्व (Suggestiveness and Density):** मंच पर विस्तृत वर्णन संभव नहीं है। इसलिए, नाटक की भाषा **संकेतों** और **अर्थों के घनत्व** से भरी होनी चाहिए। कम शब्दों में अधिक बात कहना नाटक की आवश्यकता है।
3. **श्रव्यता (Audibility and Vocal Quality):** मंच पर संवाद बोले जाते हैं, पढ़े नहीं जाते। इसलिए, भाषा ऐसी होनी चाहिए जो अभिनेता द्वारा आसानी से उच्चारित की जा सके और दर्शक द्वारा साफ-साफ सुनी और समझी जा सके।

1. संवाद शैली (Dialogue Style)

संवाद ही नाटक का शरीर और आत्मा है। संवादों के माध्यम से ही कथावस्तु आगे बढ़ती है, पात्रों का संघर्ष सामने आता है, और नाटक का उद्देश्य स्पष्ट होता है।

- **पात्रानुकूलता (Character Appropriateness):** संवाद पात्र की पृष्ठभूमि (गरीब/अमीर, ग्रामीण/शहरी, पढ़ा-लिखा/अनपढ़) के अनुरूप होने चाहिए। उदाहरण के लिए, एक ग्रामीण पात्र की भाषा में **क्षेत्रीय लहजा** और **तद्भव शब्दों** की बहुलता होनी चाहिए, जबकि एक दार्शनिक पात्र की भाषा **तत्सम** और **गंभीर** होगी।
- **संक्षिप्तता और तीव्रता (Brevity and Intensity):** संवाद **छोटे, तीखे और प्रभावी** होने चाहिए। लंबे संवाद मंच पर नीरसता पैदा करते हैं और नाटकीय गति (Pace) को बाधित करते हैं। संघर्ष के क्षणों में संवाद की गति **तेज** और शब्द **अधिक भावनात्मक** हो जाते हैं।
- **नाटकीयता (Dramatic Effect):** संवादों में **आकर्षण** और **उत्सुकता** (Suspense) होनी चाहिए। प्रत्येक संवाद को अगले संवाद या घटना के लिए आधार तैयार करना चाहिए। संवाद में **प्रश्न-उत्तर** और **पलटवार** की शैली नाटकीयता को बढ़ाती है।
- **ध्वनि और लय (Sound and Rhythm):** अच्छे संवादों में एक आंतरिक **लय** होती है। गद्य संवाद होते हुए भी, उनमें एक विशिष्ट **वाक-यंत्र** (Vocal instrument) की आवश्यकता होती है।



2. मंचीय भाषा (Stage Language / Manchiya Bhasha)

मंचीय भाषा केवल बोले गए शब्दों तक सीमित नहीं है, यह **संपूर्ण दृश्य-श्रव्य संकेत प्रणाली** है जिसे मंच पर प्रयोग किया जाता है।

fuc/k vkj ukVd

- **उच्चारण और ध्वनि प्रबंधन (Pronunciation and Sound Management):** मंचीय भाषा को इस बात का ध्यान रखना होता है कि अंतिम पंक्ति में बैठे दर्शक तक भी ध्वनि स्पष्ट पहुँचे। इसमें अभिनेता के **स्वर, उतार-चढ़ाव, और विराम (Pause)** का विशेष महत्व है।
- **आंगिक और वाचिक का समन्वय (Coordination of Physical and Vocal):** मंच पर शब्द (वाचिक अभिनय) और शारीरिक गति (आंगिक अभिनय) एक दूसरे के पूरक होते हैं। कई बार **मौन** भी सबसे शक्तिशाली मंचीय भाषा बन जाता है।
- **निर्देश (Stage Directions):** नाटककार द्वारा दिए गए **मंच निर्देश** मंचीय भाषा का एक हिस्सा हैं। ये निर्देश (जैसे: 'क्रोध में', 'धीरे से मुस्कुराकर', 'नेपथ्य से आवाज') अभिनेता और निर्देशक को बताते हैं कि संवाद को किस भाव और किस शैली में प्रस्तुत करना है।
- **परिस्थितिजन्य भाषा:** मंच पर भाषा को तात्कालिक परिस्थितियों के अनुकूल होना चाहिए। उदाहरणार्थ, युद्ध के दृश्य में भाषा **ओजस्वी** और **उत्तेजक** होगी, जबकि प्रेम दृश्य में **मधुर** और **संकेतात्मक**।

5.2.3 शिल्पगत विशेषताएँ

शिल्पगत विशेषताएँ (Craftsmanship Features) उन तकनीकी पहलुओं से संबंधित हैं जिनके माध्यम से लेखक अपने विचारों और कथावस्तु को कलात्मक स्वरूप प्रदान करता है। ये संरचना, प्रस्तुति, और तकनीक के तीन मुख्य स्तंभों पर आधारित हैं।

1. संरचना (Structure)

संरचना का अर्थ है साहित्यिक कृति के विभिन्न भागों का सुसंगठित और तार्किक क्रम।

निबंध में संरचना

- **प्रारंभ/भूमिका:** विषय का परिचय, उद्देश्य का निर्धारण, और पाठक के मन में जिज्ञासा उत्पन्न करना। यह संक्षिप्त और आकर्षक होनी चाहिए।
- **मुख्य भाग/कलेवर:** यह निबंध का विस्तार होता है, जहाँ विचारों, तर्कों, उदाहरणों और विश्लेषण को **पैराग्राफ** (अनुच्छेद) में तार्किक क्रम से प्रस्तुत किया जाता है। प्रत्येक अनुच्छेद एक नए विचार को विकसित करता है और पिछले विचार से जुड़ा होता है।
- **निष्कर्ष/उपसंहार:** निबंध के सभी तर्कों का सार, अंतिम निर्णय या लेखक का अंतिम संदेश। यह भाग संक्षिप्त और प्रभावपूर्ण होना चाहिए।
- **तारतम्यता और संगति (Coherence and Consistency):** संरचना का सबसे महत्वपूर्ण तत्व **विचारों की श्रृंखला** है। विचार टूटे हुए नहीं लगने चाहिए, बल्कि एक नदी के प्रवाह की तरह आगे बढ़ने चाहिए।

नाटक में संरचना

- **अंक और दृश्य (Acts and Scenes):** नाटक की कथावस्तु को अंकों (Acts) और दृश्यों (Scenes) में विभाजित किया जाता है। अंक बड़े अंतराल को दर्शाते हैं, जबकि दृश्य छोटे अंतराल या स्थान परिवर्तन को।
- **कथानक का विकास (Plot Development):** नाटक की संरचना में पाँच अवस्थाएँ अनिवार्य हैं:
 1. **आरंभ (Beginning):** पात्रों और परिस्थिति का परिचय।
 2. **उत्कर्ष/विकास (Rising Action):** संघर्ष का बढ़ना और समस्या का जटिल होना।
 3. **चरम सीमा/पराकाष्ठा (Climax):** संघर्ष का सर्वोच्च बिंदु, जहाँ नाटक की दिशा निश्चित होती है।
 4. **अवरोह (Falling Action):** चरम सीमा के बाद की घटनाएँ, जो समाधान की ओर ले जाती हैं।
 5. **समाधान/निष्कर्ष (Resolution):** संघर्ष का अंत और नाटक का समापन।



fuc/k vkj ukVd

- **संघर्ष (Conflict):** संरचना के केंद्र में द्वंद्व या संघर्ष होता है (पात्र बनाम पात्र, पात्र बनाम समाज, पात्र बनाम प्रकृति, पात्र बनाम स्वयं)।

2. प्रस्तुति (Presentation)

प्रस्तुति से तात्पर्य है कि लेखक अपने विचारों या कथावस्तु को पाठक या दर्शक के सामने किस विशिष्ट ढंग से रखता है।

निबंध में प्रस्तुति

- **विचारों का क्रम (Order of Thought):** लेखक किस क्रम में अपने विचारों को खोलता है—क्या वह **निगमन** (Deductive - सामान्य से विशेष की ओर) शैली अपनाता है या **आगमन** (Inductive - विशेष से सामान्य की ओर)।
- **अलंकारिक प्रस्तुति (Figurative Presentation):** ललित निबंधों में **काव्यात्मकता** और **अलंकार** का प्रयोग किया जाता है, जिससे विचार शुष्क न लगें।
- **प्रभावोत्पादकता (Effectiveness):** प्रस्तुति का उद्देश्य पाठक को प्रभावित करना, सहमत करना, या प्रेरित करना होता है। इसमें लेखक के **दृढ़ विश्वास** का झलकना आवश्यक है।

नाटक में प्रस्तुति

- **मंचीयता (Stagability):** नाटक की प्रस्तुति **मंच** पर उसके सफल **प्रदर्शन** से जुड़ी है। प्रस्तुति में **दृश्य संयोजन** (Visual arrangement), **रंगमंच व्यवस्था** (Set design), **प्रकाश** (Lighting), और **ध्वनि-प्रभाव** (Sound effects) का ध्यान रखा जाता है।
- **समय-स्थान की प्रस्तुति:** नाटककार समय और स्थान को संवादों, वेशभूषा, और दृश्यों के माध्यम से प्रस्तुत करता है, क्योंकि मंच पर विस्तृत वर्णन संभव नहीं है।
- **अभिनेता का दायित्व:** नाटक की प्रस्तुति में लेखक के शब्दों को **अभिनेता का भाव, गति और मुद्राएँ** ही जीवंत बनाते हैं।

3. तकनीक (Technique)

तकनीक वे विशिष्ट उपकरण और विधियाँ हैं जिनका प्रयोग लेखक अपने साहित्यिक उद्देश्य को सिद्ध करने के लिए करता है।

fuc/k vkj ukVd

निबंध में तकनीक

- **सूक्ति और उद्धरण (Aphorisms and Quotations):** निबंध को प्रामाणिक और प्रभावपूर्ण बनाने के लिए महापुरुषों के कथन, सूक्तियाँ, और काव्य पंक्तियों का प्रयोग किया जाता है।
- **दृष्टांत और उदाहरण (Illustrations and Examples):** जटिल विचारों को सरल बनाने के लिए कथाओं, घटनाओं या सामान्य जीवन से जुड़े **दृष्टांतों** का प्रयोग किया जाता है।
- **भावात्मकता (Emotional Appeal):** व्यक्तित्वात्मक शैली में भावनाओं का **प्रवाहमय** प्रयोग तकनीक का हिस्सा है, जिससे पाठक भावनात्मक रूप से जुड़ता है।
- **प्रश्नवाचक/संबोधन तकनीक:** पाठक को सीधे शामिल करने के लिए प्रश्न पूछना या संबोधित करना।

नाटक में तकनीक

- **स्वगत कथन (Soliloquy/Swa-gat):** जब पात्र मंच पर अकेला होता है और जोर से अपने मन के विचार बोलता है। यह पात्र के आंतरिक संघर्ष और भावनाओं को दर्शकों तक पहुँचाने की प्रमुख तकनीक है।
- **नेपथ्य (Backstage):** मंच के पीछे से आने वाली ध्वनि या संवाद। इसका उपयोग प्रायः दृश्य की तीव्रता को बढ़ाने, या मंच पर बिना दिखाए घटना की सूचना देने के लिए किया जाता है।
- **फ्लैशबैक (Flashback):** अतीत की किसी घटना को संवाद या दृश्य के माध्यम से वर्तमान में दिखाना।



fuc/k vkj ukVd

- **नाटकीय विडंबना (Dramatic Irony):** यह एक शक्तिशाली तकनीक है जहाँ दर्शक किसी घटना या सत्य के बारे में जानते हैं, लेकिन मंच पर पात्र उससे अनभिज्ञ होता है। इससे तनाव और उत्सुकता पैदा होती है।
- **गीत/संगीत का प्रयोग:** नाटक की गति को तोड़ने, या किसी भाव को गहराई से स्थापित करने के लिए गीत या संगीत का प्रयोग करना।

निष्कर्ष

निबंध और नाटक की भाषा, शैली, और शिल्पगत विशेषताएँ यह सिद्ध करती हैं कि साहित्य केवल क्या कहा गया है, इस पर नहीं, बल्कि **कैसे कहा गया है**, इस पर भी निर्भर करता है। निबंध में, शैली लेखक के व्यक्तित्व और विचारों का दर्पण होती है; विचारात्मकता तर्क की दृढ़ता, व्यंग्यात्मकता सामाजिक प्रहार की चतुरता, और व्यक्तित्वात्मकता आत्मीयता की मधुरता लाती है। दूसरी ओर, नाटक में भाषा को मंचीय सीमाओं के भीतर रहकर भी **संवादात्मकता** और **क्रियाशीलता** को बनाए रखना होता है।

अंततः, चाहे वह निबंध की **तार्किक संरचना** हो या नाटक का **चरम-सीमा युक्त कथानक**, शिल्प (संरचना, प्रस्तुति, तकनीक) का कार्य सदैव विषयवस्तु (भाव) को सर्वाधिक प्रभावी ढंग से व्यक्त करना ही होता है। एक सफल साहित्यिक कृति वही है जहाँ **शिल्प, शैली और भाव** का सुंदर सामंजस्य स्थापित हो।



fuc/k vkj ukVd

5.3 स्व-मूल्यांकन प्रश्न

5.3.1 बहुविकल्पीय प्रश्न (MCQs):

निबंध, नाटक और आलोचना – प्रमुख तथ्य

1. निबंध आलोचना के प्रमुख आलोचक:

- क) केवल शुक्ल जी
- ख) शुक्ल, द्विवेदी, बाबू गुलाबराय
- ग) केवल बाबू गुलाबराय
- घ) केवल द्विवेदी जी

उत्तर: ख) शुक्ल, द्विवेदी, बाबू गुलाबराय

2. नाट्य आलोचना में सर्वाधिक महत्वपूर्ण:

- क) केवल भाषा
- ख) कथानक, पात्र, संवाद, मंचीयता
- ग) केवल गीत
- घ) केवल लंबाई

उत्तर: ख) कथानक, पात्र, संवाद, मंचीयता

3. विचारात्मक शैली का प्रमुख उदाहरण:

- क) परसाई
- ख) रामचंद्र शुक्ल
- ग) भारतेन्दु
- घ) प्रसाद

उत्तर: ख) रामचंद्र शुक्ल

4. व्यंग्यात्मक शैली के मास्टर हैं:

- क) शुक्ल जी



fuc/k vkj ukVd

ख) हरिशंकर परसाई

ग) प्रसाद

घ) द्विवेदी जी

उत्तर: ख) हरिशंकर परसाई

5. ललित निबंध शैली के प्रतिनिधि हैं:

क) रामचंद्र शुक्ल

ख) हजारीप्रसाद द्विवेदी

ग) रामविलास शर्मा

घ) परसाई

उत्तर: ख) हजारीप्रसाद द्विवेदी

6. नाटक में संवाद होना चाहिए:

क) लंबा और जटिल

ख) संक्षिप्त, सटीक और चरित्रानुकूल

ग) केवल काव्यात्मक

घ) बोझिल

उत्तर: ख) संक्षिप्त, सटीक और चरित्रानुकूल

7. निबंध में भाषा होनी चाहिए:

क) अत्यधिक तकनीकी

ख) सरल, प्रवाहमय और प्रभावशाली

ग) अत्यधिक संस्कृतनिष्ठ

घ) जटिल

उत्तर: ख) सरल, प्रवाहमय और प्रभावशाली

8. नाटक का शिल्प विधान शामिल करता है:

क) केवल पात्र

ख) संरचना, दृश्य विभाजन, मंच निर्देश



fuc/k vkj ukVd

ग) केवल संवाद

घ) केवल भाषा

उत्तर: ख) संरचना, दृश्य विभाजन, मंच निर्देश

9. आलोचना का मुख्य उद्देश्य है:

क) रचना की निंदा

ख) निष्पक्ष मूल्यांकन और विश्लेषण

ग) प्रशंसा मात्र

घ) लेखक की आलोचना

उत्तर: ख) निष्पक्ष मूल्यांकन और विश्लेषण

10. मंचीयता का अर्थ है:

क) केवल लिखित रूप

ख) मंच पर प्रभावी प्रस्तुति की क्षमता

ग) केवल पठन

घ) प्रकाशन

उत्तर: ख) मंच पर प्रभावी प्रस्तुति की क्षमता

5.3.2 लघु उत्तरीय प्रश्न (2-3 अंक):

1. निबंध आलोचना के मुख्य मानदंड क्या हैं?
2. नाटक की मंचीयता से क्या तात्पर्य है?
3. विचारात्मक और व्यंग्यात्मक शैली में क्या अंतर है?
4. नाटक में संवाद की विशेषताएँ बताइए।
5. निबंध और नाटक में शिल्प के अंतर को संक्षेप में समझाइए।



5.3.3 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (5-10 अंक):

1. निबंध और नाटक आलोचना के प्रमुख मानदंडों का विस्तार से वर्णन कीजिए।
2. निबंध में भाषा और शैली के विभिन्न रूपों (विचारात्मक, व्यंग्यात्मक, व्यक्तित्वात्मक, ललित) का विस्तृत विवेचन कीजिए।
3. नाटक में भाषा, संवाद और मंचीय भाषा का महत्व समझाते हुए उदाहरण सहित विश्लेषण कीजिए।
4. निबंध और नाटक के शिल्पगत पहलुओं का तुलनात्मक अध्ययन कीजिए।
5. साहित्य की आलोचना में आलोचकों के विचारों और दृष्टिकोण का विस्तृत वर्णन कीजिए।

fuc/k vkj ukVd

9. सारांश (निबंध और नाटक)

हिन्दी साहित्य में निबंध और नाटक दोनों ही महत्वपूर्ण गद्य विधाएँ हैं। निबंध विचार और अनुभूति की गद्यात्मक अभिव्यक्ति है। नाटक जीवन की घटनाओं का संवादात्मक और अभिनयात्मक चित्रण है। दोनों विधाएँ साहित्य को बौद्धिकता, मनोरंजन और सामाजिक चेतना प्रदान करती हैं।

निबंध : निबंध वह गद्य-विधा है जिसमें लेखक अपने विचारों को स्वतंत्र, रोचक और तर्कपूर्ण ढंग से प्रस्तुत करता है। इसमें विषय के साथ-साथ लेखक का व्यक्तित्व, शैली और दृष्टिकोण भी झलकता है।

विशेषताएँ:

- भाषा सरल, प्रभावशाली और प्रवाहमय होती है।
- विषय सामाजिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक या दार्शनिक हो सकते हैं।
- तर्क और भाव दोनों का समन्वय होता है।

प्रमुख निबंधकार:

- रामचंद्र शुक्ल – आलोचनात्मक निबंध, "चिंतन और चरित्र", "रस मीमांसा"।
- हजारीप्रसाद द्विवेदी – सांस्कृतिक निबंध, "आश्रमभाव", "कबीर", "चारुचंद्रलेख"।
- महादेवी वर्मा – भावनात्मक निबंध, "अतीत के चलचित्र", "शृंखला की कड़ियाँ"।
- रामविलास शर्मा – समाजवादी दृष्टिकोण वाले निबंध, "भारत के प्राचीन भाषा परिवार", "भारतवर्ष की भाषा समस्या"।
- हरिशंकर परसाई – व्यंग्यात्मक निबंध, "भेड़ों के दाँत", "तबली बजाओ", "सदाचार का ताबीज़"।

नाटक : नाटक वह साहित्यिक विधा है जिसे मंचन के लिए लिखा जाता है। इसमें संवाद, अभिनय, दृश्य और संघर्ष के माध्यम से जीवन के यथार्थ का चित्रण होता है।

नाटक की विशेषताएँ:

- संवादप्रधान विधा
- क्रिया, संघर्ष और चरित्र-चित्रण पर आधारित
- मंचीय प्रभाव और मनोरंजन की दृष्टि से रचना

प्रमुख नाटककार:

- जयशंकर प्रसाद – ऐतिहासिक व प्रतीकात्मक नाटक, "चंद्रगुप्त", "धुवस्वामिनी", "स्कंधगुप्त", "कामायनी" (नाट्य तत्त्वों सहित)।
- भरतेंदु हरिश्चंद्र – आधुनिक हिन्दी नाटक के जनक, "भारत दुर्दशा", "अंधेर नगरी"।
- रामकुमार वर्मा – मनोवैज्ञानिक नाटक, "अभिषेक", "चिराग जलते रहे"।
- जगदीश चंद्र माथुर – सामाजिक व यथार्थवादी नाटक, "कोणार्क", "ओनहारा", "पिपासा"।
- मोहन राकेश – प्रयोगवादी नाटककार, "आषाढ़ का एक दिन", "अंधेरे बंद कमरे", "लहरों के राजहंस"।

आलोचनात्मक पक्ष:

- निबंध और नाटक दोनों में चिंतन, सामाजिक यथार्थ और मानवीय मूल्य का समन्वय दिखाई देता है।
- निबंधकारों ने विचारधारा, भाषा, संस्कृति और समाज पर आलोचनात्मक दृष्टि डाली।

- नाटककारों ने संघर्ष, स्त्री-जीवन, राजनीति और मनोविज्ञान को नाट्यरूप में प्रस्तुत किया।
- आलोचना ने इन विधाओं को परिपक्वता और गहराई प्रदान की।

वस्तुतः निबंध ने हिन्दी गद्य को बौद्धिक विस्तार दिया, नाटक ने उसे नाटकीय अभिव्यक्ति और जीवन की गति प्रदान की। दोनों विधाएँ हिन्दी साहित्य में विचार, भावना, कला और समाज का समन्वय प्रस्तुत करती हैं। इनके माध्यम से हिन्दी साहित्य ने चिंतन, संवाद और अभिव्यक्ति — तीनों क्षेत्रों में अद्भुत विकास प्राप्त किया।

MATS UNIVERSITY

MATS CENTRE FOR DISTANCE AND ONLINE EDUCATION

UNIVERSITY CAMPUS: Aarang Kharora Highway, Aarang, Raipur, CG, 493 441

RAIPUR CAMPUS: MATS Tower, Pandri, Raipur, CG, 492 002

T : 0771 4078994, 95, 96, 98 Toll Free ODL MODE : 81520 79999, 81520 29999

Website: www.matsodl.com

